भट्टराघव-(न्यायसार विजयके कर्ता)-ये वि० सं० ११९६में जीवितथे।

भट्टिकवि-(भट्टिकाव्यके रचयिता) पताळगता है कि, यह वल्लभी राजा श्रीधरसेनके समकालीनथे । वट्टीपुरीमें राजा वीतरागके पुत्र वसन्तरागका एक दानपत्र मिलाहै जिससे विदित होताहै कि, महाकवि तथा प्रसिद्ध वैयाकरण भट्टि वि. सं. ३८० में विद्यमान थे (देखो प्राचीनलेखोंके विषयमें डाक्तर कीलहहार्नसाहबका अंग्रेजी ग्रंथ)। डाक्तर भाउदाजी अनेक कारणोंसे इनको भर्तृहारिजीका पुत्र अनुमान करते हैं। भट्टिकाव्य वल्लभी भाषामें हैं, उसमें १२ सर्ग हैं और उसमें रामकथा तथा व्याकरणका साथ २ वर्णन है ।

भट्टपाद-पं. कुमारिल भट्टकी उपाधि भट्टपादथी (देखो कुमारिल भट्ट)। भट्टपादके गुरु पं. गौड़पादाचार्यथे। भट्टपाद प्रयागके रहनेवाले थे।

भट्टोजिदीक्षित-(सिद्धांतकौमुदीके रचयिता) ये काशीवासी महाराष्ट्रब्राह्मण वि. सं. की १७ वी शताब्दीमें हुए, इन्होंने पाणिनिसूत्रोंके क्रमसे महाभाष्यका सारभूत " शब्दकौस्तुभ " नामक व्याख्यान रचा और " सिद्धांतकौमुदी " नामक उदाहरणसहित पाणिनिसूत्रवृत्ति रची । सिद्धांतकौमुदीमें प्रत्युत सन्धिआदिकार्योंके विधायक सूत्रोंको छाँटकर पृथक् २ प्रकरण बनादिये हैं और जिसप्रकरणमें जिन २ सूत्रोंकी आवश्यकता पड़ी है वह सूत्र भी उन्हीं प्रकरणोंमें वृत्तिसहित संयुक्तकर दिये हैं । " मनोरमा " नामक सिद्धांतकौमुदीकी टीकाभी भट्टोजिदीक्षितकृत है । धर्मशास्त्रमें तिथिनिर्णय, तंत्राधिकारनिर्णय इत्यादिग्रंथ इन्हींके रचेहुये हैं । पं० हरदीक्षितजी इनके पौत्र थे (सो देखो) इनके पिताका नाम पं० लक्ष्मीधर था । लघुसिद्धांतकौमुदीके रचयिता पं० वरदराजइत्यादि अनेक विद्वान् इनके शिष्यथे।

भवभूति कवि-इनका दूसरा नाम श्रीकन्थथा, बरारमें एक ब्राह्मणके घर इनका जन्म हुआथा और कुमारिलभट्ट इनके गुरुथे । महाराजा यशोवर्म्मने कन्नौजनरेशके दर्बारमें इनका सत्कार होताथा, जब ललितादित्य काश्मीर नरेशने कन्नौज विजय किया तो वह इनको अपने साथ लेगया । मालतीमाधवनाटक, महावीरचरित्र तथा उत्तररामचरित्रनाटक इनके रचेहुये हैं। कविकालिदासने स्वयं उत्तररामचरित्रनाटककी प्रशंसा की है-

श्लो०-नाटके भवभूतिर्वा वयं वा वयमेव वा ।
उत्तरे रामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते ॥

प्रोफेसर विलसन साहबके मतानुसार भवभूतिकर्वीश्वर स. ई. ७१८ में विद्यमान थे । वह भवभूति कवि दूसरे थे जिन्होंने काशीसे आकर राजा भोजके दर्बारमें सत्कार पाया था और जिनकी प्रशंसामें कविकालिदास इने कहा था कि-

श्लो०-अहो मे सौभाग्यं मम च भवभूतेश्च भणितम् ।
घटयामारोप्यमति फलति तस्यां लघिमनि ॥

भवानी-(बंगालप्रदेशान्तर्गतनाटौरकी पुण्यात्मा रानी) यह राजशाही ज़िलेमें छातिनगाँवके चौधरी आत्माराम ब्राह्मणकी पुत्री नाटौरके राजा रामजीवन रायके पुत्र रामकन्तको व्याहीथी । यह जैसी सुंदरी थी वैसीही सुलक्षणी थी, बचपनहीसे धर्म और परोपकारमें निष्ठावतीथी । दयारामतेली राजारामजीवनका पुराना शुभचिन्तक दीवानथा, रामकन्तको रियासतके काममें बेफ़िक्र देख एकदिन दयाराम समझानेलगा जिससे नाराज होकर रामकन्तने दयारामको निकालदिया । दयाराम ज़मींदारीके काममें बड़ालायक़था निदान बंगालके सूबेदार अलावर्दीखाँके यहां जाकर नौकर होगया । एकदिन अवसर पाकर दयारामने अलावर्दीसे कहा कि "जहाँ पनाह ! राजा रामकन्तने ३२ लाखरुपये घरमें जमाकियेहैं और दोलाखरुपयेका एक सरपंच मोललियाहै परंतु सरकारी मालगुज़ारी नहीं देताहै" । अलावर्दीने तुरन्त हुक्म दिया कि रामकन्तका घरबार लूटलिया जावे और उसके चचेरेभाई देवीप्रसादको गद्दीपर विठलादिया जावे । हुक्मपातेही फ़ौजने जाकर राजबाड़ी घेरली, रामकन्त रानी भवानीसहित चोरदर्वाजेसे निकल मुर्शिदाबादको भागा । भवानी उनदिनों गर्भसेथी, तिसपरभी पैदलचलनापडा लेकिन आपदाकी मारी ज्योंत्यों भागीगई मुर्शिदाबाद पहुँच दम्पतिने जगत्सेठकी शरणली । कईवर्षपीछे एकदिन राजा रामकन्तने खिड़कीमेंसे दयारामको पालकीपर जातेहुये देख पुकारकर कहाकि "दयाभाई ! हमको इस विपत्तिमें कबतक रक्खोगे । दयाराम तुरंत रामकन्तके पास आया और अपने पुराने स्वामीकी दीनदशा देख कहनेलगा कि, यदि ५० लाखरुपये हों तो तीनहीदिनमें फिर तुमको राज्य दिलवा सकताहूं । रामकन्तने ठंडीसाँसभरकर कहा कि, मैं तो आजकलह रोटीतकको पराधीन हूं । रानीभवानीने पतिको अधीरहोते देख अपने सब आभूषण उतार दिये और दयारामने उसको बेंच सब दुकान्दारों तथा रास्तेमें बैठनेवालेलोगों और अलावर्दीखाँके समीपरहिनेवाले नौकरोंको ५ से ५० तक रुपये बाँटकर कहदिया कि, जब देवीप्रसाद सर्कारसे मिलनेको आवे तो उसे सुनाकर यह कहदेना कि "देखो, यह वही भाग्यहीन जाता है" । जब देवी प्रसाद आया तो हज़ारों मनुष्योंने उसपर आवाजेकसे निदान वह अलावर्दीके साम्हने जाकर रोया । अलावर्दीने कहाकि जिसको सर्वसाधारण भाग्यहीनकहै वह अवश्यही भाग्यहीनहै और दयारामसे पूछा कि क्या कोई और रामजीवनके वंशमें गद्दीके लायक नहीं हैं ? उत्तरमें दयारामने कहा कि, उनका बेटाही मौजूदहै । उसीवक्त रामकन्तको

राजगीका खिलत दियागया और देवीप्रसाद निकाला गया। तबसे रामकन्त दयारामको बहुत मानतारहा और १६ वर्षराज्यकरके सिधारा। रानीभवानीके कोई सन्ताननथी अतः रियासतका काम उसे खुद सम्हालनापड़ा। वह बड़ी पुण्यात्मा थी, दानधर्ममें बड़े २ राजाओंको मातकरतीथी, १ लाख ८० हजार रुपये प्रतिवर्ष पंडित, साधु, सन्त, बैरागियोंको दियाजाताथा और ५ लाख- बीघे जमीन मुआफीमें देरक्खी थी, परदेशीयात्रियोंकेलिये ३०० मकान काशीमें मोललियेथे, अनेक वङ्गवासियोंको जो काशीवास करने आतेथे आजन्म भोजन वस्त्र दिया जाताथा। काशीमें विश्वेश्वरनाथ, अन्नपूर्णा, दुर्गा, तारा, राधाकृष्ण इत्यादिके मंदिर तथा गया, नाटौर, राजशाही और मुर्शिदाबादमें अनेकानेक मंदिर उसने बनवायेथे। काशीमें पञ्चकोसीकी सडकपर पेंड लगवायेथे तथा कुँवे खुदवाये थे, कई धर्मशालायें और तालावभी खुदवायेथे, सदावर्तभी जारी कियाथा जो नित्यप्रति ८ मन भीगे चने तथा २५ मन चाँवल काशीमें बाँटताथा और १०८ मनुष्योंको प्रतिदिन इच्छाभोजन करायाजाताथा। जीवजन्तु पखे- रुओंके चुगानेकेलिये तथा चींटीयोंके बिलोंमें शक्करडालनेकेलिये आदमी नौ- करथे, ८ वैद्यभी नौकरथे जो रियासतभरमें औषधिलेकर घर २ घूमतेथे और उनके साथ बीमारोंकी टहलकेलिये सेवकभी रहतेथे। हरवक्त महारानीतक दरिद्रीलोग नहीं पहुंचसकतेथे निदान आज्ञाथी कि १ रु० तक पोतदार, ५ रु० तक खजाञ्ची, १० रु० तक मुत्सद्दी और १०० रु० तक दीवान जिसको पात्रसमझे बिनापूछे देदेवे. महारानीके चाकर भी अपनी स्वामिनीके समानही धार्मिक थे। रियासतभरके ब्राह्मणोंकी कन्याओंका खर्च राज्यकोषसे दियाजाताथा, नवरात्रिमें ५० हजार रु० पंडितोंको और दोहजार वस्त्र तथा नथनियें सुहागिनियों तथा कुमारियोंको दीजातीथी। एकसाल इलाकेकी आमदनी आनेमें देरहुई तब महारानीने वस्त्र आभूषण बेंच जो जिसका निबन्धथा वह चुका दिया पर वचन नहीं तोड़ा। महारानी नित्य चारघडीके तडके उठकर भजन करतीथी, प्रातःकाल स्नान करके पूजा पाठ करतीथी और धर्मशास्त्र सुन- तीथी, फिर कुछ जलपान करके अपने हाथसे रसोई बनाती और १० ब्राह्मणोंको जिमाकर आप भोजन करतीथी। पश्चात् दीवानखानेमें कुशासनपर बैठ काम काज करतीथी और कागजोंपर हस्ताक्षर करतीथी। सन्ध्यासमय चार घडीतक ईश्वराराधन करके भोजन करती तत्पश्चात् डेढ़पहिररात गयेतक राजकाजकी सुधि लेती तथा दर्बार करतीथी। ३२ वर्षकी उम्रमें विधवा हुईथी और ७९ वर्ष की उम्रमें ५० करोड रु० धर्मार्थ खर्च करके वैकुंठवासिनी हुई। महारानीके दत्तकपुत्र रामकृष्णको मुगलसम्राट् शाहआलमने "महाराजाधिराज पृथ्वीपति बहादुर"का खिताब दियाथा। स० ई० १७५७ में महारानी मौजूदथी"।

भरत (सूर्यवंशीनरेश)–यह महाराज रामचंद्रसे अनेक पीढी पहिलेहुये। महाराज सूर्य्यके वृतान्तमें इनका वंशवृक्ष देखो।

भरत (राजादशरथके पुत्र)–यह रानीकैकईके उदरसे जन्मेथे, बचपनहीमें नाना अश्वपति केकयाधीशने इनको अपने यहां बुलालियाथा और वहीं इन्होंने शिक्षा पाईथी। जब दशरथजीने रामचंद्रको युवराजनियत करनेका विचार किया तो रानीकैकईने हठ करके भरतको युवराज तथा रामचंद्रको वनवासका हुक्म दिलवाया। दशरथजीके रामवियोगमें देहत्याग देनेपर राजपुरोहित वसिष्ठजीने भरतजीको ननिहालसे बुलाया। अयोध्या पहुंच भरतजीने पिताकी अन्तेष्टि क्रिया की और माताको उसके कर्तव्यपर धिक्कारा तथा कुवाक्य कहे, यथा तु० कृ० रामायणे–

दो०–हंस वंश दशरथ जनक। रामलषणसे भाइ॥
जननी तू जननी भई। विधिसों कहा बिसाइ॥

पिताके श्राद्धके बाद भरतजी सबलोगोंको साथले रामजीके लौटानेको गये परंतु रामजीने १४ वर्ष व्यतीत होनेके पहिले लौटनेसे इनकारकिया और भरतजीको समझाकर राज्यकी देखभालके लिये अयोध्याको वापिसभेजा। जब रामजी वनवाससे लौटे तो भरतजीने राजपाट उनको सौंपदिया, रामजीने राज्यसिंहासनपर बैठकर जिसदेशका प्रबन्ध भरतजीको सौंपाथा वह देश भरतखण्ड नामसे अबतक प्रसिद्धहै। रामायणादि ग्रंथोंको देख भरतजीके सदाचरण के विषयमें यही कहे बनताहै कि "न भूतो न भविष्यति"। रामजीने स्वयं उनकी प्रशंसा कीहै यथा तु० कृ० रामायणे–

चौ०–जो न होत जग जन्म भरतको।सकलधर्मधुर धरनि धरतको॥

भरतजीने अपने निष्कपटप्रेम, मृदुलगम्भीर स्वभाव तथा सहनशीलतासे अपनी माताकै कईके कर्तव्यरूपी कालौंचको अपने परिवार तथा प्रजाके चित्तमेंसे धोकर निश्शेषित किया,उनमें सांसारिक सुखोंसे प्रेम तथा राजमद और स्वार्थका लेशमात्रभी नथा, वह बड़े योधा थे और धनुर्विद्यामें निपुणथे। रामवनवासके बाद भरतजीने अपनी मातासे कभी बात नहींकी यथा तु० कृ० रामायणो गीतावली–

कैकेई जबलौं जियतरही। भरत भूल मुख सन्मुख कुछ कबहू न कही॥

भरतजीके मामूं केकयदेशके राजा युधाजित्के प्रार्थना करनेपर महाराज रामचंद्रने गंधर्वोंका देश विजय करनेके लिये भरतजीको भेजा और हुक्म दिया कि केकयाधीशभी मदद पहुंचावें। भरतजीने गंधर्वोंको परास्त करके उनका सर्वत्रदेश जो सिन्धसे कन्धारतक था छीनलिया और महाराजकी आज्ञानुसार निज पुत्र तक्षको सिन्धदेशका राज्य देकर उनके लिये तक्षशिला (Taxila) नामकनगरी बसाई। दूसरे पुत्र पुष्कलको गन्धार (कन्धार) देशका राज्य देकर

पुष्कलावतनामकपुरी उनके लिये बसादी। फिर कईवर्षतक उस देशमें रहकर भरतजीने निज पुत्रोंका राज्य पुष्ट किया, पश्चात् अयोध्याको लौट आये।

भरत चंद्रवंशी—यह महाराजा दुष्यंतके पुत्र शकुन्तलाके गर्भसे जन्मेथे यह बड़े पराक्रमी नरेश थे, इसदेशका नाम भारतवर्ष इन्हींके सम्बंधसे पड़ा इनकी ९ वीं पीढ़ीमें कौरव पांडवहुए।

भरत—इसनामके एक विद्वान्ने प्राचीनसमयमें होकर "नाट्य "शास्त्र" रचाथा जो अबभी मिलता है।

भर्तृहरि (नीत्यादिशतकत्रयके कर्ता)—इनके पिता गंधर्वसेनको धारानगरीके राजाकी कन्या विवाहीथी जिसके गर्भसे विक्रमादित्य का जन्म हुआ, भर्तृहरिने गंधर्वसेनके वीर्यसे धारानरेशकी एक दासीके उदरमें गर्भधारण कियाथा। धारानरेशके कोई पुत्र नहींथा इसलिये उसने इन दोनों लड़कोंका पालन पोषण किया और अनेकशास्त्रोंकी शिक्षा दिलवाई। जब यह लड़के युवावस्थाको प्राप्तहुये तौ धारानरेशने अपनेको अत्यंत वृद्ध समझ राजपाटका भार विक्रमादित्यको सौंपना चाहा लेकिन उन्होंने कहाकि " बड़े भाई भर्तृहरिके होतेहुये हमको राज्य सिंहासनपर बैठना उचित नहीहै एवं हम उनका मंत्रित्व करेंगे"। यह सुन धारानरेशने भर्तृहरिको राज्य सौंपा और विक्रमादित्यको मंत्रीके पदपर नियुक्तकिया लेकिन भर्तृहरि अत्यंत विद्वान् होनेपरभी ऐसे स्त्रैणथे कि, अहर्निश रनिवासमें रहकर राजकाजकी ओर कुछ ध्यान नहीं देतेथे। इनके दो रानियें थीं, एकका नाम पिंगला और दूसरीका अनङ्गसेना था, पिंगला पतिव्रता थी, और अनङ्गसेना दुश्चरित्रवाली थी लेकिन राजाको यह हाल विदित नहीथा एवं वह दोनोंको अत्यंत प्रेमकरताथा। एक दिन राजाने शिकारसे लौटकर किसी स्त्रीकी तारीफकी जिसको उसने सती होते देखाथा, पिंगलाने यह सुनकर कहाकि पतिव्रता स्त्री तौ पतिकी मृत्युकी खबर सुनतेही प्राण त्यागदेतीहैं, लेकिन राजाको इसबातका विश्वास नहीं हुआ निदान परीक्षाकरणार्थ उसने एकदिन कईकर्मचारियोंके द्वारा रक्तमें भिगोकर अपने कपड़े रानीके पास भेजदिये और कहलाभेजा कि " राजाको शेरने खालिया"। पिंगलाने इसखबरके सुनतेही प्राण त्यागदिये। राजाने जब भवनपर आकर हाल सुना तौ अत्यंत शोकातुर हुआ लेकिन इसचरित्रसे उसका प्रेम दूसरीरानी अनङ्गसेनाकी तरफ दुगणा होगया क्योंकि दोनोंकी जगह अब एकही रानी रहगईथी जो अपनेको परमपतिव्रता बतलाकर राजाको निरंतर भरमातीरहिती थी। निदान राजा उसके प्रेममें मुग्धहोकर पहिलेकी अपेक्षा अधिक राजकाजकी तरफसे बेपरवाई करनेलगा। यह देख विक्रमादित्यने राजाको कई दफे सचेतकिया लेकिन उसने

कुछन सुना और रानीकी कुमंत्रणा मान उनको अपने पास बुलानाभी बंदकरदिया। इसप्रकार अपमानितहो विक्रमादित्य देशदेशान्तरोंमें भ्रमण करने चले गये, इसके कईवर्षबाद किसी योगीने राजाको एक अमरफल लाकर दिया, राजाने वह फल अपनी प्यारीरानीके हाथ रक्खा, रानी किसी आधीन कर्मचारिसे फसीहुईथी एवं उसने वह फल उसको देदिया, उक्तकर्मचारीका प्रेम एक वेश्यापर था निदान वह अमूल्य फल उस वेश्याके पास पहुंचा. वेश्याने सोचा कि, इतनीही उम्रमें मैंने क्या थोड़ा पाप कियाहै जो अमरफल खाऊं निदान धनप्राप्त करनेकी इच्छासे वेश्याने वह फल राजाभर्तृहरिको जाकर दिया राजाने फलको देखकर अनुसन्धानकरना शुरू किया, रानीपिंगलाने इसखबरके सुनतेही भयके मारे कोठेपरसे कूदकर देह त्यागदी। यह सब त्रियाचरित्र देखकर राजाके चित्तमें वैराग्यका उदय हुआ निदान उसने अमरफल खालिया और राजपाट छोड़ वनको चलदिया। यह समाचार पायविक्रमादित्य आये और राज्यसिंहासनपर बैठे। निम्नस्थग्रंथ भर्तृहरिकृत हैं-

नीत्यादिशतकत्रय, वाक्यप्रदीप, पातञ्जलप्रणीत महाभाष्यपर सेतु नामक टीका। मालूम होता है कि, ये ग्रंथ महाराजभर्तृहरिने योगकी हालतमें लिखे थे।

भावनकवि-इनका असली नाम भवानी प्रसाद था। मौरावाँ जिला उन्नावके रहने वालेथे और प्रायः वि. सं. १८०१ में जन्मेथे। काव्यशिरोमणि (काव्य कल्पद्रुम) इन्हींका रचाहुआहै, इस ग्रंथमें पिङ्गल, अलङ्कार-नायकाभेद, दूती, नवरस, षट्ऋतु इत्यादिके सबअङ्गोंका वर्णन है।

भागीरथ (सूर्य्यवंशीनरेश)-निजपिताराजा दिलीपके बाद राज्यको प्राप्तहुये। इन्होंने गंगोत्रीके समीप हिमालय पर्वतमें स्थित अतुल हिमाराशिसे निकलते हुये जलको, जिसके प्रवाहरूप होनेपर किसीदिन भारतकी सहस्रों वस्तियोंके नष्टहो जानेका भय निश्चय होता था वास्तुविद्याकी अपूर्व युक्तियोंके द्वारा गोमुखसे निकाला और प्रायः १५०० मीललम्बी पहिलेसे खुदवाकर तैयार कराई हुई नहिरमें वहाकर बंगालकी खाड़ीमें मिला दिया। भागीरथके इसकार्य्यसे हजारों बस्तियें डूबकर मरनेकी अकालमृत्युसे बचगई और भारतके जलप्रिय प्रजागणको नहानेधोने, खेतसींचने, मुर्देबहाने तथा पीनेके लिये स्वच्छ सुमिष्ट पाचक जल प्राप्तकरनेका स्वर्गीय सुखमिला। सागरतटसे१४००० फीट ऊँचे गंगोत्री नामक स्थानपर गोमुखसे भागीरथी गंगाकी धारा निकलती है और प्रायः १५०० मील बहनेके पश्चात १० मीलचौड़ी धारासे बंगालकी खाड़ीमें गिरती है। भगीरथके बनाये हुये गोमुखसे ११ मील और आगे गंगाका मुख्य स्रोता है। वहां प्रायः ३०० फीट ऊंचे

एकबर्फके ढेरसे, जो सागरतटकी अपेक्षा आकाशकी समान अगम्य उचाई पर स्थित है, लगभग १५ फीट चौड़ी तथा १ । ३ फीट गहिरी गंगा निकली है ।

भावमिश्र (वैद्य)–विलसन साहबके मतानुसार यह वि. सं. की १६ वीं शताब्दीमें काशीमें हुये । इनके रचे " भावप्रकाश " में चोपचीनी, फिरङ्गरोग आदि कई नवीन विषय अधिक लिखेहैं जिनका पता प्राचीन ग्रंथोंमें नहीं है । इनके पिताका नाम लटकनमिश्र था ।

भारतीचंद्र (बुन्देलखण्डकेराजा)–यह मधुकर साहिके पुत्रथे (सो देखो)।

भारद्वाज–ये मुनिराज प्रयागमें रहतेथे । रामचंद्र महाराज वनवासको जाते समय तथा वहांसे लौटते समय आश्रमपर जाकर इनसे मिले थे । यह बड़े विज्ञानी थे । इनका गोत्र प्रचलित है ।

भारवि (महाकाव्यकिरातार्जुनीयके कर्ता)–इनका रचा महाकाव्य अर्थगाम्भीर्यमें सम्पूर्ण काव्योंसे शिरोमणि है, प्रसिद्ध है कि "भारवेरर्थगौरवम्" । ये वि. सं. की पांचवीं व छठी शताब्दीके बीचमें हुये ।

भास्कराचार्य (गणकचक्र चूड़ामणि)–ये शांडिल्यगोत्रोत्पन्न-महेश्वर उपाध्यायके पुत्र स. ई. १११४की साल बीजापुरमें उत्पन्न हुयेथे । निम्नस्थ पुस्तकें इनकी रचीहुईहैं:–लीलावती, गणिताध्याय, गोलाध्याय, बीजगणीत,सिद्धांतशिरोमणि, कर्णकुतूहल, ब्रह्मतुल्य और सर्वतोभद्रयन्त्र । "स्वयंवह" नामकचड़ी जलके बलसे चलनेवाली इन्होंने बनाईथी जिसका वृतान्त गोलाध्यायमें है । इनकेरचे ग्रथोंके देखनेसे ज्ञात होताहै कि, ये बड़े भारी व्याकरणीहोकर सर्वशास्त्रोंके ज्ञाताथे । सिद्धाँतशिरोमणिमें इन्होंने ज्योतिष, अङ्कगणित तथा वीजगणितके वे सब गूढ़रहस्य अन्वेषणकरके लिखेहैं जो फिरङ्गी विद्वानोंको स०ई० की१७वीं शताब्दीसे पहले नहीं मालूमहुये । यह इटेली भी गयेथे, इस सफरके वृत्तांत रोमकसिद्धांतमें लिखाहै । ७० वर्षकी उम्रमें मरे, कोई पुत्र नहीं रखतेथे केवल लीलावती एक कन्याथी सो वह भी कुँवारीही चलबसीथी । कहितेहैं कि एक दिन जब भास्करजी अपने मकानकी खिड़कीमें बैठे हुयेथे तब एक सागबेचनेवाली डलियामें सोये तथा चूकेका सागरक्खे हुये यह आवाज लगाती हुई निकली कि "सोया चूका" । यह सुन इन्होंने सिद्धान्त किया कि. सोनेसे आदमी चूकताहै और उसी दिनसे सोना त्याग दिया, रात्रिभर तारागणोंको निरखारकरतेथे ।

भास्करानन्दस्वामी (जीवनमुक्त)–ये मैथीलालपुर जिलाकानपुरमें मिसरीलाल कान्यकुब्ज ब्राह्मणके घर स० इ० १८३३ में जन्मेथे । माता

पिता इनके बड़े धार्मिकजनथे और उन्होंने सब तीर्थोंकी यात्रा कीथी । इनका पूर्वनाम मैतीलालथा, १७ वर्षकी उम्रतक इन्होंने सब शास्त्र पढलियेथे. पश्चात् इनका विवाह होगया, स्त्रीभी बड़ीसुंदरी मिली, बहुत समय नहीं बीतने पाया था कि, एक पुत्र इनके पैदाहुआ, पुत्रका मुख देखतेही इनके हृदयमें वैराग्यका उदय हुआ निदान घरवार छोड़ चलतेहुये और उज्जैन पहुँच एक मंदिरमें ठहरे और १० वर्षतक वहां रहकर आत्मतत्वकी खोज की तथा वेदान्तशास्त्रके सूक्ष्म विषयोंका विचार किया । इसके बाद प्रायः ३० वर्षकी उम्रमें भ्रमण करना शुरू किया, हिंदोस्तानके प्रायः सबही तीर्थोंमें घूमें और सर्वत्र कठिन स्थलोंमें गये । उन दिनों इनके पास केवल एक लबादा तथा एक दण्ड था । घूमते २ अपनी जन्मभूमि मैतीलाल पुरमें आये और वहाँ दण्ड तथा लबादाभी त्याग दिया और बनारस जाकर आनन्दबागकी गुफामें कमलासन लगाकर बैठगये और अन्तसमयतक वहीं रहे । आप बड़े विद्वान् थे, अहर्निश हर भजनमें लवलीन रहतेथे. विषयभोगकी वासनाका लेशमात्रभी आपमें न था । सबलोग आपको जीवनमुक्त समझतेथे. बड़े २ राजे महाराजे आपको ताजपहिने सीखनथातेथे और इंगलैंड, आस्ट्रेलिया, जर्मनी, नार्वे, रूस इत्यादि देशोंके बड़े २ विद्वान् तथा कर्मचारीगण आपसे मिलनेको आतेथे । आप दिगम्बर रहते थे और दिव्यदृष्टिथे. भिन्न २ स्वतंत्र राज्योंके अफसर आकर भविष्य मुलकी मामलात तथा युद्धोंके परिणामके विषयमें आपसे दरयाफ्त कियाकरते थे । स० ई० १८९९ में देह त्यागी हुये. स्वामीजीकी अन्तिम आज्ञाथी कि "मेरे मृतक शरीरको चिमटोंसे तोड़कर पखेरुओंको खिलादेना" परंतु ऐसा करना उचित न समझ शिष्यगणोंने आनन्द बागबनारसमें समाधिदी । उपनिषदोंकी संस्कृत टीका तथा वेदान्तका अमूल्य ग्रंथ "स्वाराज्यसिद्धि" स्वामीजीके नामसे छपवाकर धर्मार्थ वितरणकिये गये । अवधनरेश प्रतापनारायणसिंह जो स्वामीजीके शिष्यहैं एकदफे काशीगये थे, किसी आवश्यक कार्यके कारण उनको शीघ्रही अयोध्या आनेकी जरूरत हुई, शीघ्रतासे अस्वाबस्टेशनको भेज स्वामीजीसे आज्ञा मांगने गये । नरेशके अत्यंत आग्रह करनेपरभी स्वामीजीने उसदिन यात्राका निषेधकिया और कहा कि "आज तुमको यहीं ठहिरना होगा" । दूसरे दिन सुना कि, रेलगाड़ी जिसमें महाराज प्रताप अयोध्या जानेको थे रास्तेमें लड़गई जिससे कई मुसाफिर मरे और बहुतोंके चोट आई ।

भिखारीदासबाबा (भाषाकवि)—अरवलदेश (बुंदेलखण्ड) अन्तर्गत टेडङ्गानगरके वासी कायस्थथे । इनके पिताका नाम कृपालुदास, पितामहका वीरभानु, प्रपितामहका रामदास और भाईका चैनलाल था । छंदोर्णव पिंगल, रससारांश, काव्यनिर्णय, प्रेमरत्नाकर, शृंगारनिर्णय और बागब-

प्रकार इनके रचे ग्रंथ अत्युत्तम हैं। इनग्रंथोंके देखनेसे ज्ञातहोताहै कि भिखारीदासजी केवल भाषाहीके विद्वान् नथे वरन संस्कृत काव्य कोषके भी पूर्ण अधिकारीथे। इनका रचा काव्यनिर्णय प्रम्मटकृत काव्यप्रकाशका भाषान्तर विदित होताहै। दासनामसे इन्होंने पदपूर्तिकी है, वि. सं. १७४५ में जन्मे और वि. सं. १८२५ में सिधारे।

भीमसेन (पाँडव)–ये राजा पाँडुके द्वितीयपुत्र बड़े बलवान्, हृष्टपुष्ट अनूपमयोधा तथा डीलडौलवाले हुये। युद्धमें सहस्त्रोंका साम्हना अकेले करतेथे और इनका गदायुद्ध यूनानी हरक्युलिज़के गदायुद्धसे कहीं बढ़करथा इनको भूख बहुतथी इसीलिये वृकोदर कहिलातेथे और द्रोणाचार्य तथा बलरामजीसे इन्होंने शस्त्र शास्त्रकी शिक्षा पाईथी। महाभारतकी लड़ाईमें इन्होंने बड़े २ वीरताके काम किये, धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधन तथा दुश्शासन इन्हींके हाथसे वध हुये।

भीष्मपितामह–ये चंद्रवंशी राजाशान्तनुके पुत्र रानी गंगाके उदरसे थे पश्चात् राजा शन्तनुने सत्यवती एक नवयौवनासे शादीकरना चाहा लेकिन उसके माता पिताने यह शर्त ठानी कि, सत्यवतीके गर्भसे जो पुत्रहोगा वहही शन्तनुके बाद हस्तिनापुरकी गद्दीपर बैठेगा लेकिन भीष्मके होतेहुये यह सर्वथा असम्भवथा निदान भीष्मने पिताकी विषय वासना पूर्ण करनेके लिये शपथ की कि मैं नतो विवाहकरूंगा, न राजसिंहासनपर बैठूंगा और अपने भाई भतीजोंके राजकाजमें सदैव सहायता करता रहूंगा। जब भीष्मने ऐसा प्रण करलिया तौ सत्यवतीका विवाह शन्तनुके साथ होगया और चित्राङ्गद तथा विचित्रवीर्य दो पुत्र उसके गर्भसे हुए, इनदोनोंने निजपिताके बाद राज्यकिया और भीष्म देखभाल करतेरहे लेकिन यह दोनों निर्वंशही मरगये निदान भीष्मने अपनी सौतेली मात सत्यवतीकी सलाहसे राजाविचित्रवीर्यकी अम्बिका तथा अम्बालिका विधवारानियोंमें व्यासजीसे गर्भाधान कराया जिससे धृतराष्ट्र तथ पांडु उत्पन्न हुए और चंद्रवंश नष्ट होनेसे बचा। पांडु तथा धृतराष्ट्रके बचपनमें भीष्म राजकाजकी देखभाल करतेरहे और बादको मुख्यसेनापतिके पदका भार इन्होंने अपने सिरपर लिया। महाभारतके युद्धमें भीष्मपितामह कौरवोंकी तरफसे लड़े और दशवेंदिनकी लड़ाईमें अर्जुनके हाथसे घायलहुये और ५८ दिनपीछे मरे। महाभारतका युद्ध ८१४ गतकलिमें कविचंदके लेखानुसार हुआहै. भीष्मपितामहसरीखे बलवान् योधा अब नहीं होते।

भूषणत्रिपाठी(भाषाकवि)–यह टिकमापुर जिलाकान्हपुरके रहनेवाले कान्यकुब्जब्राह्मण मुगलसम्राट औरंगजेबके समयमें हुये।इनका पूरानाम व्रजभूषण था और मतीराम जटाशङ्कर तथा चिन्तामणि इनके सहोदरथे

(देखो चिन्तामणि) । मतीरामजी औरंगजेबके दर्बारमें नौकरथे, जितना रुपया वह घरको भेजतेथे भूषणजी उस सबको सुमार्गमें खर्चकरदेतेथे, मतिरामको यह बात नापसंदथी लेकिन प्रगट कुछ नहीं कहतेथे, जब भूषणजीने यह बात समझी तौ विचारा कि पैदाकरके खर्चकरनी मुनासिबहोगा। यह सोंच यह पन्नानरेश छत्रसालके दर्बारमें गये, छत्रसालजूने इनकी अनुपमकवित्वशक्तिपर प्रसन्नहोकर खूब सत्कार किया, पन्नासे छः महीने बाद सतारागढ की तरफ पयानकिया और वहां पहुंच महाराज शिवाजीमरहटाको निम्नस्थ कवित्तसुनाय ५ हाथी तथा ५० हजार मुद्रा नकद इनाम पाये-

कवित्त-इन्द्र जिमि जंभपर वाड़व सुअंभपर ।
रावण सुदंभपर रघुकुल राजहै ॥
पवन वारिवाहपर शम्भु रतिनाहपर ।
ज्यौं सहस्रबाँहपर राम द्विजराजहै ॥
दावाद्रुम दुंडपर चीता मृगझुंडपर ।
भूषण वितुंडपर जैसे मृगराजहै ॥
तेज तिमिरंसपर कान्ह जिमि कंसपर ।
त्यौं मलेक्षवंशपर शेर शिवराजहै ॥

पश्चात् भूषणजीने बहुतदिनोंतक शिवाजीके दर्बारमें रहकर "शिवराजभूषण" नामक ग्रंथरचा और उसके उपलक्षमें अनेकसामानसहित २१ लाखरुपये नकद इनामपाये । अन्तमें जब भूषणजी अपने घरको लौटे तौ रास्तेमें महाराजछत्रसालके यहां पन्नामें ठहरे, छत्रसालजूने विचारा कि "हम इनको शिवाजीसे अधिक क्या देसकतेहैं निदान पन्नासे चलतेवक्त इनकी पालकीका बाँस कन्धेपर रखलिया, ब्राह्मण कोमलहृदयतौ होतेहीहैं एवं यह प्रसन्नहो बोले कि "साहूको सराहौं कि सराहौं छत्रसालकौ" । घरपर पहुंच भूषणजी बहुतदिनोंतक नहीं ठहरे बरन देशदेशान्तरोंमें घूमतेफिरे औरमहाराजशिवाजीका यशविस्तृत करतेरहे, जब कुमायूं जाय इन्होंने वहांके राजाको एक कवित्त सुनाया तौ उसने समझा कि,यह जो सुनाथा कि महाराजशिवाजीने इनको निहालकर दियाहै सो मिथ्याहै, ऐसा सोच कुमायूंनरेशने अनेक हाथी, घोडे बहुतसे रुपयोंसहित इनकी भेंटकिये लेकिन इन्होंने लेनेसे इनकारकिया और कहाकि हमतौ यहाँकेवल यह देखने आये हैं कि महाराज शिवराजका यश यहां तक विदित हुआहै या नहीं । भूषण हजारा, भूषणउल्लास, दूषणउल्लास तथा शिवराजभूषण इनके रचे ग्रंथ रौद्र, वीर, भयानकरसके दरशानेमें प्रधानहैं ।

भोज (महाराजा धारानगर)-पिता सिन्धुल इनको ५ वर्षका छोड़ मरेथे निदान चचा मुञ्जने गद्दीपर बैठकर इनको पाठशालामें

पठनार्थ भेजदिया। जब १५ वर्षकी उम्रमें भोज पढ़लिखकर तैयारहुए तौ चचा मुञ्जने इनको मारडालनेकी फिक्र की लेकिन शीघ्रही चित्तमें वैराग्य उदय होनेके कारण राजपाट इनको सौंपदिया और आप वनको चलागया। उसीसाल भोजकी शादी पटनाकी राजकुँवारी लीलावतीसे होगई। पश्चात् भोजने निज राजधानी धारमें लड़कों तथा लड़कियोंके लिये अनेक पाठशालायें खोलीं, राज्य भरमें १००।१०० घरपीछे १।१ चौकीदार नियत किया, मनुस्मृति तथा मिताक्षराके अनुसार न्याय होनेलगा, राजभवनमें रेशमकी डोरीमें बांधकर सोनेकी घंटियें लटकाई गईं डोरीका दूसरा सिरा महलके बाहर लटकता रहताथा जिसको खींचनेसे घंटियें बज उठतीथीं और राजा तुरंत बाहिर निकलकर सर्व साधारणका दुःख दर्द सुनताथा। रानी लीलावती भी बड़ी विदुषी थी और पुत्री शालाओंकी देखभाल रखतीथी राजाभोजको विद्योत्साही गुणग्राही जान देश देशान्तरोंसे प्रायः १४०० पण्डित राजदर्बारमें आकार एकत्र होगयेथे, हुक्मथा कि, जो कोई नयाश्लोक बनाकर लावे उसे १ लक्ष मुद्रा इनाम दिया जायाकरे लेकिन श्लोकका नया ठहिरना कठिन था क्योंकि, दर्बारके पंडित बहुधा जाँच करके यही कहा करतेथे कि "इस श्लोकके आशयसे तौ हम परचितहैं"। ऐसे कड़े नियम होनेपरभी महाराज भोजको सैकडों कवीश्वरोंने नयेश्लोक सुना २ कर करोड़ों रुपये, रत्न तथा घोड़े हाथी इत्यादि दान पायेथे, इस सबका व्योरा भोजप्रबन्धमेंहै जिसमेंसे छांटकर एक लकड़हारेका उदाहरण आगे लिखेंगे कविकालिदास दरबारके कवीश्वरोंमें सबसे अधिक बुद्धिमान् तथा कविता करनेमें सर्वोत्तम थे, महलोंके भीतरतक उनकी रसाई थी और भोज कोभी उनके विना कल नहीं पड़तीथी। निर्धन होजानेपर महाकवि पं०माघने भी धारानगरीमें जाकर अपनी स्त्रीके हाथ स्वरचित "शिशुपालवध" महाकाव्यके निम्नस्थ श्लोक राजाभोजके पास भेजे और ३ लक्ष मुद्रा सन्मान सहितपायेथेः—

श्लो०—कुमुदवनमपश्रि श्रीमदंभोजखंडं।
त्यजति मुदमुलूकः प्रीतिमांश्चक्रवाकः॥
उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तं।
हतविधिललितानां ही विचित्रो विपाकः॥

एक दिन कोई ब्राह्मण लकड़ियोंका बोझा शिरपर रक्खेहुये नदीपार उतरता था, भोजने उसे देख कहा कि "नद्यां कियज्जलं विप्र" ब्राह्मणने तुरंत उत्तर दिया "जानुदघ्नं नराधिप" फिर राजाने कहा कि "ईदृशी किमवस्थाते" ब्राह्मणने शीघ्रतासे कहा कि "नहि सर्वेभवादृशाः" इसपर प्रसन्नहोकर भोजने कहाकि "जाओ एकलक्षमुद्रालेलो" ब्राह्मणने जाकर जब धर्मखातेके अधिकारीसे लक्षमुद्रामाँगी तौ उसने ब्राह्मणकी दीनदशादेख उसके कथनको असत्यजाना, निदान ब्राह्मण राजाके पास लौटकर गया, राजाने हुक्मदियाकि "जाओ दोलक्ष मुद्रा लेलो"

इसदफेभी ब्राह्मणको पहिलेहीकी तरह लौटनापड़ा, तबतो राजाने ३ लक्षमुद्रा और १० हाथी देनेका हुक्म लिखकर ब्राह्मणको देदिया, हुक्मके देखतेही अधि-कारीने तामील की और लिखदिया कि–

श्लो०–लक्षं लक्षं पुनर्लक्षं दत्ताश्च दश दन्तिनः।
दत्ताः श्रीभोजराजेन जानुदघ्नं प्रभाषिणे ॥

भारतमें भोजके समान दानशील, विद्योत्साही, गुणग्राही केवल २। ४ ही नरेश हुयेहैं, डाक्टरराजेंद्रलाल मित्रके मतानुसार भोजका राजकाल स. ई.१०२६ से १०८३ तक सिद्धहै। कविनरपतनाल्हने भोजकी राजकुँवारी राजमती और अजमेरनरेशवीसलदेवके विवाहका वृतांत "वीसलदेवरासौ" नामकग्रंथमें लिखाहै जिससे यहभी विदितहोताहै कि, भोजका राज्य मालवासे लेकर दक्षि-णमें लंकातक था और गौड़देश (बंगाल) उनके आधीनहोकर सांभर, टोंक, गढ़मंडल, चित्तौड़ तथा अयोध्याके राजे इनकी रक्षामेंथे। राजधानी डुमराउंसे १ मीलके फासिलेपर भोजके बसाये भोजपुरके खण्डेर अबतक पड़ेहैं और शहर भोपाल भी राजा भोजहीका बसायाहुआहै तथा वहांका भोपालतालभी, उनहींका खुदवायाहुआहै, भोपाल अपभ्रंशहै भोजपालका। निम्नस्थग्रंथ भोजकृतहैं:–

कामधेनुस्मृतिसंग्रह, भोजचम्पू, सरस्वतीकंठाभरण, राजमार्तण्ड, देशव्यवस्था विक्रमचरित, पातञ्जलयोग सूत्रवृत्ति और करणमृगांक। भोजके अन्तसमय कालि-दासने निम्नस्थ श्लोक रचा:–

श्लोक०–अद्यधारा निरधारा निरालंबा सरस्वती।
पंडिताः खंडिताः सर्वे भोजराजे दिवंगते ॥

भोरूमलकछवाहे–देखोविहारीमल।

मकरंदज्योतिषी (मकरंदसारिणीकेरचयिता)–ये काशीवासी ब्राह्मण वि०सं० १४३२में जन्मे। इन्होंने सूर्यसिद्धांतके आधारपर तारागणोंकी एकसा-रिणी बनाईथी जिसके आधारपर वर्तमान कालके पंडित पञ्चाङ्ग बनातेहैं।

मगेस्थिनिज–(Mage-thenes)–यह सिरिया (शाम) के राजा सेल्युकसका राजदूत मगधनरेश चन्द्रगुप्तके दर्बारमें ३०६ वर्ष पू० स० ई० से २९१ वर्ष पू० स० ई० तक रहाथा। इसने इबरानीभाषामें एक ग्रंथरचा है जिसके पढनेसे हिंदोस्तानकी दशा जो उससमयमें थी स्पष्ट ज्ञात होजातीहै। उक्तग्रंथका अनुवाद अंग्रेजीमें भी होगयाहै।

मङ्खककवि–ये संस्कृतकवि वि० सं० की.१२ वीं शताब्दीमें हुये। कश्मीरके रहिनेवालेथे , श्रीकण्ठचरित्र नामक इनका रचा काव्य अच्छाहै। एक संस्कृत शब्दकोषभी इन्होंने बनायाथा।

मङ्गलसिंह (महाराजा, सवाई, सरमङ्गलसिंह बहादुर,जी० सी० एस० आई०)-स० ई० १८७४ में महाराजशिवदानसिंहजीके बाद अलवरकी गद्दीपर बैठे। रियासतमें आपके समयमें अनेकसड़कें और इमारतें बनाईगई, शिक्षाविभागकी उन्नति हुई। आपके वक्तमें १०० स्कूल लडकोंकेलिये और १७ लड़कियोंके लिये राज्यभरमेंथे। राज्यकोषसे खर्चदेकर आप अनेकोंको आगरा मेडिकेल कालिजमें डाक्तरी शिक्षापानेके लिये भेजतेथे, लेडी डफरिनफण्डमेंभी आपने ५० हजाररुपया चन्दा दियाथा, आप बड़े प्रजाहितैषीथे और बृटिशगवर्नमेन्टभी आपसे अत्यंत प्रसन्नथी। राजधानी अलवरमें आपने एक उत्तम न्यायालय बनवायाथा और बृटिशसेनाके आप अवेतनिक लफ्टिनेन्ट कर्नलथे। आपके राज्यका विस्तार ३०२४ वर्गमीलथा जिसमें प्रायः ६ लाख ८३ हजार मनुष्य बसतेथे। आपके समयके रुपयेपर आपका नाम फार्सीमें अंकितहै। स० ई० १८९२ में आपका देवलोकहुआ और महाराजा सवाई सर जयसिंह बहादुर गद्दीपर बैठे।

मण्डनकवि– बुँदेलखण्ड प्रदेशान्तर्गत जैतपुरकेवासीथे, भाषा कविता अच्छीकरतेथे। रसरत्नावली, रसविलास और नयनपचासा इनके बनाये ग्रंथ भाषापद्यमें अच्छेहैं। राजामङ्गदसिंह बुँदेलाके दर्बारमें इनका सत्कार होताथा। वि० सं० १७१६ में विद्यमानथे।

मण्डनमिश्र (कर्ममीमांसक पंडित)-इनके पिता रेवानदीके किनारे माहिष्मती(मैसौर)के रहिनेवाले हिममित्र नामक ब्राह्मण बड़े विद्वान पंडितथे। इनका असली नाम विश्वरूपथा लेकिन अनेकस्थानोंपर इन्होंने बौद्धमतका खण्डन तथा वेदका मण्डन कियाथा इसलिये इनका नाम मण्डनमिश्र पड़गयाथा। प्रयागनिवासी प्रसिद्ध पंडित कुमारिलभट्टसे इन्होंने शिक्षा प्राप्तकीथी। इनका विवाह विष्णुमित्रनामक एकधार्मिक तथा कर्मनिष्ठब्राह्मणकी कन्या लीलासे हुआथा। लीला बड़ीभारी पंडिताथी और इसीलिये उसको सरस्वती कहतेथे। मण्डनमिश्रने हिंदोस्थानके सब बड़े २ पंडितोंको शास्त्रार्थमें परास्त करदियाथा। स्वा० शङ्कराचार्यसे पं० कुमारिल भट्टने स्वयं कहाथा कि, यदि तुम मण्डनमिश्रको परास्तकरसकोगे तौ और सब पंडित परास्तके तुल्य होजावेंगे। मण्डनमिश्रके घरकी दासियेंतक विदुषीथीं। शङ्करस्वामीने उनके स्थानपर पहुंचकर दासियोंसे पूंछा कि, क्या मण्डनमिश्रकी हवेली येहीहै? उत्तरमें दासियोंने निम्नस्थ श्लोकपढ़ाः–

श्लो० स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं शुकाङ्गनायत्र गिरो गृणन्ति।
शिष्योपशिष्यैरुपगीयमानेमवेहि तन्मण्डनमिश्रधाम ॥

शास्त्रार्थमें शङ्करस्वामीने मण्डनमिश्र और उनकी स्त्री लीलाको परास्तकरदिया। लीलाने तुरन्त देहत्यागकी और मण्डनमिश्र शङ्करस्वामीके शिष्यहोकर सुरेश्वराचार्यनामसे प्रसिद्धहुये । सुरेश्वराचार्य आदिशङ्करके शिष्योंने दक्षिणदेशमें शैव, पाशुपत्य गाणपत्य,तथा शाक्त मतवादियोंको शास्त्रार्थमें परास्त कियाथा और उनको उपदेशकियाथा कि सबदेवता परमेश्वरके अंशहैं उनको अभेदबुद्धिसे पूजना चाहिये। दक्षिणदेशमें अबतक स्मार्तलोग अधिकतासेहैं। "त्रिकाण्डमण्डन" नामक ग्रंथ मण्डनमिश्रहीका बनायाहुआहै।

मतिरामत्रिपाठी (भाषाकवि)–ये टिकमापुर जि० कानपुरके वासी कान्यकुब्जब्राह्मण स० ई० १६५० तथा १६८२ के बीच विद्यमानथे। बहुतदिनोंतक कुमायुंनरेश उद्योतचंद तथा कोटाबूँदी नरेश रावभाऊसिंह और शंभूनाथ सुलंकी इत्यादि के दरबारमें रहिनेके पश्चात् मुगलसम्राट औरंगजेबके दरबारके कवीश्वरोंमें नौकर होगयेथे और अन्तसमयतक वहींरहे। ललितललाम नामक अलङ्कारग्रंथ इन्होंने रावभाऊसिंहके नामसे और छन्दसार पिंगलफतेशाहबुँदेला श्रीनगरवालेके नामसे रचाथा। नायकाभेदमें इनका बनाया "रसराज" अत्युत्तमहै । प्रसिद्धभाषाकवि भूषणत्रिपाठी इनके छोटे भाईथे।

मदनमोहन मालवीय (देशहितैषी)– ये पंडितजी प्रयागके रहिनेवाले गौड ब्राह्मण हैं । आपके पूज्यपाद पिताजी प्रतिष्ठित पंडित होकर अभी विद्यमान हैं । आपने अंग्रेजीमें बी० ए० तथा एल. एल. बी. की उच्च परीक्षायें उत्तीर्ण कीहैं लेकिन आपकी लियाकत कहीं बढ़कर है। संस्कृत विद्याके भी आप अच्छे विद्वान् हैं और मातृभाषा हिंदीके आप अनन्य भक्त हैं पहिले कईवर्षतक हिंदीके दैनिक पत्र "हिन्दोस्थान" का जिसको कालाकङ्करसे राजा रामपालसिंह प्रकाशित करते हैं आपने बडी योग्यतासे सम्पादन किया था पश्चात् आपने आईन पढ़कर एल. एल. बी. की परीक्षा उत्तीर्ण की और तबसे प्रयाग हाईकोर्टमें वकालत करते हैं। औसत आमदनी आपकी दो हजार रुपये मासिक होगी । देशियोंको नफा पँहुचानेके लिये जितने आन्दोलन इस प्रान्तमें होते हैं उनमें सबसे पहिले आप कदम बढ़ातेहैं । "गवर्नमेन्टने आपहीके उद्योगसे इस प्रान्तके स्कूलोंमें शिक्षासम्बंधी अनेक बातोंका सुधार करके छात्रोंकेलिये बड़ा सुभीता कर दियाहै। हाईकोर्टके जज्जोंसे मिलकर मातृभाषा हिंदीकी पुकार लेफ्टिनेन्ट गवर्नर सर ऐन्टोनी मैकडानेलके कानतक पहुँचानेके मुख्यकारण आपही हैं उस अवसरपर ६ महीनेसे अधिक वकालत छोडकर आपने देशदेशान्तरोंमें भ्रमण करके अपने विचारोंकी पुष्टिके लिये

करोड़ों मनुष्योंको वाञ्चित किया था । आपका परिश्रम सफल हुआ, गवर्नमन्टकोभी न्यायकरनेका साहस हुवा और न्यायालयोंके कागजोंमें नागरी अक्षरोंके व्यवहार करनेका हुक्म दृढ़ता सहित पासकरदिया गया । आपकी वक्तृता हृदयग्राहिणी होतीहै, नेशनल कांग्रेसके आप मुखियाओंमेंसे हैं और आपकी चाल ढाल, रहिन सहिन, खान पान सब ब्राह्मणोंकासाहै । आज कलके विद्वानों तथा देशहितैषियोंका सरमौर आपको कहना सर्वथा उचित है । आपसे देशहितैषियोंकाजीवन सार्थकहै और पवित्र है वह कुक्षाजिसमें आप सरीखे नरसिंह पुत्रने गर्भ धारणकिया ।

मदनमोहनसूर-देखो सूरदास मदन मोहन ।

मदार- दखो शाहमदार ।

मधुकर साहि (बुँदेल खण्डके राजा)-इनके पिता रुद्रप्रतापके १२ बेटे थे । रुद्रप्रतापको आखेटका बड़ा व्यसन था और इसी में स० ई० १५३१ की साल उनकी जान गई । शहिर उड़छा उन्हीका बसाया हुआ है। रुद्रप्रतापके बाद उनके ज्येष्ठ पुत्र भारती चंद्र गद्दीपर बैठे । भारतीचंद्रके वक्तमें राज्य वृद्धि बहुत कुछ हुई, वार्षिक आय प्रायः दो करोड़ रुपये केथी और शेरशाह (स० ई० १५४२-१५४५) ने बुँदेलखण्डजीतना चाहा था पर कृतकार्य नहोसकाथा । भारतीचंद्रके अपुत्रसिधारने पर स० ई० १५४२ में मधुकरसाहि गद्दीपरबैठे । इनक समयमें अकबरने कईदफे बुँदेलखण्ड लेलेनेका उद्योग किया, कभी मुसल्मान जीते और कभी बुँदेले । अंतको स० ई० १५८४ की साल अकबरकाबेटा मुराद बड़ीसेना लेकर चढ़आया लेकिन मधुकरसाहिकी वीरतासे प्रसन्नहोकर जीताहुआ मुल्क फिर वापिस कर दिया । मधुकरसाहिके पीछे उनके बंशका राज्य केवल ओड़छेमें रहा क्योंकि राजारुद्रप्रतापने महोबेका राज्य अपने तृतीय पुत्र उदयाजीतको देदिया था जिससे महोबेकावंश अलगहोगया ।

मधुकरसाहिके बाद उनके दो पुत्र इन्द्रजीतसिंह तथा वीरसिंहदेवने क्रमशः ओड़छेमें राज्यकिया । स० ई० १६११ में कविकेशवदासने मधुकर साहि के कहनेसे वीरसिंहदेवके लिये "विज्ञानगीता" नामक ग्रंथरचकर इनाम पायाथा। इन्द्रजीतने राजाहोकर शहिर इटावा बसाया, धीरजनरेंद्रनामसे कविताकी और कविकेशवदासकी कविता पर रीझकर २१ गाव उनको सङ्कल्पकरदिये । प्रसिद्धकविप्रवीणराय पातुरीभी इन्द्रजीतहीके दर्बारमेंथी । वीरसिंहदेवने झाँसीका शहिर बसाया और मथुरामें एक बड़ाभारी मंदिर केशवदेवजी का बनवाया जिसको औरंगजेबने खुदवाडाला। उक्त मंदिर शहिर

मथुरा मुहल्ला चौकमें उसस्थान पर था जहां अब जामा मसजिद खड़ी है। मधुकरसाहिके वंशजों और मुसलमानोंमें निरन्तर बहुत दिनोंतक लड़ाई रही, कभी कोई जीता और कभी कोई। महोबेवालेभी इन लड़ाइयोंमें अपने कुटुम्बियोंका साथ देतेरहे ॥

मनुजी (मानवधर्म शास्त्रके रचयिता)-देखो वैवस्वत मनु ॥

मम्मट (साहित्याचार्य)-कश्मीरवासी जैय्यट उपाध्यायके पुत्रथे।कश्मीराधिपति यशस्कर देवके दर्बारमें वि० सं० १०२४ के लगभग विद्यमान होकर इन्हों ने "काव्यप्रकाश" नामक ग्रंथ रचाथा। काव्यप्रकाश सकल साहित्यग्रंथोंमें शिरोमणि गिनाजाताहै , मम्मटके वचनका मान्य विद्वान् लोग सूत्रों के तुल्य करतेहैं । व्याकरण महाभाष्यकार कैय्यट तथा यजुर्वेदभाष्यकार औवट इनके कनिष्ठ सहोदरथे और इन्हींसे शिक्षापाकर ऐसे वि न् पंडित हुयेथे ।

मयूरभट्ट (सूर्यशतकके कर्ता)-सूर्यशतकरचनेके प्रभावसे इनका कुष्ठरोग दूरहोगयाथा। बनारसकालिजके मासिकपत्र पंडितमें लिखाहैकि प्रसिद्धकवि बाणभट्ट इनके ससुरथे। ये वि० सं० की ५ वीं शताब्दीके शेषभागतकजीतेथे। कन्नौजके राजा श्रीहर्षके दर्बारमें इनका सन्मान होताथा। ये सारस्वत ब्राह्मण प्रतीत होतेहैं।

मल्लिनाथ- इसनामके कई विद्वान् हुयेहैं। उन सबका ब्यौरा कीन्सकालिज बनारसके मासिक पत्र "पंडित" के अनुसार नीचे लिखतेहैं-

मल्लिनाथवैद्य (पथ्यापथ्यनिरूपणके कर्ता)-ये शा० सा० १६४४ में विद्यमानथे।

मल्लिनाथ कोलाचल (टीकाकार)-ये दक्षिण देशके रहिनेवालेथे, इन के नामके पीछे कोलाचलहोनेसे प्रतीत होताह कि ये रासकुमारीके समपि कोलाचलके रहिनेवालेथे, समय इनका शाके १४७८ तथा १५८० के बीच निश्चयहै, भीमसेन तथा वीरभद्र इनके दो पुत्रथे। वीरभद्रने वि० स० १६३३ की साल दुर्गासप्तशतीकी टीका सम्पूर्णकीथी। रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूत किरातकाव्य, माघकाव्य, नैषधकाव्य, भट्टीकाव्य, अमरकोष, एकावली तथा अलंकार इत्यादि ग्रंथोंपर मल्लिनाथजीने तिलक रचेथे।

मल्लिनाथ-ये आदित्यकर्म्माके पुत्रथे। इनके पुत्र त्रिविक्रमदेवने प्राकृत व्याकरण बनायाथा।

मल्लिनाथ— ये काकटेयराज्यके राजा प्रतापरुद्रके समयमें स० ई० १३१० के लगभग हुये। उक्तराजाके हुक्मसे इनके पुत्र कुमारस्वामीने सरस्वती बिलास नामक ग्रंथ बनाया। ये तैलङ्ग प्रतीतहोते हैं।

मल्लिनाथ—तैलङ्गदेशान्तर्गत त्रिभुवनगिरिके रहिनवालेथे। वि० सं० १२९८ में विद्यमानथे। पं० नरहरिजी इनके पुत्रथ।

मल्लिनाथ पंडित—महाराज भोजके समयमें हुये, इनका नाम भोजप्रबन्ध में है।

मल्लिनाथ—ये ग्राम मुझियारी (कन्नौज) के रहिनेवाले सामवेदीय वि०सं० १५६७ में विद्यमान थे। सामवेदकी एक प्राचीन प्रति संस्कृत कालिज बनारसमें है उसमें ऐसा लिखाहै।

मल्हारराव हुलकर (इन्दौरराज्यके संस्थापक)—कुन्दजी हुल्करके पुत्र स० ई० १६९३ में पूनाके होल नामक ग्राममें जन्मे।चारवर्षकी उम्रमें पिताके देहांत होनेपर कुटुम्बियोसें अनबन होनेके कारण माता इनको लेकर खानदेश प्रान्तके एक ग्राममें अपने भाईके पास जारही।मल्हार जब बड़े हुयें तौ मामूंने उनको अपने साथ सवारोंमें नौकर करालिया, थोड़ेही दिनोंमें वे सैनिक कार्योंमें खूब दक्ष होगये और स० ई० १७२४ में पेश्वाकी सेनामें भर्ती होकर निज योग्यता तथा वीरताके कारण क्रमशः बढ़ते २ स० ई० १७३२ में सेनापतिके पदको प्राप्तहुये। स१७२९ में इन्होंने माळवाके सूबेदार गिर्धर बहादुरको परास्तकरके वधकिया था और स० ई० १७३१ में पानीपतके युद्धमें बड़ी बहादुरीसे लड़े थे। स० ई० १७३३ में पेश्वाने इनके साहस पूर्णकामोंसे प्रसन्न होकर इनको इन्दौरका राज्य जागीरमें दिया। स० ई० १७६५ में ७६ लाख रुपये वार्षिक आयका मुल्क तथा ७६ करोड रुपया नक़द छोड़कर मल्हररावका देवलोक होगया। इनका बेटा खाँडेराव तथा इनका पौत्र मालीराव पहिलेही सिधारचुकाथा निदान इनकी पुत्रवधू प्रसिद्ध महारानी अहिल्याबाई गद्दीपर बैठी (सो देखो)।

मल्हारराव हुलकर द्वितीय (इन्दौरके राजा)—यह इतिहास प्रसिद्ध महाराजा यशवन्तराव हुलकरके दत्तक पुत्रथे,निज पिताके बाद स०ई०१८११में गद्दीपर बैठे।मुहीद पुरकी लड़ाईके बाद इनमें और ब्रिटिशगवर्नमेन्टमें सन्धिहुई। स० ई०१८३४में इनके मरनेके बाद इनके दत्तक पुत्र मार्तण्ड राव हुलकर गद्दीपर बैठे। थोड़ेही दिनों बाद मार्तण्डरावको गद्दीसे उतार हरीहर राव हुलकर राजा बने। हरिहर रावके बाद खाँडेराव इन्दौरकी गद्दीपर बैठे, खाँडेरावके अपुत्र सिधारनेपर राज्यके कई दावेदार बने लेकिन ईस्ट इण्डिया कम्पनीने बीचमें पड़कर

मुल्करजी राव हुल्करको गद्दी दिलवाई। मुल्करजीके बाद तुक्कोजी राव हुल्कर राजा हुये जिनके पुत्र महाराज शिवाजी राव हुल्कर स० ई० १९०३ में राजपाट अपने बालक पुत्रको सौंप वनको पधारे।

मलिक मुहम्मद जायसी (भाषाकाव्य पद्मावतके कर्ता)-ये महात्मा साधू अवध प्रदेशान्तर्गत जैस नामक ग्रामके वासी थे। जैस आजकल्ह "अवध रुहेल खण्ड रेल्वे" का एक स्टेशन है और बनारससे प्रायः १२१ मील दूरहै। अमेठी (सुलतानपुर) के राजाका प्रथम पुत्र इनकी दुआसे हुआथा, एवं राजाने अमेठी गढ़के साम्हने इनकी कबर बनवादीथी जो अबतक विद्यमान है। स० ई० १५४० में पद्मावत इन्होंने सम्पूर्ण किया। ग्रिअर्सन साहिब इनकी कविताकी बड़ी प्रशंसा अपने ग्रंथमें करतेहैं। इनके उस्ताद अशरफ़ जहांगीर तथा शेख़ बुरहाँ थे। शेरशाह सूरभी इनका आदर करता था।

मलूकदास (प्रसिद्ध महात्मा)-ये वर्णके ब्राह्मण प्रयाग प्रदेशान्तर्गत कड़ा मानिक पुरके वासी बड़े सिद्ध पुरुष हुयेहैं। वि.सं. १६८५ में इनका जन्म हुआथा। एकदफे इनके मित्र मुरारीदास वैष्णवने जो इनके स्थानसे २० कोस पूर्व गंगातटरहतेथे भण्डारा किया परंतु मनुष्य बहुत आजानेसे सामिग्री पूरी नहीं हुई। जब मलूकदासको योगबलसे यह बात मालूम हुई तौ उन्होंने एक तोड़ेपर मुरारीदासका नाम लिखकर गंगाजी में जाकर छोडदिया और कहा "हे गंगे! इसे मुरारीदासकेपास अभीपहुंचादीजिये,क्योंकि मनुष्य ठीक समयपर नहीं पहुंचासकेगा"। मुरारीदास उससमय अपने घाटपर स्नानकररहेथे, तोडा उनके पैरमें लगा, जानगये कि मलूकदासका भेजाहुआहै और सब साधुओंको अच्छी तरहसे भोजन करादिया। मलूकदासजी रामोपासकथे और रामानन्दीयसम्प्रदाय के महन्त कील्हजीके प्रधान शिष्यथे। इनका एक स्वतंत्रमत प्रचलितहै जिसके अनुगामी हजारोंहैं। वृंदावनमें केशीघाटपर इनकी सम्प्रदायकी मुख्य गद्दीहै जिसपर अबतक महन्तलोगहैं। मलूकदासने दूर २ तीथाकी यात्रा कीथी, जगन्नाथपुरीमें महाराजके भोगके साथ इनके नामका रोटीका टुकडा प्रत्येक यात्रीको अबतक बँटताहै। अनेक फुटकर पद और दशरत्न तथा ज्ञानबोधनामक ग्रंथ इन्हींके रचेहुयेहैं। वि० सं० १७३९ में परलोकगामीहुये। निम्नस्थ प्रसिद्ध दोहा इन्हींकाहै:-

दो०-अजगरकरैंनचाकरी, पक्षीकरैं न काम।
दासमलूकाकहिगये, सबकेदाताराम॥

महावीरप्रसादद्विवेदी (भाषा कवि)-दौलतपुर ग्राम जि० रायबरेलीमें सुरसरीतट कान्यकुब्ज पंडित हनुमन्त द्विवेदीरहितेथे,जिनके सुत पं०रामस-

हायके घर वै० शु० ४ वि० सं० १९२१को पं०महावीरप्रसादका जन्म हुआ। आप अंग्रेजी,हिंदी, संस्कृत, उर्दू, फार्सी,बंगला इत्यादि भाषाओंकेज्ञाताहैं,कुछदिनोंतक पहिले राजपुताना-मालवा- रेलवेके डिस्ट्रिक्टसुपरिन्टेन्डेन्टकेदफ्तरमें क्लार्क भी रहिचुकेहैं। पश्चात्स्वतंत्रजीवन व्यतीतकरनेकी इच्छासे नौकरीछोड़ झांसीमें बस रहे और सरस्वतीनामकमासिक पत्रिका हिंदीमें सम्पादनकरने लगे जो आजकल जारीहै और प्रतिष्ठितदेशीसमाचारपत्रोंमें गिनी जातीहै। आपकेगद्यलेखजैसेउत्तम होतेहैं वैसेही पद्यभी। आप आजकलकेउनप्रसिद्धकवियोंमेंहैं जोखडीबोलीकीकविताका प्रचारकररहेहैं।आपकीकवितामेंकेवलरसहीनहींहै वरन्शक्तिभीहै। संस्कृत श्लोकभीआपकेबनायेअच्छे हैं। प्रसिद्ध तथा माकूलपुरुषोंमें आपकीगणनाकीजातीहै। भामिनीविलास, कुमारसम्भव, गंगालहरी, यमुनालहरी, महिम्नस्तोत्रकाअनुवादआपने भाषापद्यमेंकियाहै। अनेकऔरग्रंथभीगद्यपद्यमें आपकेरचेहुयेहैं। २८ अगस्ट सन्१९०२ तककी रचीहुई आपकी फुटकरकविताका संग्रहभी "काव्यमंजुषा" नामसेछपगयाहै।

महावीरस्वामी (जनियोंके २४ वें अर्थात्अन्तिमतीर्थंकर)-ये महात्माबुद्धके समसामयकथे और उनके पीछेतक जीतेरहेथे। इनके बाप मगधनरेशने इनकानाम सिद्धार्थरक्खाथा और महावीरकी उपाधि इनकोदीथी। माता पिताकेबाद ३० वर्षकीउम्रमें बड़े भाईनन्दीवर्द्धनकोराजपाटसौंप इन्होंने कुछदिनोंतक तीर्थोंमें भ्रमण किया और १२ वर्षतक ऋजुवालकनदीके तीर चित्तएकाग्रकरनेका साधनकरके जिनत्वको प्राप्तहुये। पश्चात् जैनधर्मका उपदेश करते हुये देशदेशान्तरोंमें विचरना शुरूकिया और अपने अनेक शिष्योंको इधर उधर उपदेश करनेकेलिये भेजा। मुख्यशिष्य इनके ११ थे जो गणधर कहिलातेहैं। इनकेधर्मउपदेशोंसे मुग्धहोकर १ लक्ष श्रावक (गृहस्थजैन) और १४ हजार श्रमण (विरक्तजैन) होगये। महावीर स्वामी वर्षके ८ महीने उपदेश करते विचरते थे और बर्सातके ४ महीने किसी नगरमें निवासकरते थे। ७२ वर्षकी उम्रमें ५२७ वर्ष पू० स० ई० कार्तिक शु० ३० स्वाति नक्षत्रमें उषःकाल इनका देहांत हुआ। इन्होंने कोईग्रंथ नहीं बनाया लेकिन इनके चेलोंने इनके उपदेशोंको एकत्रकरके अनेक ग्रंथ रचलिये जिनको जैनलोग आगम कहिते हैं। बर्द्धमानगुरु, जैनस्वामी, जैनगुरु तथा निर्ग्रंथनाथ भी इनके नाम हैं।

महिमूदगज़नवी-ग़जनीके बादशाह नासरुद्दीन सुबक्तगीके घर स० ई० ९६७ में पैदाहुआ और स० ई० ९९७ में तख्तपर बैठा। इसने ३३वर्षके राज्यकालमें अपने छोटेसे राज्यको पश्चिममें ईरानतक और पूर्वमें पंजाबतक

फैलाया और १७ हमले हिंदोस्तानपर किये, जिनमेंसे ८ हमले तौ केवल पंजाबहीपर हुये। पंजाबकाराजा जयपाल तथा उसका पुत्र अनङ्गपाल परास्त होकर मारागया और अनङ्गपालका पुत्र जयपाल द्वितीयभी स० ई०१०२२ में परास्त होगया, इसकेबाद पंजाबपर महिमूदका अधिकार होगया। १२ वाँ हमला महिमूदने शहिर मथुरापर स० ई० १०१८–१९ में किया, मंदिर मकान ढादिये, २० दिनतक शहिरको लूटा, १०० ऊंटोंपर लादकर लूटका माल गज़नीको भेजा और ५००० से अधिक मनुष्योंको कैदीकर्के लेगया। स० ई० १०२६–२७ में १६ वाँ हमला सोमनाथ महादेवके मंदिरको खण्डित करनेके लिये गुजरातपर हुआ। राजपूत राजे दलबल सहित देवस्थानकी रक्षाके लिये भाडटे, ३ दिनतक घोर युद्ध हुआ जिसमें राजपूत परास्त हुये और महिमूदने करोड़ों रुपयेकी जवाहिरात लूटली। पश्चात् महिमूदने अपनी राजधानीके बनाउ सुधारमें चित्तलगाया। महिमूद लालचीथा उसने कवि फ़िर्दौसीको प्रत्येक शेर (दोहा)के बदले १ अशर्फी देनेका वायदा कर्के शाहनामा नामक अपने वंशकी तवारीख फार्सी में रचवाई थी लेकिन जब वह बनकर ६० हजार शेरोंमें तैय्यार हुई तौ वायदेके खिलाफ़ महिमूद प्रतिशेर अशर्फीके बदले रुपया देनेलगा लेकिन कवीश्वरने लेनेसे इन्कार किया और महिमूदकी निन्दापर पद्यरची (देखोफ़िर्दौसी)। अंत समय महिमूदने सबधन, दौलत, जवाहरातका अपने साम्हने ढेरलगावाया और अपनी सेना, घोडा, हाथी इत्यादिकोंको अपने साम्हने बुलवाया और उनको देखकर रोया और कहा "हाय इतने थोड़े समयके लिये यह सब। बटोराथा"। एकदफे किसी मनुष्यकी माताने महिमूदसे जाकर प्रार्थना की कि मेरे बेटेको ईरानकी सड़क पर लुटेरोंने मार डाला है। महिमूदने उत्तर दिया कि वह स्थान हमारी राज धानीसे इतनी दूर है कि हम कुछ प्रबन्ध नहीं करसकते। यह सुन बुढियाने कहा कि यदि प्रबन्ध नहीं हो सकता तौ इतना राज्य क्यों बढ़ाया। महिमूदने कायलहोकर ईरानकी सड़क पर कारवाँकी हिफाजतके लिये गारद मुकर्रर किया और लुटेरोंको नष्ट करवा दिया।

महेशचंद्र न्यायरत्न, सी. आई. ई. पं० महामहोपाध्याय–स. ई. १८८७ में महारानी विक्टोरिया की जुबिलीके अवसरपर आपको ब्रिटिश गवर्नमेन्टने महामहोपाध्यायकी उपाधि प्रदानकीथी जिसके प्रभावसे लार्ड साहबके दर्बारमें राजा महाराजाओंके पास कुर्सी मिलती है। संस्कृत कालिज कलकत्ताके प्रिन्सिपेल बहुत दिनों तक रहिकर आपने पेन्शनपाई है। जो कुछ प्रतिष्ठा आपकी भारतकी विद्वान मंडलीमें है वह आपकी पदवी न्यायरत्नसे प्रकट ही है। तन मन धनसे आपने संस्कृतविद्याके प्रचारका उद्योग किया है, अपनी जन्म भूमिके ग्राममें निज व्ययसे एक हाई स्कूल खोला है जिसमें

संस्कृत तथा अंग्रेजी साथ२पढाई जातीहै अनेक लड़कैंभी आपके उद्योगसे आपकी जन्म भूमिके ग्राम तक बनगई हैं। इन सबकामोंके उपलक्षमें बृटिश गवर्नमेंटने सं. ई. १८८१ कीसाल सी. आई. ई. की उपाधि आपको दीथी। आपकी जन्मभूमि जिला हवड़ाके नारित नामक ग्राममें है। आपके पिता हरि नारायण तर्कसिद्धान्त तथा आपके चचा गुरुप्रसाद तर्कपञ्चानन और ठाकुरदास चूड़ामणि प्रसिद्ध पंडित थे। पंडित महेशचंद्र अनेक प्रतिष्ठित सभाओंके मेम्बर हैं। मम्मटकृत काव्य प्रकाशकी टीका, मीमांसा दर्शन भाष्य, कृष्ण यजुर्वेद भाष्य, मृच्छकटिकनाटककी व्याख्या, दयानन्दकृत वेदभाष्यकी व्याख्या, लुप्तसम्वत्सरकी व्याख्या आपने रची हैं। आपके १ पुत्री तथा निम्नस्थ तीनपुत्र हैं जिन्होंने बृटिश गवर्नमेंटकी चाकरीमें बड़े २ ऊंचे पद पाये हैं:- मन्मथनाथ विद्यारत्न, एम्. ए.। मुनीन्द्रनाथ भट्टाचार्य, एम. ए., बी. यल.। महीमनाथ भट्टाचार्य, बी. ए.।

स. ई. १८०३ में पं०महेशचंद्रन्यायरत्न विद्यमान हैं।

महादेव गोविन्द रानडे–देखो रानडे।

माघ पंडित (शिशुपालवध महाकाव्यके कर्ता)–इनके दादे सुप्रभदेवजी गुजरात नरेश धर्मदेवके मंत्री थे और इनके बाप का नाम दत्तकजी था। माघजी बड़े भारी पंडित हुये, ये श्रीमालपुर (गुजरात) में रहिकर विद्वानों तथा कंगालोंको खूब धन बाँटते थे और बड़े मान्यवर तथा धनाढ्य कवि थे। धारा नगरीके राजा भोज इनके समकालिक थे परंतु ये विना बुलाये उनके दर्बारमेंभी कभी नहीं गये। भोज इनकी दानकीर्ति सुन कर स्वयं इनसे मिलने एक दफे गया था। माघजीकी जन्मपत्री में एक ज्योतिषीने लिख दिया था कि इस कविको दिन२ अधिक धन प्राप्त होगा, अन्तमें इसके पैरों पर सूजन आवेगी और ये दरिद्री होजायगा। बहुतकालपाछे माघजीकी जन्मपत्रीमें वर्णी हुई दशा होने लगी और यहाँ तक रङ्क होगये कि खाने तकको न रहा परंतु भिक्षुकोंकी भीड़ उसहालतमेंभी द्वार पर लगीरहितीथी। एकदिन कंगालोंकी भीड़ द्वारपर देख माघने कहा.

श्लो०–दारिद्र्यानलसन्तापः शान्ति संतोषवारिणा।
दीनाशाभङ्गजन्मा तु केनायमुपशाम्यतु॥

पश्चात् बहुत दुःखीहो माघजी धारा नगरीको पधारे और अपनी स्त्रीके हाथ स्वरचित काव्य ग्रंथ राजा भोजके पास भेजा। राजाने पुस्तकको देख ३ लक्ष रुपया कविकी स्त्रीको देकर सन्मान सहित विदा किया। जब माघकी स्त्री महिलके दरवाजेसे निकली तब राजाके द्वारपाल उसको देख माघ कविकी

बड़ी प्रशंसा करने लगे। माघकी स्त्रीने सब धन उनको देदिया और रीते हाथ घरको लौट आई। इससे थोड़ेही दिनों पीछे धारानगरीमें माघ पंडित का शरीर छूटगया और उनकी स्त्री सती होगई। राजा भोजने दोनोंकी अन्त्येष्टि क्रिया की, इससे प्रतीत होताहै कि अपुत्रथे। शिशुपालवध जिसको माघ काव्यभी कहिते हैं पञ्च महाकाव्योंमें सर्व्वोत्तमम है। "काव्येषुमाघः" यह उक्ति यथार्थहै। माघकाव्यमें राजनीति आदि विषय बड़ी उत्तमतासे निरूपण किये गये हैं। सबतरहके शब्द प्रयोग और भाषा शैलीका परिज्ञान उसके पढ़नेसे हो जाता है। एक अनुभवी पंडितका कथन है कि "नवसर्गगते माघे नवशब्दो न विद्यते"। निम्नस्थ श्लोकसे माघजीकी कविताकी सर्व्वोत्तमता प्रकट होती है:-

श्लो०-उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः॥

माधवजी सेंधिया स०ई०१७५०कीसाल२०वर्षकी उम्रमें शिंघलपुरकी जागीर इनको निजपिता रानोजीसेंधियासे मिलीथी। यह बड़े पराक्रमीथे निदानइन्होंने थोड़ेहीकालमें बहुतसा मुल्कजीतकर उज्जैनको अपनी राजधानी बनाया। फिर तो दिन२इनका प्रताप बढ़तागया, यहांतक कि सर्वत्रभारतपर इनकाआतङ्कबैठगया और यदि चाहते तो सहजहीमें हिंदोस्तानके सम्राट् बन बैठते परंतु ऐसा इन्होंने कभीनहीं विचारा। दिल्लीके मुगल सम्राट्शाह आलमने शक्तीहीन होनेकेकारण इनको अपना बेटाबना लियाथा और येभो धर्म पगसे न डिगनेवाले मरहटावीर उस बलाविहीनको सदैव अपना शहन्शाह मानतेरहे। पूनाका पेश्वाभी इनके प्रतापके आगे कुछ करनसकताथा परंतु ये उसकोभी प्राचीनपृथाके अनुसार अपना मुखिया मानतेरहे। इनकेसिवाय हिंदोस्तामें उनदिनों अनेक और छोटे २ राजाओं, नवाबों का राज्य था परंतु उनमेंसे कोईभी इनका सामनाकरनेलायक नथा। स०ई०१७६१ की साल माधौजी बड़ीवीरतासे पानीपतके युद्धमें लड़ेथे। पेश्वा पूनाके दरबारके बड़े २ कर्मचारीगण कहाकरतेथे कि "माधजवजी बड़ा साहसी, चतुर तथा वीर शासकहै"। स्वदेशभाषाके सिवाय उर्दू, फ़ार्सीभी खूबपढ़ेथे और बड़े हिसाबी थे। मिलनसारतोथे ही, आधीनकर्मचारियोंका अपराध बहुधा क्षमाकरदियाकरतेथे परंतु रणसे मुहमोड़े हुये कायरोंको कड़ादण्ड अवश्यदेतेथे। स०ई१७९४में ज्वरसे पीड़ितहो कर पूनाके समीप एकगांवमें देवलोकगामीहुये। भाईके पौत्र दौलतरावसेंधिया इनके उत्तराधिकारीहुये। दौलतरावसेंधियाने ग्वालियरको अपनीराजधानी बनाया

माधवाचार्य-कुर्ग देशके पश्चिम भागमें उड़पीपुर नामक ग्राम है, जहां स० ई० की १४ वीं शताब्दीमें मायणजी दुबेके घर श्रीमतीजीके उदरसे माधवाचार्यका जन्म हुआ। ये भारद्वाज गोत्री थे। इन्होंने तथा इनके भाई सायणाचार्य (विद्यारण्यस्वामी) ने मिलकर ऋग्वेदभाष्य, ऐतरेयब्राह्मणभाष्य. और

तैत्तरीयसंहितापर भाष्य रचेथे क्योंकि इन भाष्योंके प्रत्येक अध्यायके अंतमें "इति सायणाचार्यविरचित माधववेदार्थप्रकाशे ... ... इत्यादि" लेख मिलताहै। बडेहोकर माधवजी कर्नाटिकके राजावीरबुक्क राजाके दरबारमें जिसकी राजधानी विजयानगरमेंथी.प्रधानमंत्री तथा कुलगुरुके पदको प्राप्तहुयेथे। वीरबुक्कके बाद उसके पुत्र हरीहरने माधवको जयन्ती पुरका गवर्नरनियत किया था, इस पदको प्राप्त होकर माधवने गोआका घेरा किया और स० ई० १३७० में वहांसे उपद्रवी तुर्कोंको मारभगाया और सप्तकोटीश्वर नामक शिवलिंगकी (जिसकोतुर्कोंने नष्टकरदियाथा) स्थापनाकी। स० ई० १३८१ का अङ्कित एक दानपत्र मिलाहै जिसमें लिखाहै कि सूर्यग्रहणके अवसरपर वैशाखके महीने में महामंत्रीश्वरमार्गप्रवर्तकाचार्य श्रीमन्माधवाचार्यने माधवपुरनामक ग्रामबसाकर २४ ब्राह्मणोंको दानकर्के दियाथा। अन्तमें माधवने गायत्रीका अनुष्ठान किया और प्रत्यक्ष दर्शन न पानेपर सन्यासी होगये। सन्यासी होतेही गायत्रीने दर्शनदेकर कहा कि "वर मांग"। उत्तरमें माधवने कहा "मातु मैं सन्यासी होगया हूं अब कुछ इच्छा नहीं रखता, परंतु एक प्रार्थना है कि इस देशमें एक पहर सुवर्णकी वर्षा करदो"। इतना कहतेही सुवर्णकी वर्षा होने लगी, उस वक्तके वर्षे सुवर्णखण्ड पुतली तथा हुण्ड अबतक मालवा इत्यादि दक्षिणीय देशोंमें मिलते हैं। पश्चात् माधवने ब्रह्म सम्प्रदायका प्रचार किया और माधुर्य निष्ठासे राधामाधव युगल रूपके ध्यान पूजनके लिये कई पद्धतें बनाई।

इनके मतानुगामी दक्षिणमें बहुतहैं और द्वैतवादी होकर ईश्वर तथा जीवको अलग २ मानतेहैं। निम्नस्थ ग्रंथ इनके रचेहुयेहैं:-

मीमांसाशास्त्रपर न्यायमालाविस्तार और जैमिनीयन्यायरत्नाधिकरणमाला; धर्मशास्त्रमें कालमाधव, पराशरमाधव, आचारमाधव और व्यवहारमाधव; व्याकरणमें धातुवृति; आयुर्वेदमें माधवनिदान; काव्यमें संक्षेप शंकरविजय; सर्व शास्त्रोंपर सर्व दर्शनसंग्रह। माधवनिदानकी गणना लघुत्रयीमें है और विद्वान् वैद्य उसके विषयमें कहितेहैं कि-

श्लो०-निदाने माधवः प्रोक्तः सूत्रस्थाने तु वाग्भटः।
शारीरे सुश्रुतः प्रोक्तः चरकस्तु चिकित्सके॥

खोजकरनेसे विदित हुआहै कि, सन्यासी होकर माधव तथा उनके भाई सायन दोनोंहीने अपना नाम विद्यारण्यस्वामी रक्खा। इन दोनों भाईयोंमें मेल मिलाप प्रशंसनीय था।

माधवानल (प्रसिद्ध संगीतज्ञ)-पुष्पवतीनगरी (मध्य प्रदेश बिलारी) के राजा गोविंद रावके दर्बारमें वि० सं० ९१९ के लगभग माधवानल ब्राह्मण रहिताथा जो संगीतादि अनेक शास्त्रोंका ज्ञाता होकर बड़ा स्वरूपवान्था।

पुष्पवतीकी सब सुंदरियें उसपर मोहितथीं, यह देख अनेक मनुष्योंने राजासे जाकर शिकायत की, निदान राजाने माधवानलको अपने राज्यसे निकाल दिया। तब तौ माधवानल कामवतीके राजा कामसेनके दर्बारमें चला गया और सन्मान प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ क्योंकि राजा गाने बजानेका रसिकथा। कामसेनके दर्बारमें कामकन्दला नामक वेश्या अत्यंत सुंदरी तथा अपने काममें परमचतुरथी, माधवानल उसीपर मोहित होगया एवं कामसेननेभी माधवानलको अपने राज्यसे निकाल दिया। उन दिनों उज्जैनकी गद्दीपर विक्रम नामधारी कोई नरेश राज्य करतेथे और शरणागतकी प्रार्थना पूर्ण करनेके लिये प्रसिद्ध थे, माधवानलने इन्हींके दर्बारमें जाकर शरणली। विक्रमने माधवनलकी दशापर दया करके राजाकामसेनपर चढाई की और उसको परास्त करके माधवानलको कामकंदला दिलवादी। पश्चात् विक्रमकी आज्ञासे माधवानल और कामकन्दला पुष्पवतीमें जारहे, माधवानलने वहां अपनी प्राणवल्लभाके लिये एक महिल बनवाया जिसके खण्डैर डाक्टर राजेंद्रलाल मित्र यल. यल. डी. के लेखानुसार अबतक मध्य प्रदेश जि० बिलारीमें विद्यमान है। अनेक संस्कृत तथा भाषाकवियोंने इन दोनोंके प्रेमकी कहानीके विषयमें नाटक रचे हैं।

माधौराव (राजा, सर, टी. माधौराव, के. सी. यस. आई)–कुम्भकोणम् (तंजोर) में स. ई. १८२८ की साल जन्मे। इनके बाप रङ्गाराव महाराष्ट्र ब्राह्मण तंजोर राज्यम दीवान थे। माधौरावने स. ई. १८४१ से १८४६ तक मदरास विश्वविद्यालयमें पढकर अव्वलदर्जेकी सनद पाई। पश्चात् कुछ दिनोंके लिये मदरास विश्वविद्यालयमें गणितशास्त्रके अध्यापक रहे और स. ई १८४७ से ४९ तक एकौन्टेन्ट जेनरल मदरासके दफ्तरमें क्लार्क रहे। पश्चात् गवर्नमेंटने इनको ट्रावन्कोरके राजकुमारोंका शिक्षक नियत किया, यह काम इन्होंने ऐसी योग्यतासे किया कि, जिसके पुरसकारमें राज्यके दीवान पेश्कारका पद इनको दियागया। इस पदपर रहिकर इन्होंने अपने कार्यसे राजा, प्रजा तथा गवर्नमेंट सबहीको प्रसन्न रक्खा जिसके उपलक्षमें स. ई १८६६ की साल गवर्नमेंटने इनको के. सी. यस. आई. का खिताब दिया। स. ई. १८७२ में इन्होंने ५००रु. मासिककी पेन्शनली, इससे कुछ दिन बादही गवर्नमेंटने इनको इन्दौर राज्यमें दीवान नियत कर्के भेजदिया, इसपदपर दो वर्षभी नहीं रहिने पाये थे कि, गवर्नमेंट-आफ-इन्डियाने इनको राज्य बड़ोदामें दीवान नियत कर्के भेजा। बृटिश गवर्नमेंटका इनपर विश्वास था और जिन २ राज्योंमें ये रहे वहांके नरेशोंने इनकी प्रतिष्ठा तथा प्रशंसा की। स० ई० १८७७ में गवर्नमेंटने इनको राजाकी पदवी दीथी। बम्बई तथा मदरास विश्वविद्यालयने इनको मेम्बर बनाया था। अंग्रेजी भाषा लिखने तथा बोलनेकीशक्ति इनमें अद्भुत थी। ये सच्चे

पक्षपात रहित, परिश्रमी तथा मुस्तैद पुरुषथे। वर्तमानकालमें इनकी समान राजनीतज्ञ तथा सुप्रबन्धकार हिंदोस्तानमें कोई दूसरा नहीं हुआ। स. ई. १८९० में परलोकागमी हुये।

माधौराव सेंधिया (महाराजा आलीजाह, सर माधौराव सेंधिया, जी० सी० यस्० आइ०, यल० यल० डी०, ग्वालियर नरेश)–महाराजा जीवाजीराव सेंधियाके पुत्र स. ई. १८७७ में जन्मे और स. ई. १८८६में गवालियरकी गद्दी पर बैठे। श्रीमान्‌के बालकालमें कौंसिल आफ-रिजेन्सीका इन्तजामरहा। श्रीमान् संस्कृत तथा अंग्रेजीके पूर्ण ज्ञाता हैं, सैर शिकारके रसिक हैं और चतुर, उत्साही तथा अनुभवी नरेशोंमें गिनेजाते हैं। रेलका यञ्जिन चलानाजानते हैं और फोटोकी तस्वीरें उतारनेमें सिद्धहस्त हैं। सम्राट् एडवर्ड सप्तमके राज्याभिषेकके अवसर पर आप इङ्गलैंड पधारे थे और वहां पर ५० हजार रुपये उस सभाको चन्देमें दिये थे जिसका मुख्य उद्देश हिंदुस्तानियों तथा अंग्रेजोंमें मेलझोल बढ़ानेका है। उसी अवसर पर कैंब्रिज विश्वविद्यालयने आपको यल. यल. डी. की उपाधि दीथी। राज्यमें अनेक नये स्कूल आपके समयमें खोलेगयेहैं, और स्त्रीशिक्षाकाभी उद्योग कियागयाहै। पार्सीकी जगह नागरी अक्षरोंका स्वराज्यके दफ्तरोंमें व्यवहारकरनेका हुक्म दे आपने मातृ भाषाका बड़ा उपकार कियाहै। आपके राज्यका विस्तार २९०४६ वर्गमील, वस्ती ३० लाख ३० हजार मनुष्य, सेनामें ५५०४ सवार ११०४० पैदल और ४८ तोपेंहैं। श्रीमानकी सलामी अंग्रेजी अमलदारीमें तोपके १९ फैर और स्वराज्यमें २१ फैरोंकीहै। ब्रिटिशगवर्नमेंट आपके सुप्रबन्धसे प्रसन्नहै और आप स्वयं प्रसन्नचित्त नरेशहैं। परमेश्वर आपको चिरायूकरे।

माधोसिंह सवाई (महाराजा सवाई, सर माधौसिंह, जी. सी. यस. आई. जयपुरनरेश)–महाराजा रामसिंहके दत्तक पुत्र हैं। स. ई. १८६१ में जन्मे, स. ई. १८८० में गद्दीपर बैठे और दोवर्षके बाद राजपाटका पूरा अधिकार पाया। राजकाजमें श्रीमान् "यतो धर्म्मः ततो जयः" इस किम्वदन्तीका प्रयोग करतेहैं और निजपूर्वजोंके धर्मपर दृढतासे आरूढ़हैं। आपको गोपालजीका इष्टहै। जयपुरमें माधवसागर नामक तालाव और वृन्दावनमें गोपालजीका बड़ा भारी मन्दिर आपने बनवायाहै। महाराज रामसिंहने जितने सुधार राज्यमें कियेथे उन सबको आपने पुष्ट कियाहै और अनेकनये सुप्रबन्धभी कियहै। आप बड़े अनुभवी तथा परिश्रमी नरेशहैं, कितने दिनोंतक राज्यका सब काम आपने बिनादीवानके किया था। प्रजापालनका सदैव चिन्तवन रखतेहैं। राज्यके कर्मचारी तथा प्रजा और ब्रिटिशगवर्नमेंट आपसे सबही प्रसन्नहैं। पुराने

नौकरोंकी आप प्रतिष्ठा करतेहैं। और देशियोंको स्वराज्यमें चाकरी देनेकी सुविधा करतेहैं। संस्कृत तथा अंग्रेजी अध्ययनकी प्रजाके लिये जितनी अनुकूलता आपके राज्यमें है उतनी कदाचित् किसी दूसरे सर्कारी अथवा रजवाड़ेके कालिजमें नहींहै। राज्यकी ओरसे छात्रवृत्तियां देकर महाराजाकालिजमें बी. ये., यम. ए. तककी शिक्षा विना फीसलियेही दीजातीहै और कारीगरीके कालिजमें नानाप्रकारकी दस्तकारी सिखलाई जातीहै। देशीशिक्षित पुरुषोंके मिलते हुये किसी परदेशीको राज्यमें चाकर नरखनेकी आज्ञादेकर भी आपने निजप्रजाका उपकार कियाहै। सम्राट् एड्वर्ड सप्तमके राज्याभिषेकके अवसरपर इङ्गलैंडजाकर आपने अत्यंत प्रतिष्ठा पाईथी और भेंटमें दियेहुये आपके रत्नजटित खड्गसे सम्राट् बहुत खुशहुये थे। इससफ़रमें आपका खर्च भी बहुत पड़ा था क्योंकि आप अकेला जहाज़ किरायाकरके इङ्गलैंडको पधारे थे और "स्वधर्मेनिधनंश्रेयःयके सम्बंधमें परधर्मे भयावहः" इस वाक्यका स्मरणकरके व्ययका कुछ ख्याल नहीं कियाथा। जयपुरके महाराजा कछवाहे राजपूतहैं जिनकी उत्पत्ति महाराज रामचंद्रके पुत्र कुशसेहै। राज्यका विस्तार१४४६५वर्ग मीलहै जिसमें२५लाख३४हज़ार मनुष्योंकी वस्तीहै। वार्षिक आय १२ लाख पौंडहै और सवार पैदल सब मिलाकर २१५०० फौजहै। जयपुर राजधानीकी समान आजदिन हिंदोस्तानमें कोई दूसरा शहिर नहीं है, शहिरकी गलियें तथा बाज़ार बहुत चौंड़ाहै, पानीके नल जारीहैं, गैसकी रोशनी होतीहै, जलवायु अच्छाहै, और अजायबखाना इत्यादि अनेक स्थान देखने योग्यहैं। अंग्रेजी अमलदारीमें महाराजकी सलामी तोपके १९ फैरोंकी और स्वराज्यमें २१ फैरोंकीहै। परमेश्वर ऐसे धर्मात्मा नरेशको चिरायुकरै॥

मान्धाता (सूर्य्यवंशीनरेश)—यह चक्रवर्ती राजा अत्यंत प्राचीन समयमें हुऐ। राजा युवनाश्व इनके पिताथे। इनका वंशवृक्ष महाराजा सूर्य्यके वृत्तान्तमें देखो। ओखीमठ (गढ़वाल)में महाराजा मान्धाताने तपकरके परम सिद्धि प्राप्त की थी (देखो स्कंदपुराण, केदारखण्ड, उत्तरभाग, २४ वां अध्याय)। ओखी मठका प्राचीन नाम मान्धाताक्षेत्रहै और वहांपर महाराज मान्धाताकी एक बड़ी मूर्ति है। अन्तमें मधुवनके राक्षस राजा लवणपर माहाराज मान्धाताने चढ़ाई की, लेकिन मारे गये। बहुत समय पश्चात् मधुवनको दशरथ पुत्र शत्रुघ्नने विजयकिया और. वहां मधुरा (मथुरा) नामक नगर बसाया (देखो वाल्मीकीय रामायण उत्तरकांड सर्ग ६७).

मानसिंह कछवाहे—(हफ्तहजारी महाराजा मानसिंह, मिर्जाराजा, फर्जन्द दौलते मुगलिया). आपके समान प्रतापी, वीरनरेश मुगल बादशाहों तथा बृटिशगवर्नमेन्टके वक्तमें कोई दूसरा नहीं हुआ। आप हिंदूधर्मके स्तंभथे और गौतथा ब्राह्मण आपके समयमें सुखसे जीवन व्यतीत करतेथे। दर्बार अक-

बरीके नवरत्नोंमें आपकी गणनाहै । आमेरअम्बर आपके समयमें जयपुरराज्य की राजधानी थी । आप राजा भगवानदासके दत्तकपुत्र थे । स०ई०१५३५ में आपका जन्महुआ था । राजा भगवानदासके जीतेजीही बादशाह अकबरने आपको परमपराक्रमी जान खीचीवाड़ेका हाकिम नियतकिया थाऔर पश्चात् दलबल सहित चित्तौड़नरेश महाराना प्रतापसिंहकें दमनकरनेके लिय भेजाथा । घोरसंग्राम करकें आपने महारानाको परास्त किया जिसके उपलक्षमें बादशाहने आपको स्यालकोट (पंजाब) का हाकिम नियतकिया । पश्चात् जब बादशाह, अकबरके भाई मिर्जाहकीमने काबुलसे सिन्धमें आयकर उपद्रव किया तौ महाराजा मान उसको दमनकरणार्थ भेजेगये । सिन्धपहुंच आपने मिर्जाहकीमको मारभागायां, इसके उपलक्षमें आपके पिता राजा भगवानदास (भगवन्तदास) को पंजाबकी सूबेदारी तथा सिपहसालारी दी गई । स० ई० १५७३ में तूरानके बादशाहका काबुलपर चढ़ाई करनेका विचार सुनकर अकबरने आपको काबुल भेजा, वहां पंहुच आपने बादशाही आतङ्क सबपर बिठलादिया और पांचवर्षपर्य्यंत काबुल तथा जाबुलकी सूबेदारीपर रहिकर अफ्गानिस्तानकी लड़ाकूपठान प्रजाको अत्यंत कठोर दण्ड देदेकर खूब ढीलाकिया । कहिते हैं कि, पठान लोग आपका नाम सुनते कांपते थे, उनमें टोपीकी जगह पगड़ी और पायजामेकी जगह धोती (तम्मान) पहिरनेकी चाल जो अबतक प्रचलित है आपहीके हुक्मसे जारी हुई थी । बादको आपकी बदली विहारकी सूबेदारीपर होगई,वहां भी आपने पांचवर्ष रहिकर पठानोंको दमनकरके बंगाल तथा उड़ीसामें बादशाहकी ढाक बैठादी । स० ई० १८८८ में राजा भगवानदासके स्वर्गवासी होनेपर बड़े समारोहसे आप गद्दीपरबैठे और बादशाहने आपको महाराज तथा फर्जंददौलतेमुगालियका खिताब और पञ्चहजारीका मनसब दिया । पश्चात् हफ्तहजारीका उच्चमनसब आपको मिला । बादशाह अकबरके दर्बारमें किसी अन्यसर्दारकी इज्जत आपके समान नहीं थी । विजय आपसे वचनहार गई थी जिधर भेजेगये जीतहीके लौटे । ब्रह्माके राजाको जिसने बंगालपरचढाई की थी आपने दरियाई लड़ाई में परास्त किया । बादको बादशाह अकबरने अपने पौत्र सुलतान खुसरो (शाहजहाँ) का अतालीक आपको नियतकिया और शाही दर्बारमें आपका बहुत कुछ अधिकार बढाया।अकबरके बाद जहाँगीरनेतख्तपर बैठकर आपको बंगालकी सूबेंदारीपर भेजा और एकही वर्ष पीछे दक्षिणकी सूबेदारीपर बदली करदी । इसीपदपर रहिते हुये स० ई० १६२२ के लगभग एलिचपुरके समीप आपने परलोक गमन किया। आपके कई सौ रानियें थीं जिनमेंसे प्रत्येकके दोदो तीन तीन या इससे भी ज्यादह बच्चे थे । कई रानियोंने आपके साथ सत किया । आपके ज्येष्ठपुत्र जगतसिंहका देहांत आपके साम्हने होगया था । उनके नामसे आपने अम्बरमें बहुत बड़ा मंदिर बनवा-

याथा और उसमें मीराजीके ठाकुर गिर्धरगोपालको, जिनको चित्तौड़ विजय करनेके समय आप वहांसे ले आये थे, जगत प्रभूनामसे पधराया था। आपके पुत्र भाऊसिंहजी आपके उत्तराधिकारी हुये। गोवर्धनमें मानसी गंगाका तालाव, वृन्दावनमें गोविन्ददेवका नौ मंजिला मन्दिर, बनारसमें मानमन्दिर आकाश लोचन तथा पञ्चगंगा घाटकी पाषाणकी सीढियें और अम्बरमें मनसादेवी इत्यादिके मन्दिर आपके बनवाये हुये अबतक विद्यमानहैं। महाराज मानज्योतिष इत्यादि शास्त्रोंके ज्ञाता होकर बड़े दातार थे और गुणी जनोंका खूब सत्कार करतेथे। हरिनाथकविको आपने निम्नस्थ दोहेपर १ लक्षरूपया इनाम दियाथाः-

दो०-बलिबोई कीरति लता। कर्णकरी द्वै पात॥
सींची मान महीपने। जब देखी कुम्हलात॥

गंगइत्यादि अनेक और कवीश्वरोंको भी आपने निहाल कियाथा। आप बड़े हृष्ट पुष्ट तथा बलवान योधाथे। आपका धनुषबाण तथा खड्ग जो अबतक जयपुरके अजायब घरमें रक्खाहै इतना बड़ा और भारी है कि आजकलके बड़े २ पहिलवान उनको बड़ी कठिनाईसे दोनोंहाथ लगाकर उठा सकते हैं।

मानसिंह (ग्वालियरनरेश)-ग्वालियरके वर्तमान राज्यवंशसे आपका कुछ सम्बन्ध नहीं था क्योंकि इस वंशके मूलरोपणकर्ता राणोजी सेंधिया बहुत पीछे हुये हैं। मानसिंहजी जिनका चरित यहां लिखा जाता है तोमरवंशी राजपूत थे। स० ई० १५१८ में इनकी मृत्यु और बेटा विक्रमजीत इनका उत्तराधिकारी हुआ। धुर्पदराग इन्हींका निकाला हुआ है। प्रसिद्ध रानी मृगनयनी इनकी धर्मपत्नीथी (सो देखो)।

मानसिंह (अवधनरेश)-आप बड़े नामवर तथा योग्य नरेश हुयेहैं, बड़े भाईके होते हुये गद्दीके योग्य समझे गये थे। आपके पिता महाराज दर्शनसिंहने अयोध्यामें स्वर्गद्वार घाट तथा उसके पूर्व पश्चिमके घाटोंकी सीढियें पत्थरसे बनवाई थीं और अयोध्याके उत्तम मंदिरोंमेंसे एक सुन्दर शिखरदार पञ्चरत्न मंदिर बनवाकर दर्शनेश्वर शिवलिंग तथा गणेश पार्वती आदि अन्य देवताओंकी स्थापना की थी। आपके पूर्वज बादशाही फौजमें सेनापतिथे। राजामानसिंह संस्कृत, हिन्दी, फार्सी, अंग्रेजीके अच्छे पंडितथे, भाषाकविताभी आपकी कहीहुई खूबही है जिसमें "द्विजदेव"नामसे पदपूर्ती की है। आपका रचा शृंगार लतिका नामक उत्तम ग्रंथ स०ई०१८५०में संपूर्ण हुआ था। अवधके रईसोंमें बृटिशगवर्नमेंट आपको सबसे अधिक योग्य समझती थी। अयोध्यामें हनूमानगढीके सामने आपकी रानीका बनवाया हुआ राजद्वार नामसे प्रसिद्ध, अठ पहिला,

शिखरदार एक बडा मन्दिर है, जिसमें सीतारामकी स्थापना है । अन्तमें राजा मानसिंहने अंग्रेजी आईन भी पढ़ा था। स०ई० १८७३ में आपका देवलोक हुआ पुत्र आपके नहीं था इसी लिये आपके दौहित्र वर्तमान अयोध्या नरेश महाराज प्रतापनारायणसिंह आपके उत्तराधिकारी हुये (सो देखो)।

मानसिंह राठौर (जोधपुरनरेश)–महाराजा भीमसिंहके बाद स० ई० १८०४ में गद्दीपर बैठे। राना उदयपुरकी कन्या भीमसिंहजीको मँगीथी परंतु वे विवाहहोनेसे पहिलेही सिधार गये । तबतौ रानाने अपनी कन्या कृष्ण कुमारीका विवाह जयपुर नरेशके साथ ठहिरादिया लेकिन महाराजा मानसिंहने जोधपुरकी गद्दीपर बैठकर रानासे कहिला भेजा कि कृष्णकुमारी पहिले हमारे भाई भीमसिंहको मंगी थी अब हम उनकी जगह हैं एवं उसकी शादी हमसे होना चाहिये। इस बातपर जयपुर तथा जोधपुरके राजाओंमें बिगड़गई (देखो कृष्णकुमारी) । अमीरखाँ पिंढारियोंके सर्दारने बीचमें पड़कर दोनों राज्योंको क्रमशः ढीला किया।सच्च है, आपसका झगडा बुरा, गैरोंकी बन पड़ती है। अन्तमें वृटिश गवर्नमेंटने झगड़ा चुकाया और स० ई० १८१८ में जोधपुर राज्यने झगड़ोंसे तंग आकर वृटिश गवर्नमेंटका आधिपत्य स्वीकार किया। स० ई० १८४३ में महाराजमानसिंहका निस्सन्तान देवलोक होगया और उनकी रानियें सती होगई । सर्दारोंने मिलकर तख्त सिंहको जो जोधपुरके पूर्वनरेश अजीतसिंहके पुत्र थे गद्दीपर बिठला दिया। इन्हीं तख्त सिंहके पौत्र वर्तमान जोधपुर (मारवाड़) नरेश सर्दारसिंहजी हैं । महाराजमानसिंह बड़े साहसी थे, एकदफे उन्होंने लंकापर चढाई करनेका विचार किया था तब दर्बारके कवीश्वरने निम्नस्थ दोहा पढ़कर आपको रोका थाः–

दो०–रघुपति दीनी दान, विप्र विभीषण जानिके ।
मानमहीपत मान, दियो न किम लीजिये ॥

मालदेव–(राव मालदेव जोधपुर नरेश)–ये परम पराक्रमी राठोर महोदय स० ई० १५३२ में गद्दीनशीन हुये । उस समय इनका राज्य केवल ४।५ परगनोंमें था परंतु इनके सौभाग्यसे राणा साँगाजीके मरनेसे मेवाड़का राज्य निर्बल हो रहा था और हुमायूं तथा शेर शाहके बीच युद्ध होनेके कारण दिल्लीकी बादशाही भी ढीली हो रही थी। ऐसा सुअवसर पाकर राव मालदेवने आगरा तथा दिल्ली की तलहिटीतक ५२ परगनों पर अधिकार कर लिया और बीकानेर, मेड़ता इत्यादि कई राज्यभी छीन लिये जिससे वहांके लोग शेर शाहके पास पुकारू हुये। यह देख इन्होंने सिन्धसे हुमायूंको शेरशाहके साथ लड़नेको लाया। हुमायूंके साथियोंने मारवाड़ में आकर गोवध किया और उधर शेर

शाहने भी रावसाहबको लिखा कि, यदि आप हुमायूंको पकड़कर मेरे हवाले कर दोगे तौ मैं गुजरात फतेह कर्के आपको देदूंगा, निदान रावसाहबने हुमायूंको उलटे पैरों लौट जानेको कहिदिया लेकिन उसको पकड़ाभी नहीं। इस बातसे नाराज होकर शेरशाहने रावसाहबपर चढ़ाई की, ८० हजार सेना लेकर रावसाहबने उसका साम्हना किया लेकिन कई नमकहराम सर्दारोंका शेरशाहसे मिल जाना इनकी पराजयका कारण हुआ। साम्हर झीलकी आमदनीसे राव साहबने जोधपुरका राजभवन तथा अनेक किले बनवाये थे। ये अपने समयके राजपूत नरेशोंमें महाबलीथे। बादशाह अकबरके समयमें भी अन्य राजपूतों की समान इन्होंने उससे मेल जोल निजदेहमें प्राण रहिते नहीं किया। जोधबाई के मरने पर अकबरने राजपूतोंकी प्रथाके अनुसार सब राज्योंमें राजपूत नरेशोंकी दाढ़ी मूंछ मूंड़नेके लिये नाई भेजे। जब नाई जोधपुर दर्बार में पहुंचा तौ राव मालदेवने उसको निकलवा दिया और कहाकि, "शेरोंकी मूंछ कौन मूंड़ सकताहै"। अकबरने यह सुन उपद्रव बढ़जाने के भयसे राव साहबको मनालिया। स० ई० १५८४ में राव मालदेवका देहाँत हुआ और राव उदय सिंह उनके उत्तराधिकारीने अन्य रजवाड़ोंकी चालके अनुसार दिल्लीके तख्तको डोला देनेकी रसम जारी की।

मात्र गुप्त पंडित—ये कश्मीर प्रान्तसे उज्जेन नरेश विक्रमादित्य हर्षके दर्बारमें गये थे। विक्रमने इनकी बुद्धिकी परीक्षा करनेके लिये प्रथम कुछ सत्कार नहीं किया परंतु ये राजाको स्वच्छंद गामी, गुण ग्राही जान राजसेवा निज देहकी समान करते रहे। राजाके प्रसन्नालापकरने पर फूल नहीं जाते थे और क्रुद्ध होनेपर श्रद्धाहीन नहीं होते थे। राजद्वेषियोंसे बात नहीं करतेथे। राजदासियोंकी ओर आंख उठा कर नहीं देखतेथे और न नीचों की बातें राजाके साम्हने कहितेथे। राज निन्दक बहुतेरा बहिकाते थे और आदर पूर्वक राजसेवकी विफलता दिखातेथे परंतु ये किसीकी नहीं सुनते थे। इसी प्रकार सेवा करते २ जब १२ महीने होगये तौ एकदिन शरद ऋतुमें आधीरातके समय राजाने जागकर पवनके झकोरोंसे दीपककी बत्तियें हिलती देख आवाज दी कि "कोईहै"। बाहरसे भीतर तक सब नौकर पड़े सोतेथे केवल मात्रगुप्त जागते थे। राजाकी आज्ञा पाय तुरन्त भीतर गये और बत्तियें सम्हाल जाड़ेसे कांपते हुये ज्योंही बाहर जाने लगे कि, राजाने पूंछा "इस वक्त क्या बजा है"। मात्र गुप्तने उत्तर दिया कि, दो बजे हैं फिर राजाने पूंछा कि "इस वक्त सब नौकर सो रहे हैं तुमको क्यों नहीं निद्रा आई"। मात्रगुप्तने तुरंत दो श्लोक उत्तर में पढ़े जिनका आशय यह था कि "मुझ प्रदेशी, अन्न वस्त्र विहीन ब्राह्मणको महाराजके दर्बारमें पड़ेहुये शरद

ऋतु लौटकर आगई, घरबारकी कुछ सुधि नहीं पाई और मेरीभी कुछ सुरत न निकली, इसी चिन्ताके कारण मुझको निद्रा नहीं आई। श्लोकोंको सुनकर राजाने मात्रगुप्तसे जानेको कहदिया लेकिन विचारने लगा कि,इस ब्राह्मणका सत्कार अवश्य करना चाहिये। कश्मीर मंण्डलका राज्य उनदिनों खालीथा निदान प्रभात होतेही राजाने मात्रगुप्तको अनुशासनपत्र देकर कश्मीरभेजदिया और वहांके दीवानमंत्रीने पत्रके देखतेही उनका राजतिलक करदिया। गद्दीपर बैठकर राजा मात्रगुप्तने कश्मीरके अमूल्य फल फूल तथा शाल दुशाले महाराजविक्रमकी भेंटके लिये भेजे और लेजानेवाले दूतको १ श्लोकभी लिखकर दे दिया जिसका आशय यह था कि "महाराज! आपके चित्तका कृपाभाव मन, वाणी, चक्षुद्वारा किसीतरह प्रकट नहीं होताहै परंतु आप कृपा करते हैं एवं आपकी कृपा भी विलक्षणहै"। ८ वर्ष ९ महीने पर्य्यंत राज्य भोगनेके पीछे राजा मात्रगुप्तने महाराजविक्रमके देवलोक होनेकी खबर सुनकर राज्यत्यागदिया और सन्यासीहो काशीको चलतेहुये रास्तेमें राजाप्रवरसेन जिसके चचाके मरनेसे कश्मीरका राज्य खालीहोकर मात्रगुप्तको दियागयाथा मिला। प्रवरसेनने मात्रगुप्तको बहुत समझाया और कहा कि अब आप मेरी तरफसे कश्मीरका राज्य करें लेकिन उन्होंने येही उत्तरदिया कि जिस सुकृतिके प्रभावसे हम राजपदको पहुँचेथे वह अब इस संसारमें नहीं है। प्रवरसेनने कश्मीरकी गद्दीपर बैठकर बहुतसे मुल्क जीते लेकिन कश्मीर मंडलकी आमदनी सदैव मात्रगुप्तके पास काशी भेजदेतेरहे (देखो प्रवरसेन)। मात्रगुप्त इस गलेपड़ी लक्ष्मीको साधु ब्राह्मणोंको बाँट देतेथे और आप भिक्षाकर्के भोजन करतेथे। इसप्रकार १० वर्ष और जीकर काशीमें स्वर्गवासी हुये। राजा मात्रगुप्त ओछेचित्तके आदमी न थे,गद्दीपर बैठकर उन्होंने आज्ञा प्रचारकरादीथी कि कोई किसीतरहकी हिंसा न करै उनकी आज्ञासे सोने चांदीके टुकड़े दीन गरीबोंकोलड्डूओंमे मिलाकर गुप्तरीतिसे दिये जातेथे।मात्रगुप्तके बनाये श्लोकोंको देखकर येही कहे बनताहै किवे बडे भारी पंडितथे। मेन्ठ कविने "हयग्रीववध" नाटिक रचकर उनकी भेंट किया था और इनाममें थाल भर सुवर्ण पायाथा।

मिल्टन (जान मिल्टन–John Milton) इनके बाप वकिंघमशायर (इङ्गलैंड) के रहिनेवाले बड़े अमीरथे।जान मिलटनने केम्ब्रूज विश्वविद्यालयमें शिक्षा सम्पूर्ण करनेके पश्चात "कोंमस"आदि पांचकाव्य अंग्रेजी पद्यमें रचकर प्रसिद्धिपाई। स. ई. १६३७ में इन्होंने फ्रान्स तथा इटेलीकी विलायतोंमें यात्राकी, स. ई. १६४३ में इङ्गलैंड आकर अपना विवाह किया, स. ई. १६५२ में इनकी मेम तीन कन्यायें छोड़कर मरगई एवं इनको दूसरी शादी करनीपड़ी। दो वर्ष पीछे इनकी दूसरी मेमभी चलबसी एवं इनको कुछही दिनोंबाद तीसरी

शादी करनीपड़ी। बादको ये अंधे होगये, उसीहालतमें इन्होंने "पैरेडायज़ लास्ट" नामक प्रसिद्ध अंग्रेजी काव्य रचकर स. ई. १६६७ में छपवाया।

उक्तकाव्यको मिल्टन बोलते गयेथे और उनकी बेटियें लिखती गईथीं और उसके छपनेपर मिल्टनकी आँखें दैवकृपासे खुलगईथीं। नेत्रपाकर मिल्टनने "पैरेडायज़रीगेण्ड" नामक काव्य रचा। मिल्टनकी कविता अत्यंत कठिनहै और उसमें ग्रीक तथा रोमनकथान्तरोंका समावेश बहुतायतसे हुआहै। अंग्रेजीकवीश्वरोंमें ये सर्वोत्तम गिनेजातेहैं। ये बड़े स्वरूपवान होकर सङ्गीत विद्याके पूर्ण ज्ञाताथे। स. ई. १६०२ में जन्म, स. ई. १६७४ में मृत्यु।

मीरजाफिर जटल्ली—येनारनौल (पटियाला) के रहिनेवाले सैयद थे। मुगल सम्राट औरंगजेबके शहिजादे आजमशाहके पास बहुत दिनों तक नौकर रहेथे। फार्सी तथा उर्दूमें प्रहसन युक्त कविता करते थे। रेखताओं में उर्दू शाहिनामा इन्हींका बनाया हुआहै। अन्तमें जब फर्रूख सियर दिल्लीके तख्तपर बैठातौ उस अवसर परइन्होंने एक निन्दा युक्त कविता की थी निदान बादशाह फर्रूखसिअरने इनका सर, धड़से जुदा करवा दिया।जटलका क़िये मिलाना ऐसी तुकें मिलानेको कहिते हैं कि जिनके सुननेसे हसा आवे।

मीराँबाई—जोधपुर राज्यान्तर्गत मैड़तेके राव रतनसेनकी बेटी थी और राणा साङ्गाके कुँवर भोज राजको वि०सं० १५७३ में विवाही गई थी। भोजराज कुँवर पनेहीमें सिधारकर मीराँको विधवा करगये थे। मीराँके नैहरका कुल वैष्णव था और मीराँ भी बालकालहीसे गिर्धरनागर (श्रीकृष्ण) की भक्तिमें लवलीन थी। इसी लिये उसको पतिवियोगकाभी कुछ दुःख नहीं हुआ था। विधवा होनेके बाद मीराँ अपना समय भगवद्भजन तथा साधुसेवामें सहर्ष बितातीथी लेकिन इन बातोंसे लोकनिन्दा होते देख मीराँके देवर रतनसिंह, विक्रमाजीत तथा उदयसिंहने जो राणा साङ्गाजीके बादक्रमशः चित्तोड़ (मेवाड) की गद्दीपर विराजे, मीराँको अनेक प्रकारसे रोका। लेकिन उसने एक नमाना। अन्तमें सुसरालियोंके उत्पीड़नसे दुःखीहोकर मीराँ अपने नैहरको मैडते चलीगई और वहांसे कुछ दिनों पीछे वृन्दावनको सिधारी और कईवर्षतक व्रजमें नितनये पद बना २ कर गाती हुई विचरतीरही वृन्दावनमें अकबर बादशाह तानसेनको साथलेकर मीराँके दर्शनको गये थे। पश्चात् मीराँ वृन्दावनसे द्वारिकापुरीको पधारी और वहां रणछोड़जीकी सेवामें रहिने लगी। इधर मेवाड़में मीराजीके चलेजानेकेबाद कई अकाल पड़े और दिल्लीके मुगल बादशाने भी कईदफे चढ़ाई की जिससे प्रजा तथा राणा तंग आगये। यह देख सब लोगोंने राणासे कहा कि यह दैवकोप यहांसे मीराँके दुःखी होकर चले जानेसे है। निदान राणाने मीराँको लानेके लिये ब्राह्मणोंको द्वारिका

भेजा ब्राह्मणोंनें द्वारिका पहुंच मीराँसे राणाका सन्देशा कहा लेकिन उसने जानेसे इन्कारकिया तबतो ब्राह्मणलोग मीराँके द्वारपर अन्नजलत्याग धरनादेकर बैठे । इससे अत्यंत दुःखी होकर मीराँने ब्राह्मणोंको चलनेकी आज्ञादी और रणछोड़जीके मंदिरमें जाकर निम्नस्थपद गायाः-

पद-ज्यों जानौ त्यौं लीजै स्वजन सुधि ज्यों जानौ त्यौं लीजै।
तुमबिनुमेरे औरनकोऊ कृपा रावरी कीजै।
बासा भूषण नैन न निद्रा तन तौ पल पल छीजै।
मीराँके प्रभु गिधर नागर मिलबिछुड़न नहिं कीजै।

जब मीराँको बहुत देर हुई तब ब्राह्मणोंने मंदिरमें जाकर देखा लेकिन मीराँको कहीं नहीं पाया, मीराँकी साडी रणछोडजीमें लिपटी पाई, मीराँतौ लीन होगई, गिर्धर लालजीने अपने भक्तकी करुणामय विनती सुनकर उसको अपना लिया । रागगोविन्द तथा जयदेवकृत गीतगोविन्दका भाषा पद्यमें तिलक मीराँने रचाथा जो अब नहीं मिलते । सैकडों फुटकर पद मीराँके रचे देश भरमें प्रसिद्ध हैं और भक्तिभावसे भरपूर हैं । चित्तौड़में मीराँका बनवाया गिर्धर लालजीका बहुत बड़ा मंदिर अबतक विद्यमान है, लेकिन मूर्तिशून्य है । खोज करनेसे मालूम हुआ कि मानसिंह कछवाहेने जब चित्तौड़ विजय किया था तौ वह गिर्धर लालजीको आमेरमें ले आये थे और वहां जगतप्रभूनामसे बड़े भारी मंदिरमें उनको पधराया था । कर्नैल टाड साहबने राजपुतानाके स्वरचित अंग्रेजी इतिहासमें रानाकुम्भूके मंदिरके पास चित्तौड़में मीराँबाईका मंदिर देखकर भ्रमसे यह लिख दिया है कि मीराँबाई कुम्भू की रानी थी ।

मुनीश्वरजी (गणक)– इनके पितारङ्गनाथजी सूर्य्य सिद्धांतके टिप्पणीकार एलिचपुरान्तर्गत दधिनामक ग्रामके वासीथे । दूसरा नाम इनका विश्वरूपकर था, वि० सं० की १७ वींशताब्दीके भीतर इनका समय है । निष्टार्थदूती नामक लीलावतीकी व्याख्या, मरीचिनामक सिद्धाँतशिरोमणिकी व्याख्या, पाठीसार और सार्वभौम इनके रचे ग्रंथ हैं ।

मुबारिक कवि–ये भाषा कवि बिलग्राम जि० हरदोईके रहने वाले थे । जातिके मुसलमान थे और वि० सं० १६४० में विद्यमान थे । अर्बी, फारसी संस्कृत तथा हिंदीके अच्छे विद्वान थे । अलक (जुल्फ) शतक तथा तिलक शतक इनके रचे ग्रंथोंके दोहे देखने लायक हैं ।

मुर्शिद कुलीखाँ (बंगालका नवाब)–यह प्रथम ब्राह्मण था, पीछे मुसलमान होगया था । फारिसमें गुलाम करके पाला गया था । औरंगजेबकी मृत्युकी साल स० ई०१७०७में बंगालका नवाब था । इसने ढाकेसे राज-

धानी बदलकर अपने बसाये मुर्शिदाबादमें कायम कीथी। २१ वर्ष राज्य करके अपने जँवाईको बङ्गालका राज्य दे मरा।

मुरारी मिश्र—अनर्घराघवकाव्यकी प्रस्तावनाके अनुसार ये मौद्गल्य गोत्रोत्पन्न भट्ट वर्धमानके पुत्र थे।·कई मीमांसा ग्रंथ तथा अगत्व निरुक्त। प्रायश्चित्त मनोहर और अनर्घराघव काव्य इन्होंने रचे थे। प्रसिद्ध पंडित कुमारिल भट्ट इनके गुरु थे।

मुहम्मदसाहब (मुसल्मानोंके पैगम्बर)—शहिरम क्का (अरब) के एक सभ्य वंशमें अबदुल्लाके घर सं० ई० ५७० में जन्मे। माता पिताकी मृत्यु बचपनहीमें होजानेके कारण चचा अबूतालिबने आपको पाला था। १५ वर्ष की उम्रतक आप भेड़ें चराते रहे थे तथा शुतुर्वानी करते रहे थे। २५ वर्षकी उम्रमें आपने ४० वर्षकी खदीजा नामकी एक अमीर विधवासे शादी की। जो ६५ वर्षकी उम्रमें कई बच्चे छोड़कर मरगई और इतना धन दौलत छोड़ गई कि आप मक्कामें सबसे बड़े अमीर होगये। आपको स्वदेशकी दीनी हालत देखकर बड़ा शोक होता था एवं आपने शोच विचार कर कुरान रचा और उपदेश करना शुरू किया। थोड़ेही दिनोंमें मक्का तथा मदीनामें बहुतसे लोग आपके मतानुगामी हुये। मक्कामें हरसाल एक मेला हुआ करता था। एकसाल इस मेलेमें आपके अनुयायी बहुतसे आदमी मदीनासे आये और आपको अपने साथ ले गये। इसी साल से मुसल्मानोंका सन हिजरी शुरू हुआ है। मदीना पहुंच आपने एक मसजिद तथा कितनेही मकान बनवाये और कई औरतोंसे शादीकी जिनमेंसे एक ७ वर्षकी थी। पश्चात् आपने युहूदियोंके शहरोंपर कई दफे हमले किये और तलवारके जोरसे उनको मुसल्मान किया और उनका अटूट धन लूटा। फिर आपने दूर २ बादशाहोंके पास मुसल्मान होनेके लिये पत्र भेजे। किसी औरने तो कुछ ध्यान नहीं दिया लेकिन मिश्रदेशके हाकिमने दो लौंडियें तथा एक खच्चर नजरके लिये भेजा। सं० ई० ६३० में आपने शहिर मक्काको फतेह किया और वहांके ३६० मूर्तियोंके एक मंदिरको तोड़कर मसजिद बनाया तथा मक्काके रहिनेवाले सब लोगोंको तलवारके जोरसे मुसल्मान करालिया। अपना महत्व प्रकट करनेके लिये आपने उंगलियोंसे पानी बहाया, चंद्रमाके दो टुकडे करके अपनी आस्तीनोंसे निकाले और जानवरों तथा दरख्तोंसे अपनेको पैगम्बर पुकरवाया। सं० ई० ६३१ में १३ दिनकी बीमारीके बाद केवल फातिमा नामक बेटीको छोड़कर कूंचकर गये। फातिमाकी शादी अलीके साथ हुई थी जिससे हसन और हुसेन दो बेटे थे। शाम तथा अरबका सर्वत्र देश और मिश्रदेशका अधिकांश आपके सामने मुसल्मान होगयाथा।

मुहम्मदगोरी—देखोशहाबुद्दीन।

मुहम्मदबहादुरशाह (दिल्लीके सबसे पिछले मुगलबादशाह)–निज पिता अकबरशाह द्वितीयके बाद स० ई० १८३७ में दिल्लीके तख्त पर बैठकर नाममात्रके बादशाह हुये। सन ५७के गदरमें इन्होंने भी बागियोंका साथ दिया और अपने नामका सिक्का चलाया। उपद्रव शान्त होनेपर बृटिश गवर्नमेंटने इनका मुल्क खालसा कर लिया और १२ लाख रुपयेकी वार्षिक पेन्शन देकर रंगून मुल्क ब्रह्मामें कैद करके भेज दिया। इनकी दो बेगमें एक शाहिजादा तथा एक पोता इनके साथ गया और इनके दो शाहिजादों तथा एक पोतेको लार्ड कैनिङ्ग वायसराय हिंदने गोलीसे मार दिया। मुहम्मद बहादुरशाह फार्सी तथा उर्दूमें कविता भी करते थे और इसमें अपना नाम जफर रखते थे। इनका बनाया दीवान दिल्लीमें छपा था।

मूककवि सार्वभौम–ये द्रविड देशवासी जन्मान्ध दरिद्री थे, जब इनके निर्वाहका ठिकाना कहीं नहीं लगा तो काञ्ची पुरीमें कामाक्षा देवीके मंदिरमें जापड़े। इस मंदिरमें विद्याकी इच्छासे एक ब्राह्मण बहुत दिनोंसे तप करता था, एक दिन अर्द्धरात्रिके समय भगवतीने वेश्याके रूपमें प्रकट होकर कहा "वरमाँग"। विद्यार्थीने भगवतीको वेश्या समझ अपने तप बिगडनेके भयसे कहा कि यदि तुम मेरी इष्ट देवी भगवती हो तो मुझे उसी स्वरूप से दर्शन दो। देवी यह सुन तुरन्त लौट पड़ी और रास्तेमें उस मूक अन्धेको पड़ा देख ठोंकरसे जगाया। मूक जब जागकर चिल्लाने लगा तो देवीने उसके मुंहमें पीक डालदी जिसके प्रभावसे वह बड़ा कवीश्वर होगया। स्वा० शंकराचार्यने सौन्दर्य लहिरीके निम्नस्थ श्लोकोंमें इस कथाका उल्लेख किया हैः–

श्लो० कदाकाले माता कथय कलितालक्तकरसं ।
पिबेयं विद्यार्थी तवचरण निर्णेजनजलम् ॥
प्रकृत्या मूकानामपिच कविताकारणतया ।
यदा दत्ते वाणीं मुखकमलताम्बूलरसताम् ॥

इनका जीवनकाल वि० सं० की ७ वीं शताब्दीके लगभग प्रतीत होता है। 'पंचशती' इनका रचा ग्रंथ है।

मूसा–(यहूदियोंके पैगम्बर)–हजरत ईसासे पहिले भूमण्डल के सर्वत्र पश्चिमी भागमें आपका मत प्रचलित था। स० ई० से प्रायः दो हजार वर्ष पहिले इबराहीमके वंशमें आपका जन्म हुआ। बादको हजरत ईसाभी इसी वंशमें पैदाहुये। इबराहीम इसराईल जातिके थे जो किसी आपत्तिके कारण अरबसे मिश्रमें जा बसेथे। पश्चात जब इसराईलोंकी सन्तति गिनती में बहुत बढ़गई तो मिश्रके बादशाहने हुक्म दिया

कि उनके शिशु नष्ट करदिये जायाकरें । इसी आज्ञा प्रचार के समयमें उमराके घर मूसा जन्में माताने बादशाहके भयसे इनको सन्दूकमें बन्द करके नदीमें बहादिया । दैवयोगसे सन्दूक बादशाहकी बेटीकी नजर पडा, उसके कोई बच्चा नहीं था एवं उसने इनको पाल लिया और मूसा नाम रक्खा । शब्द मूसाके अर्थ इवरानी भाषामें पानीसे निकाले हुये के हैं । बड़े होकर मूसाने मिश्रके किसी मनुष्यको मारडाला और बादशाहके भयसे जङ्गलको भागगये जहां किसी किसानके ढोरचरातेरहे। कुछ दिनों बाद उसी किसानकी लड़कीसे आपकी शादी होगई । पहिले बादशाहके मरने पर जब फ़िरौन मिश्रके तख्त पर बैठा तौ मूसा भी वापिस आये, फ़िरौनसे इनका इतना मेलमिलापबढ़ा कि उसने इनको अपना वजीर बनालिया। ऐसे उच्चपद परभी पहुँचकर इनको सदैव शोकही रहिताथा क्योंकि बादशाहकी तरफ़से इसराईल जातिपर बड़ा अत्याचारकरनेका हुक्मथा जब इनका कुछ वश नचला तौ इन्होंने बादशाहसे यह हुक्म दिलवादिया कि इसराईल लोग मिश्रसे निकल जावें । यह आज्ञापाय मूसा कई लाख इसराईलोंको साथ लेकर अरबकी तरफ़ चलते हुये, रास्तेमें जबलालसागरतक पहुँचेथे कि फ़िरौनै कुछ सोच विचार इनसबके पकड़नेको सेनालेकर पीछे आधमका मगर ईश्वरकी कृपासे सेना सहित नीलनदीमें डूबगया और मूसा इसराईलोंसहित पारउतर गये । अपने जीवनका शेषभाग मूसाने इसराईल जातिके सुधारने और धर्मोपदेश द्वारा अपना मत फैलाने तथा यहूदियोंकी धर्म पुस्तक जबूरके रचनेमें बिताया ।

मेटकाफ़ (सर चार्लस मेटकाफ़-Sir Charles Metcalfe)-इनके बाप ईस्ट-इन्डिया-कम्पेनीके डेरेक्टरथे।ये १५वर्षकी उम्रमें क्लार्क होकर हिंदोस्तानको आये और ८ वर्षबाद तरक्कीपाकर लाहौरदर्बारमें रेज़ीडेन्टनियतहोकर गये । स०ई०१८१९ में ईस्ट-इन्डिया-कम्पेनीके मुल्की तथा गुप्तविभागके मंत्रीनियत होकर कलकत्ते आये और एक वर्षबाद निजाम हैदराबादके दर्बारमें रेजीडेन्ट नियत होकर चले गये । इसीसाल पिताका देहाँतहोने पर बैरनकी उपाधि इनको मिली । स०ई०१८३४ में पश्चिमोत्तरदेशके प्रेसीडेन्ट (लफ़्टिनेन्टगवर्नर) नियत होकर आप आगरे आये।पश्चात कुछ कालतक गवर्नरजेनरल हिंदकी जगहपर आपने काम किया । स०ई०१८३९ में आप जमाइका द्वीपकी गवर्नरीपर गये और स०ई०१८४२ में कनाडाके गवर्नरजेनरलका ओहदा आपको दियागया। स० ई० १८५३ में पेनशनपाकर इङ्गलैंडमें आये और उचितरीतिसे राजसेवा करनेके इनाममें प्रिवी-कौंसलके मेम्बर बनायेगये । स० ई० १७८५ में जन्मे, स० ई० १८६४ में मरे ।

मेस्मरसाहब (F. A. Mesmer) ये जर्मनीके रहिनेवालेथे। वायना विश्वविद्यालयमें इन्होंने शिक्षापाकर यम.डी. का इम्तहान पासकियाथा। ग्रहोंके फलकीभी एक पुस्तक इन्होंने रचीथी। पश्चात् आत्मविद्याका इनको अनुभव हुआ जिसको मृतक हालतसे जिलाकर इन्होंने प्रकटकिया और जो इनके नामसे मेसमेरिज्म कहिलाई। ससमेरिज्म पर भी इन्होंने एक पुस्तक रचीथी। स्पर्शसे बीमारोंको चंगाकरनेकी विद्याभी जिसको मैगनेटिज्म कहिते हैं इन्होंने प्रकटकी थी और इसपरभी एक ग्रंथ रचाथा। पश्चात् इन्होंने जर्मनी, स्वीटज़रलैंड तथा फ्रांस इत्यादि देशोंमें भ्रमणकरके मैगनेटिज्मके द्वारा अनेक रोगियोंको चंगा किया। स० ई० १७३४ में जन्म, स० ई० १८१५ में मृत्यु.

मैकडोनेल (सर ऐन्टोनी मैकडोनेल, जी० सी० यस० आई–Sir Antony Macdonnel,G. C. S. I.) सिविल सर्विसकी परीक्षा इङ्गलैंडमें उतीर्ण करके मैकडोनेल साहब स० ई०१८६५में हिंदोस्तानको ज्वायन्ट मैजिस्ट्रेट नियत होकर आये। क्रमशः उन्नति करके मध्यप्रान्त तथा ब्रह्म देशके चीफ कमिश्नर हुये। पश्चात् बंगालके लफ्टिनेंट गवर्नरका पद पाया और स० ई० १८९४ में पश्चिमोत्तर व अवध देश (युक्तप्रान्त) की लफटिनेंट गवर्नरीपर आये आप जिन २ सूबोंमें रहे वहां सर्व प्रियता प्राप्त करनेमें आपने अनेक अंशोंमें सफलता पाई। आपने गवर्नमेन्टकी प्रचलित राजनीतिका अनुसरण इस प्रकारसे किया कि ऐङ्ग्लो इन्डियन समाज, भारतकी प्रजा तथा गवर्नमेंट सबही आपसे प्रसन्न रहे। आपके शासनकी ५ वर्षकी अवधि पूरी होनेपर पश्चिमोत्तर देशकी प्रजाने आपको १ वर्ष और ठहिरानेके लिये गवर्नमेंटसे प्रार्थनाकी थी जो स्वीकार हुइ। बम्बई इत्यादि सूबोंकी प्रजाने भी इसबातका आन्दोलन कियाथा कि सर ऐन्टोंनी उनके सूबेके गवर्नर नियत किये जावें लेकिन सर ऐन्टोंनी एकथे और भारतके सूबे अनेक। भारतके अन्य सूबोंकी हालत देखते यह कहाजा सकताहै कि आपने पश्चिमोत्तर देशकी प्रजाको प्लेगसे बचानेमें कोई, त्रुटि नहींकी। जहां कहीं प्लेगके अप्रबन्धसे उपद्रवकी अनी आई आपने स्वयं जाकर शान्ति स्थापनकी अन्य सूबोंकी अपेक्षा आपका अकाल प्रबन्ध अधिक प्रशंसनीय रहा। अनेक अत्याचारी देशी व फिरङ्गी कर्मचारियोंका भेद खोलकर आपने उचित दण्ड दिया। ऐसा करनेसे समस्त ऐङ्गलो इन्डियन समाज आपके विरुद्ध होगयाथा और भांति२के कटाक्ष करने लगाथा लेकिन आपने निर्भय होकर उचित कार्य सदैवही किया। यद्यपि पश्चिमोत्तर देशकी गवर्नमेंट अनेक वर्षोंसे जानतीथी कि यहांकी भाषा हिंदीहै लेकिन मुसलमानों तथा ऐङ्गलो इन्डियन समाजके भयसे किसीको न्यायकरनेका साहस नहीं होताथा। सर ऐन्टोंनीने दृढ चित्त होकर उर्दूके साथ२ प्रजाकी मातृभाषानागरीकासर्कारी कागजोंमें व्यवहार

करनेका हुक्म देकर प्रजाको कृतय २ करदिया। पश्चिमोत्तर देशके पुलिस तथा शिक्षा विभागका संशोधनभी आपके वक्तमें खूब होगया। आपके बनाये भूमिकर सम्बन्धी आईनभी बम्बई आदि अन्य सूबोंके आईनसे प्रजाके लिये दशगुणें कम हानि कारक हैं। प्रजाके भ्रम और संदेहको मिटाना आप अपना मुख्य कर्तव्य समझतेथे। ३६ वर्षतक इस देशमें कठिन परिश्रम करके स० ई० १९०१ की साल सर ऐन्टोंनी पेन्शन लेकर इङ्गलेंड को पधारे और प्रिवीकौंसलके मेम्बर हुये लेकिन कुछही दिनोंबाद आयर्लैंडके सहकारी मंत्रीका पद आपको दियागया। पश्चिमोत्तर देशके रईसों तथा प्रजागणने चन्देसे लखनऊ आदि शहिरोंमें आपके स्मारकचिह्न स्थापन किये और हिंदोस्तानके सब समाचार पत्रोंने एकस्वरसे आपको प्रजाहितैषी गवर्नर कहि करपुकारा।

मैकाले (टामस वैविङ्गटन लार्ड मैकाले–Thomas Babington Lord Macaulay) ये स्काटलैंडके एक प्राचीन प्रतिष्ठित वंशमें स० ई० १८०० की साल जन्मे। बचपनहीसे इनकी स्मरण शक्ति विलक्षण थी पाठ एक दफे पढ़नेहीसे याद होजाताथा और कविता ७ वर्षकी उम्रसे करने लगे थे। यम. ये. की परीक्षाकेम्ब्रिजकालिजसे इन्होंने स० ई० १८२६ में उत्तीर्ण की थी, पद्यरचनामें कई दफे इनाम पाया था, पश्चात वकालतका इम्तिहान पास कियाथा और पार्लियामेंटके मेम्बर होकर लार्डकी उपाधि पाई थी। स० ई० १८३४ में सुप्रीमकौंसल कलकत्ताके मेम्बर होकर हिंदोस्तानको आये और बहुत धन उपार्जन करके दो वर्ष पीछे इङ्गलैंडको वापिस गये और फिर पार्लियामेंटके मेम्बर हुये। थोडे दिन बीमार रहिकर स० ई० १८५९ में मरे। अंग्रेजीमें इनके रचे बहुतसे ग्रंथहैं जिनमेंसे एक इङ्गलैंडका इतिहास भी है। ये बडे विद्वान तथा विचार शील पुरुष थे, उन्नतिके पक्षपाती थे और निर्भय होकर उन बुराइयोंकी जो बड़े २ घरानेंमें पाई जातीहैं निन्दाकरते थे।

मैक्समुलर–(फ्रेडरिकमैक्समुलर Fredrich Maxmuller) इनकी जन्म भूमि जर्मनीमें थी और वहां इनके बाप किसी कुतबखानेके दारोगाथे। इन्होंने बर्लिन तथा पेरिसमें रहिकर संस्कृत पढ़ी थी और स० ई० १८४६ में इङ्गलैंडमें जाबसे थे। पश्चात ईस्ट-इन्डिया कम्पेनीने ऋग्वेदको श्रङ्खलाबद्ध करके छपवानेका काम इनको सौंपा और आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटीने इनको नवीन भाषाओंका प्रोफेसर नियत किया। ये अनेक भाषाओंके विद्वान होकर संस्कृतके बड़े भारी पंडितथे। हिंदुओं तथा बौद्धोंके अनेक धर्मग्रंथोंका अंग्रेजी अनुवाद इन्होंने कियाथा। ऋग्वेदकाभी अंग्रेजी अनुवाद कियाथा। केम्ब्रिज तथा एडिन्बरोकी यूनीवर्सिटीजने यल. यल डी. की उपाधि इनको दीथी। स्वा० दयानन्द सरस्वती इनको मोक्षमूल कहा करते थे। स० ई० १८२३ में जन्म, स० इ० १८९८ में मृत्यु।

मैल्कम–(सर जान मैल्कम–Sir John Malcolm)–ये युवावस्थामें इङ्गलैंडसे हिंदोस्तानमें आकर बृटिशसेनामें नौकर हुये। स० ई० १८०२ से १८०९ तक शाह ईरानके दर्बारमें बृटिश गवर्नमेंटकी तरफ़से राजदूतके पदपर नियुक्तरहे। पश्चात इङ्गलैंड को वापिस गये और पर्शिया(ईरान)का विश्वासनीय इतिहास लिखा जो स. ई. १८१२ में छपा। स. ई. १८१७ में सेनापति नियतहोकर फिर आप हिंदोस्तानको आये और मरहट्टों तथा पिन्डारियोंको अनेक युद्धोंमें परास्तकिया। स. ई. १८२१ में इङ्गलैंडको वापिसगये और स. ई. १८२७ में बम्बई के गवर्नर नियतहोकर तीसरी दफे हिन्दोस्तानमें आये। स. ई. १८३० में अन्तिम दफे इङ्गलैंड को गये और पार्लियामेंट. के मेम्बर बनायेगये। लार्ड क्लायवका जीवनचरित तथा हिंदोस्तानका इतिहास भी इन्होंने अंग्रेजीमें लिखाथा। स. ई. १७६९ में स्काटलैंडमें जन्मे, स. ई. १८३३ में मरे।

मोहनदास (भाषाकवि)–यह नैमिषारण्य के समीपकुसरथग्राममें अहिवान कायस्थ श्रीयादवके घर जन्मेथे। " स्वरोदयपवन विचार " नामक ग्रंथ इन्होंने स. ई. १६३० कीसाल गंगातट कन्नौज़में सम्पूर्ण कियाथा। उक्त ग्रंथमें योग साधनेकी क्रियाहै और स्वर, ज्ञान, आसन तथा कुम्भक आदि प्राणायामोंका वर्णनहै।

मृगनयनी–ये गुजरातकेराजा की कन्या ग्वालियरके तोमरवंशी राजा मानसिंह की रानीथी। स. ई. की १६ वीं शताब्दीके प्रारम्भमें हुई। खड्गराय इतिहासकार जो मुगल सम्राट् शाहजहांके वक्तमें हुआ लिखताहै कि " रानी मृगनयनी राजा मानसिंहकी २०० रानियों में सबसे अधिक रूपवती तथा सुंदरी थी, सङ्गीतशास्त्रमें बड़ी निपुणथी और संकीर्णरागतोउसकी समान कोई गाता-बजाता था ही नहीं "। रानी मृगनयनीकेनिकाले ४ प्रकारके राग जो गुजारी, बहोलगुजारी, मालगुजारी और मंगल गुजारी कहिलाते हैं दक्षिणदेशमें खूबप्रसिद्ध हैं।

म्हात्रे (मिष्टर गणपतिराव् काशीनाथ म्हात्रे प्रसिद्ध मूर्तिकार)–ये बम्बई के रहिनेवाले सोमवंशी क्षत्री हैं। इन्होंने बम्बई के सर जमशेदजी जीजीभाई के कारीगरी स्कूलमें चित्रकारीकी शिक्षा पाई है और घर पर बैठकर उसचित्रकारीके आधारपर मिट्टी तथा पत्थरकी मूर्तियें बनाना सीखाहै इनकी कारीगरीमें कमाल यहहै कि इनके बनाये वस्त्र तथा मूर्तियें केवल असलके चित्रसेही नहीं मिलते हैं वरन उनकी आकृतिसे भी। जैसे फोटोमें मनुष्यका हाव भाव सबही मालूम होताहै वसही इनकी बनाई मूर्तियोंमें भी। मंदिराभिमुख, सरस्वती तथा भिल्लनी आदिकी इनकी बनाई पूरे कदकी मूर्तियोंके देखनेसे सचीस्त्रीका भ्रम होताहै। बम्बईमें अनेक पार्सियोंके पाषाण वस्त्र जो इन्होंने

बनाये हैं बिलकुल असलके मुताबिक हैं। अहमदाबादमें महारानी विक्टोरियाके स्मारक फंडमेंसे श्रीमतीकी मूर्ति बनानेके लिये इन्हें १४ हज़ाररुपयेमें ठेका दियागयाथा।

इनकी बनाई मंदिराभिमुखकी मूर्तिको बंबईके कारीगरी स्कूलके प्रिंसिपेलने १२००) रु. में ख़रीदाथा। दूसरी मूर्ति सरस्वतीकी तैयार करके इन्होंने पैरिस की प्रदर्शिनीमें भेजीथी जिसके बदलेमें मूल्यके सिवाय वहांके कारीगरोंके सार्टिफिकटोंका इनके पास ढेर लगगया। तीसरी मूर्ति भिल्लनी स० ई० १९०२ के दिल्लीदर्बारकी प्रदर्शिनीके लिये इन्होंने तैयारकी थी जिसको देख विलायती कारीगरोंके सिवाय लार्ड कर्जन तक प्रसन्न हुयेथे। सर जार्जवर्ड वुड(Wood) जो देशी कारीगरीके नामी अनुभवीहैं, लिखतेहैं कि "मिस्टर म्हात्रेका मूर्ति बनानेका काम अपूर्वहै"। आपका जन्म स० ई० १८७६ में हुवाहै और आप नाम मात्रको अंग्रेजी तथा देश भाषा भी पढ़े हैं।

यदु (यादवोंके मूलपुरुष)—राजा ययाति इनके पिता थे ये ऐसे पराक्रमी हुये कि इनके वंशज इनके नामसे यादव (यदुवंशी) कहिलाये। श्रीकृष्णजी इसी यदुवंशमें हुये। कौरवोंके मूल पुरुष राजा पुरु इनके सहोदर थे। यदुने कभी राज्य नहीं किया और इनके वंशजोंमेंभी कभी कोई राजा नहीं हुआ। प्रसिद्ध नीतज्ञ पंडित शुक्राचार्य इनके नानाथे।

ययाति—महाभारत आदि पर्व १५ अध्यायमें लिखाहै कि "राजा ययाति चंद्रवंशके छठे राजाथे, राजा नहुष इनके पिताथे राजा पुरूरवा इनके परदादाथे। यादवोंके मूल पुरुष राजा यदु और कौरवोंके मूल पुरुष राजा पुरु इन्हींके दो परम पराक्रमी पुत्रथे"। हरिवंश पुराणमें लिखाहै कि "राजा ययातिने इंद्रसे स्वर्गका रथ प्राप्त करके ६ दिनमें सर्वत्र पृथ्वी तथा देवताओंको जीत लियाथा"। राजा ययातिका बनाया एक तालाब अबतक महोबा (बुंदेलखण्ड) में मौजूद है। कान्हपुरसे ४ मील पूर्व जाजमऊमें गंगा-तटपर एक टीलाहै जिसको राजा ययातिका किला कहिते हैं। राजा ययाति की २० वीं पीढ़ीमें राजा दुष्यंत हुये जिनके पुत्र भरतके नामसे इस देशका नाम भारतवर्ष पड़ा। राजा भरतके प्रपौत्र राजा हस्तीने हस्तिनापुर बसायाथा। राजा हस्तीकी१४ वीं पीढ़ीमें कौरव पांडव हुये। वाल्मीकीयरामायणके लेखानुसार महाराज रामचंद्रके वृद्धप्रपितामहका नामभी ययाति था, इनकी गणना भी सूर्य वंशके प्रतापी नरेशोंमें है।

यवनाचार्य—देखो पिथेगोरस।

याकूब--येबाबा आदमके पुत्र सामकी ११ वीं पीढ़ीमें हुये। इस हाक़ इनके बापथे और इबराहीम इनके दादा। हज़रत मूसा तथा हज़रत ईसा पश्चात

इन्हींके वंशमें उत्पन्न हुये। याकूबका दूसरा नाम इसराईलथा, इनके १२ बेटे थे जिनमेंसे सबसे छोटा यूसुफथा, पश्चात् इन्हीं बारहों बेटोंकी औलाद बहुत बढ़ जानेपर १२ जातियोंमें विभागित होगई और "बनी इसराईल" नामको प्राप्त होकर अरबदेशमें रहिनेलगी अरबमें एकदफे घोर अकाल पड़ा, उन दिनों याकूबका सबसे छोटा बेटा यूसुफ़ मिश्रमें वजीरथा निदान यूसुफने सब बनी इसराईलोंको मिश्रमें बुलालिया। ४३० वर्ष तक मिश्रमें रहिनेके बाद जब बनी इसराईल तादादमें अत्यंत बढ़गये तौ मिश्रके हाकिमने उनको अपने मुल्कसे निकाल दिया।

४० वर्षतक इसराईल लोग अरबके जंगलोंमें घूमते रहिनेके बाद शहिर किनआनमें बसरहे। पश्चात् हजरत मूसाने इसराईलोंको युहूदीधर्म ग्रहण कराया (देखोमूसा)। स. इ. से. १०९ वर्ष पूर्व इसराईलोंने इबरानी (हेबरू) राज्य स्थापन किया जिसके दूसरे बादशाह हजरतदाऊद हुये।

यास्कमुनि (वेदाङ्ग निरुक्तके कर्ता)–निरुक्तमें वेदोंके कठिन शब्दों तथा मंत्रोंकी व्याख्या है। यास्कमुनि पारस्कर देशके रहनेवाले यस्कगोत्रोत्पन्न यजुर्वेदी थे। वैशम्पायन ऋषि इनके गुरु थे और तैत्तरीय इनके शिष्य थे। यास्कमुनि अपने ग्रन्थोंमें लिखतेहैं कि यास्कनामधारी चार और ग्रन्थकार मुझसे पहिले होचुके हैं"। निम्नस्थ ग्रंथ यास्कमुनिके रचे मिलतेहैं.–"पदप्रकृतिसंहिता" जो शौनकीय ऋक्प्रातिशाख्यके सूत्रोंका आशय लेकर बनाई गईहै और सामवेदीय श्रौतसूत्र। यूरुपाय विद्वानोंके मतानुसार इनका समय स. ई. से प्राय: ९०० वर्ष पूर्वहै।

याज्ञवल्क्यऋषि–मैत्रेयी तथा कात्यायनी इनकी दो स्त्रियें थीं। "शुक्ल यजुर्वेदकी संहिता" तथा "याज्ञवल्क्यस्मृति" नामक धर्मशास्त्रका ग्रन्थ इनके रचे हुये हैं। युरूपीयविद्वानोंके मतानुसार इनका समय स. इ. से दो हजार वर्ष पहिलेहै। महाराज युधिष्ठिरके राजसूय यज्ञमें इनके उपस्थित होनेका वर्णन महाभारतमें है।

युधिष्टरअन्ध (कश्मीरनरेश)–यह राजा नरेन्द्रादित्यके पुत्र वि. सं. से १९३ वर्ष पहिले कश्मीरकी गद्दीपर बैठे। प्रथम ता कुछ दिनोंतक इन्होंने बड़ी सावधानीसे काम किया परन्तु बादको कुसङ्गतिमें पड़जानेके कारण विषयवासनामें फँसगये और लक्ष्मीमदसे मतवाले हो नीचोंकी समान योग्य पुरुषोंका भी तिरस्कार करनेलगे। इसी कारण श्रेष्ठपुरुषोंने इनको त्याग दिया और मंत्री लोगभी विगड़ बैठे। आगे प्रशंसा और पीछे अनेक प्रकारकी निन्दा होनेके कारण इनका तेज नष्ट होगया। जब इनकी ऐसी दशा दूसरे राजाओंको मालूम हुई तौ उन्होंने कश्मीरको आघेरा। मंत्रीलोग तौ द्वेषी थेही, एवं युधि-

श्वर, शत्रुओंसे युद्ध करनेमें असमर्थ हुये और अवसर पाकर रानियों तथा दासियों समेत वनको भाग गये। इनकी आंखोंसे कुछ कम दीखता था इसीलिये द्वेषियोंने ठट्ठेमें उनका नाम अन्धयुधिष्टर रखलियाथा। इन्होंने ३० वर्ष राज्य किया। इनके चरितसे यह उपदेश मिलताहै कि "समानदृष्टि होना योगीका महान् गुण है परन्तु राजाका समदृष्टि होना अपकीर्तिका हेतु होताहै"।

युधिष्ठिर महाराजा (पांडव)-यह हस्तनापुराधीश राजा पांडुके ज्येष्ठ-पुत्र रानी कुन्तीके उदरसे थे। भीम तथा अर्जुन इनके सगे भाईथे और नकुलतथा सहदेव इनके सौतेले भाई रानी माद्रीके उदरसे थे। यह पांचो भाई पांडव कहलातेथे, द्रोणाचार्यने इनको अनेक शास्त्रोंकी शिक्षा दीथी। कुछ दिनों बाद राजा पांडुके हाथसे ब्रह्महत्या होगई एवं वह राज्य अपने अन्धे भाई धृतराष्ट्रको सौंप वनको सिधारे। धृतराष्ट्रके कौरवनामक १०० पुत्रथे जो शुरूहीसे पांडवोंके साथ ईर्षाद्वेष रखते थे। जब युधिष्टर बड़े हुये तो धर्मशास्त्रकी आज्ञानुसार राजा धृतराष्ट्रने उनको युवराज नियत किया।इस बातपर दुर्योधन आदि कौरवोंने विरोध किया निदान लाचार होकर धतराष्ट्रने पांडवोंको १४ वर्षका बनवास और कौरवोंमें ज्येष्ठ दुर्योधनको युवराजका पद दिया। बनवासके दिनोंमें युधिष्टिरके छोटे भाई अर्जुनने स्वयम्बर विधिसे द्रौपदीके साथ विवाह किया जिसको निजमाताकी आज्ञानुसार पांचों पांडवोंने अपनी पत्नी बनाया। १४ वर्ष व्यतीत होनेपर पांडवोंने अपने ससुर पंजाब नरेश राजा द्रुपदकी सहायता पाकर चचा धृतराष्ट्रसे राज्यबांट देनेकी प्रार्थनाकी निदान कौरवों तथा पांडवोंके बीचराज्य बांटदिया गया जिसमें पक्षपात वश कौरवोंको बड़े २ नगर तथा धनाढ्य वस्तियें मिलीं और पांडवोंको जंगल, ऊसर तथा उजाड़ खण्ड दिये गये। राज्य बँटजानेपर महाराज युधिष्ठिरने राज्यसिंहासनपर बैठकर जमुनातट इन्द्रप्रस्थ नामक नगर बसाकर उसको अपनी राजधानी बनाया। इन्द्रप्रस्थके खरौंडर अबतक दिल्लीसे १२ कोसपर दक्षिणकी ओर पड़े हैं। १६ वर्ष राज्यकरनेके बाद महाराज युधिष्टिरने राजसूय यज्ञ किया जिससे देश देशान्तरोंमें उनका यश विस्तृत हुआ। यह बात कौरवोंको बाण समान लगी निदान उन्होंने अपनी राजधानी हस्तिनापुरमें एक द्यूतसभा स्थापनकी और उसमें युधिष्टिरको भी बुलाया। उक्त सभामें युधिष्ठिर अपना सर्वस्व हार गये और यदि धृतराष्ट्र तुरन्त आकर शान्ति स्थापन न करते तो घोर उपद्रव होजाता। पांडवोंको १२ वर्षके लिये फिर बनवासकी आज्ञा दीगई। बनवासके दिनोंमें कौरवोंने अनेक उपाय पांडवोंको बधकरनेके किये लेकिन वह बचगये। १२ वर्ष बाद वनसे लौटकर पांडवोंने अपना राज्य मांगा लेकिन कौरवोंने इनकार किया।यहीजड़ महाभारतके युद्धकी हुई जो कवि चंदकृत पृथ्वीराज रासाके लेखानुसार८१४ गतकलिमें १८

दिन पर्य्यंत कुरूक्षेत्रके मैदानमें हुआ । इस युद्धमें भारतके सब राजे महाराजे पांडवों तथा कौरवोंके तरफदार थे । अन्तमें सब शूरवीरोंका होम होकर भारतका प्राचीन गौरव नष्ट हुआ, कौरवोंकी हार हुई, और दोनों तरफके दलमेंसे केवल निम्नस्थ १० मनुष्य बचेः–

पांचोंभाई पांडव, छठे श्रीकृष्ण, सातवें सात्यकी, आठवें कृपाचार्य, नवें अश्वत्थामा और दशवें कृतवर्म्मा । राजाओं महाराजाओंके बृहद्दल को तथा कुटुम्बियोंको रणशायी हुये देख महाराज युधिष्ठिरके चित्तमें बैराग्यका उदय हुआ परन्तु श्रीकृष्णजीके बहुत समझानेपर राज्य सिंहासनपर विराजे । पश्चात् महाराजने अश्वमेध यज्ञकिया और ३६वर्ष पर्य्यंतभारत भूमिका एकछत्र धर्मराज्य किया । अन्तमें श्रीकृष्णजीके परलोक गमन करनेकी खबर पाकर महाराज अधीर हुये और निज पौत्र परीक्षितको राजपाट सौंप भाइयों तथा रानी द्रौपदी सहित दक्षिण, गुजरात, पंजाब तथा द्वारिका इत्यादिमें रोतेहुये घूमते फिरे और हिमालय पर्वतपर जाकर बर्फमें खीजगये । लेख है कि वसूधाराके बर्फमें महाराज युधिष्ठिर चलते २ ही गुप्त हुये और गिरेनहीं । विक्रमी सम्वत्से पहिले महाराज युधिष्ठिरके सम्वत्का प्रचार था । "धृतिक्षमा" आदि धर्मके १० लक्षण महाराज युधिष्ठिरमें पूर्णरीतिसे विद्यमानथे, उन्होंने कभी झूंठ नहीं बोला और न कभी कोई धर्म विरुद्ध काम किया और इसीलिये धर्मावतार कहिलाये । चंद्रवंशका राज्य केवल ३० पीढीतक और महाराज युधिष्ठिरके पीछे चला । महाराज युधिष्ठिर युगान्तरके समयमें हुयेथे ।समयने उनके वक्तमें बहुत कुछ पलटा खायाथा और रफ्ते २ मनुष्योंकी नियतमें जमीन आस्मानका अन्तर पड़गयाथा ।

उदाहरणके लिये उस समयका एक अभियोग महाभारतसे उद्धत करतेहैं–

"महाराज युधिष्ठिरके राज्यमें किसी मनुष्यने अपना पुराना मकान बेंचा मोल लेनेवाला जब मकान बनवाने लगा तौ उसमें बहुतसा गडा हुआ धन मिला । तुरन्त उसने मकानके पूर्व स्वामीको खबरदी और कहा कि यह धन आपकाहै इसे लीजिये । पूर्व स्वामीने उत्तर दिया कि मैं मकान बेंच चुका इस कारण इस धनमें मेरा कुछ सत्व नहीं । इस प्रकार झगड़ते हुये वह दोनों न्यायालयमें आये, दोनों कहतेथे कि पराये धनको हम नहीं छूसकते । समयके परिवर्तन की परीक्षा के लिये महाराज युधिष्ठिरने उस धनको राजकोषमें रखनेकी आज्ञादी और इन दोनोंसे कहदिया कि यदि तुम में से किसी को इस धन पर दावा हो तौ फिर बिचार करके आना । थोड़े ही वर्षबाद वे दोनों हाजिर होकर प्रार्थी हुये। बेंचनेवाला कहताथा कि मैंने मकान बेंचाहै नकि उसमें गडा हुआ धन । मोल लेनेवाला कहताथा कि जब मैं मकान मोल ले चुका तो बेंचनेवालेका उसकी किसी चीजपर कुछ अधिकार नहीं रहा ।

रघुमहाराजा (रघुवंशियोंके मूल पुरुष)-यह अयोध्याके सूर्यवंशी नरेश बडे प्रतापी, यशस्वी तथा परोपकारी हुयेहैं। सूर्यवंश इन्हीके नामसे रघुवंशकह लाया। इनके पिताका नाम दिलीप था। वाल्मीकीय रामायणके लेखानुसार यह सूर्य्यवंशके २६ वें राजा थे और महाराज रामचन्द्र इनसे १४ पीढी पीछे हुये। शि. पु. तथा भागवतके लेखानुसार यह महाराज रामचन्द्रके प्रपितामह थे।

रघुनाथदास बाबा(रामसनेही)-इनके बाप दुर्गाप्रशाद कान्यकुब्ज ब्राह्मण पचवारके पांडे पैंतेपुर जिला सीतापुरके रहनेवाले थे। प्रथमहीसे महाराज रामचन्द्रके चरणोंमें इनका अनुराग था। बड़े होकर इन्होंने अंग्रेजी-सेनाके गोलन्दाजोंमें नौकरीकी और अयोध्यावासी बाबा मौनीदासको गुरू किया। नौकरीकी हालतमेंभी यह सदैव हरि भजनमें लवलीनरहतेथे आखिर बन्धन मुक्तहो अयोध्यामें चले आये और भजनके प्रभावसे प्रसिद्ध साधुओंमें गिने गये अवध यात्राको आनेवाले राजे महाराजे, सेठ साहूकार अवश्यही इनसे मिलते तथा भेंट पूजा देतेथे। सदाव्रत इनके यहां जारी रहताथा और कभी २ भण्डाराभी हुआ करताथा। यह देशकालके अनुसार चलनेवाले चतुर पुरुषथे और अच्छे विद्वान् होकर भाषा कविता करनेमें निपुण थे। हरिनाम सुमिरनी तथा विश्राम सागर इनके रचे ग्रंथ देखने योग्यहैं। वि. सं. १९३९ में ६६ वर्षकी उम्रमें इनका देहांत हुआ। इनके ५ भाई औरथे जिनका वंश पैंते पुरमें है। इनके कोई औलाद नहींथी। स्त्री इनकी अयोध्याजीको इनके साथ आईथी और वहीं इनसे पहिले सिधार चुकीथी। इनके विषयमें प्रसिद्ध है कि सरकारी नौकरीकी हालतमें रामभजनमें तत्पर रहनेके कारण कई दफे इनको पहरेपर जानेकी सुधि न रही तो स्वयं रामचंद्र महाराजने इनके रूपमें उपस्थित होकर पहिरा दियाथा। भिङ्गा जि० बहरायचके राजाकी गढ़ी को जब सरकारने फतेह कियाथा तो उस अवसर पर भी यह अंग्रेजी फौजमें मौजूद थे। इसका उल्लेख निम्नस्थ कवित्तमें है:-

कवित्त।

तोपैं अष्ट पनी छपनी नौलक्खी लायके धाय चढ़ाई।
कै फुट फय्यट शृष्टिरणी जिन जायके बहुतक फैर कराई।
सूझत एक न एक कहैं रघुनाथ धुआंनभ छाई।
गोलन मार गिराय गढ़ी भिङ्गा भुङ्गा सम देत उड़ाई।

इस सम्बन्धमें प्रसिद्ध है कि धावेका हुक्म पातेही सब गोलन्दाज मोर्चेपर जा डटे केवल रघुनाथदास हरिभजनमें लवलीन होनेके कारण नहीं पहुंचसके। थोड़ी देर पीछे जब सब गोलन्दाज मारेगये तो फौजी अफसर रावर्ट साहबके

देखते २ अकेले रघुनाथदासने गोलोंकी बौछारसे वैरीदलको परास्त किया। पश्चात् जब रघुनाथदास गैरहाजिर होनेके कारण डरते कांपते साहबके सन्मुख पहुंचे तो साहबने प्रसन्न होकर कहा कि "तुमने बड़ा बहादुरीका काम किया, हम तुम्हारा दर्जा बढानेकीं रिपोर्ट करेंगे"। यह सुन रघुनाथदासके चित्तमें वैराग्यका उदय हुआ और यह सब रामचंद्र महाराजकी कृपा समझ इस्तेफा देदिया। ऐसी बातोंके प्रसिद्ध होजानेसे बाबा रघुनाथ दासकी असाधारण प्रसिद्धि तथा मानता हुई।

रघुनाथ परशोत्तम पराञ्जपे (प्रथम हिन्दोस्थानी सीनीयर रैंगलर)--यह पूनावासी एक कृषिकार महाराष्ट्र ब्राह्मणके पुत्रहैं। १८ वर्ष की उम्रमें बी०ये० पास करके इङ्गलैंडको गयेथे और वहां कई वर्ष पढ़कर इन्होंने गणितशास्त्रकी "सीनीयर रैंगलर" नामक अत्यंत उत्कृष्ट परीक्षा स. ई. १८९९ की साल प्रथम नम्बरसे पासकी। इनसे पहिले किसी दूसरे हिन्दोस्थानीने यह परीक्षा नहीं पास की थी अतएव ये प्रथम हिन्दोस्थानी सीनियर रैंगलरहैं। इस परीक्षा पास करनेकी मुबारिकबादीमें वायसराय हिन्दने इनके पिताके पास तार भेजाथा। सेन्ट जान कालिजकैम्ब्रज तथा हिंदोस्थानकी अनेक यूनीवर्सिटीजने इनको अपना मेम्बर बनाया है। इनको ५००) रुपये से भी अधिक मासिकपर दूसरी नौकरी मिल सकतीहै लेकिन सजातीय पूना कालिजमें इन्होंने १०० रु० मासिक वेतनकी नौकरी स्वीकार करके देशहितका परिचय दियाहै।

रघुनाथ शिरोमणि (नैयायिक पंडित)--यह एक दुर्दशा ग्रस्त विधवा ब्राह्मणीके पुत्रथे। पिता इनका मुखभी नहीं देख सकेथे, भिक्षा करके माताने जैसे तैसे इनका लालन पालन कियाथा।बुद्धि इनकी बचपनहीसे विलक्षणथी। जयदेव मिश्रने इनको अपनी पाठशालाकी सबसे नीचीकी कक्षामें भरती कियाथा परंतु इन्होंने थोड़ेही दिनोंमें सब छात्रोंसे आगे निकल "शिरोमणि उपाधि पाईथी। यह बङ्गालके रहनेवालेथे और वि. सं. की १२ वीं शताब्दीमें हुये। विद्या पढ़ जब यह स्वदेशको चलनेलगे तो मैथिलोंने इनकी सब पुस्तकें इस विचारसे चुरालीं कि उनके देशकी अपूर्व विद्या अन्य देशमें न पहुंचने पावे। लेकिन इनकी स्मरण शक्ति अद्भुतथी निदान "न्याय चिन्तामणि" आदि ग्रंथ इन्होंने बङ्गवासियोंको कंठसे लिखाकर पढ़ाये। "न्याय चिन्तामणि" पर इनकी बनाई "दीधिति"नामक व्याख्या सर्वोत्तम है।उदयनाचार्यकृत"कुसुमाञ्जलि"पर तथा श्रीहर्षकृत "खण्डनखाद्य" परभी इन्होंने व्याख्यायें रचीथीं। "पदार्थतत्व निरूपण" नामक ग्रंथभी इन्हींका विरचित है। बङ्गदेशमें इन्हींके उद्योगसे तर्क विद्या तथा न्याय शास्त्रने स्थिति पाई।

रघुनाथरावपेश्वा—द्वितीय पेश्वा बाजीराव १ इनके बापथे और अन्तिम पेश्वा बाजीराव२इनके पुत्रथे। जब तृतीय पेश्वा बालाजी बाजीराव दो बालक पुत्र माधवराव तथा नारायण रावको छोड़कर मरगये तो उनके छोटे भाई रघुनाथरावने अपने भतीजोंके बड़े होनेतक राजकाज संभाला। बड़े होकर माधवराव पेश्वा हुये लेकिन स. ई. १७७२ में अपुत्र मरगये और उनके छोटेभाई नारायणराव गद्दीपर बैठे। कुछही दिनों पीछे रघुनाथरावकी रानीने नारायणरावको विष खिलाकर खतम करदिया। नारायणरावके अपुत्र सिधारनेपर रघुनाथराव पेश्वा हुये लेकिन ११ महीने बाद नरायणरावकी विधवाके गर्भसे माधवराव नारायण नामक पुत्रका जन्म हुआ। पेश्वा रघुनाथरावने तो उसको हरामका ठहिराया लेकिन पेश्वाके मंत्री नाना फर्नवीसने फरासीसोंकी मददसे माधवराव नारायण-को पेश्वाकी गद्दी दिलवाई।जब माधवराव नारायण पेश्वा हुये तो रघुनाथरावको बड़ी भारी पेन्शन दीगई और उन्होंने अपनी बाकी उम्र सूरतमें रहकर काटी। पेश्वा रघुनाथराव बड़े उदार होकर गुणी जनोंके सन्मानीथे। कवि पद्माकरने निम्नस्थ कवित्त सुनाकर पेश्वा रघुनाथरावसे १ लाख २५ हज़ार रुपये दान पायेथे:-

कवित्त।

सम्पति सुमेरुकी कुबेरकी जो पावै कहूं तुरत लुटावै विलम्ब उर धारैना।
कहै पद्माकर सुहेम हय हाथिनके हलके हजारनको वितर बिचारैना।
गंज गज बकस महीप रघुनाथराव याही गजधोके कहूं तोहि दैडारैना।
याते गौरि गिरिजा गजाननको गोयरही गिरिते गरेते निज गोदते उतारैना।

रघुराज सिंहदेव, जी. सी. यस. आई.(महाराजारीवाँ)–आपके पूर्वज व्याघ्रदेव सुलंकी राजपूतने गुजरातसे आकर प्रायः स. ई. १०५७ में रीवाँ राज्य स्थापन किया था। व्याघ्रदेव बड़े प्रतापी थे निदान उनके वंशज बघेले और उनका देश बघेलखण्ड कहलाया। व्याघ्रदेवके पुत्र करण देवने और बहुतसा मुल्क विजय किया और मंडलाकी राज कुंवारीसे विवाह करके बांधौगढ़का किला पाया। करणदेवसे कई पीढ़ी पीछे विक्रमादित्य हुये जिन्होंने स. ई. १६१८ में रीवांबसाकर वहां किला बनवाया और उसको अपनी राज-धानी बनाया। अनेक पीढ़ी पीछे स.ई. १८१२ में राजा जयसिंहके समयमें रीवां राज्यने बृटिश गवर्नमेन्टका आधिपत्य स्वीकार किया।

इन्हीं महाराज जयसिंहके पौत्र तथा महाराज विश्वनाथ सिंहके पुत्र महाराज रघुराज सिंहदेव स. ई. १८२३ में जन्मे और स. ई. १८३४ में रीवाँकी गद्दीपर बैठे। महाराज रघुराजसिंह बड़े महात्माथे, निज पूर्वजोंके धर्मपर आरूढ़ रहकर रामकृष्णके अनन्य उपासकथे और श्रीमद्भागवत तथा रामायणके अनुरागीथे॥ लिखाहै कि-

दोहा०–श्लोकहु श्लोकारध नाहीं, जबलों पाठ कराहीं।
तबलों अम्बु पानहू त्यागत, पुनिका भोजन पाहीं ॥

महाराज रघुराज इस समयके भाषा कवियोंमें सर्वोत्तमथे। विद्वानोंका सत्कार करतेथे। साधु सन्तोंके सन्मानीथे। सबतीर्थोंकी यात्रा करआयेथे। दान पुण्यभी खूब कियाथा। कई दफे सोने चांदीका तुला चढ़ायाथा। राजकाजकी ओर खूब ध्यान देतेथे। प्रजापालनमें दत्तचित्त थे। राज्यके कर्मचारीगण उनसे प्रसन्न थे। बृटिश गवर्नमेन्ट उनको पसन्द करतीथी। निम्नस्थ ग्रंथ भाषा पद्यमें उनके रचे हुये हैं:-

भक्तमाला (रामरसिकावली) रामस्वयम्बर, रुक्मिणीपरिणय, जगन्नाथशतक, रघुराजविलास, यदुराजविलास, विनयपत्रिका, सुन्दर शतक और भागवत पर "आनन्दाम्बु निधि" नामक तिलक। महाराज रघुराजके समयमें रीवाँ राज्यका विस्तार १३ हजार वर्ग मीलथा। वस्ती १३ लाख मनुष्योंकीथी। सेना में ६९१ सवार, ३१३५ पैदल तथा ५५ तोपेंथी। स.ई. १८८० की सालमहाराज रघुराज सिंहदेवने परलोक गमन किया और राजकुंवर वेङ्कटेशरमण सिंहदेवजू (वर्तमान नरेश) गद्दीपर बैठे।

रङ्गाचार्य वृन्दावनके–इनका जन्म वि. सं. १८६४ में द्राविड ब्राह्मण श्रीनिवासाचार्यजीके घर हुआथा। दक्षिणदेशमें काँचीपुरीसे ५ कोस पूर्व इनके पिताका निवास था। पांच वर्षकी उम्रसे इन्होंने पढ़ना आरम्भ किया और व्याकरण तथा काव्य पढ़नेके पीछे वि. सं. १८८५ में विशेष विद्या पठनार्थ काशीको चले आये और वहाँ रहकर अभयाचरणभट्टाचार्यसे न्यायादि शास्त्र पढ़े। मांडा राज्यसे इनको कुछ वार्षिक मिलता था जिससे इनके भोजन छाजनका प्रबन्ध होताथा। वि. सं. १८९० में स्वामीरङ्गाचार्य ब्रजको पधारे और एक छोटेसे मंदिरमें ठहरे तथा कुछ दिनों पीछे गोवर्द्धनकी गद्दी को प्राप्तहुये। मथुराके सेठ राधाकृष्णजीने वि. सं. १८९२ में इनके उपदेशोंको सुनकर जैनमत छोड़ वैष्णव मत ग्रहण किया तथा इनको गुरु करलिया। पश्चात् सेठजीने इनकी आज्ञासे श्रीरङ्गजीका बृहत् मंदिर वृंदावनमें बनवाया। जिसकी तय्यारीमें प्रायः ४५ लाख रुपये खर्च हुये और ३५हजार रुपये वार्षिक बचतकीभू सम्पत्ति भोगरागके खर्चके निमित्त लगाई गई और यह सब दानपत्र द्वारा इनके अर्पण करके सेठजीने अपना स्वत्त्व उसमें कुछभी नही रक्खा। मृत्युसे कुछदिन पहिले स्वामी रङ्गाचार्यको चिन्ता हुई कि यह सब वैभव भगवानकाहै कहीं ऐसा न हो कि हमारे वंशज इसे कुमार्गमें नष्ट करदेवें निदान उन्होंने मन्दिरकी रक्षाका भार एक वैष्णव कमीटीको सौंप दिया और अपनेको तथा अपनी सन्तानको वैष्णवोंके भरोसे छोडदिया।

वि० सं० १९३० में स्वामीरङ्गाचार्य परमधामको सिधारे । यह बडे पंडितथे चित्त उदार भावोंसे परिपूर्णथा न्याय वेदान्तके बडे विद्वानथे, स्वभावमें कुछ उग्रता अवश्यथी पर वह तेजस्वितासे रिक्त नथी ।

रणछोडलाल (आनरेबिल रणछोडलाल सी.आई०ई०)-स.ई. १८५३ मे अहिमदाबाद(सिंध) में जन्मेथे। नागर ब्राह्मण छोटेलाल इनके बापथे। इनके पूर्वज राजा महाराजाओंके दर्बारमें उच्चपदाधिकारी रहेथे एवं इनका वंश प्रतिष्ठितथा ।

इन्होंने अङ्गरेजी तथा गुजराती भाषाकी शिक्षा पाईथी और संस्कृत तथा फारसी भले प्रकार जानतेथे । स० ई० १८४४ में पंच महिलके असिस्टन्ट सुपरिन्टेन्डेन्टका ओहदा इनको मिला । १० वर्षतक इसओहदेपररहकर इन्होंने इस्तेफा दे दिया और व्यापारकी ओर मनलगाकर अहिमदाबादमें रूईका पेंचजारी किया । यह गुजरातप्रान्तमें रूईका पहिलाही पेंच था, पश्चातइनकी देखादेखी अनेक लोगोंने आहिमदाबाद तथा गुजरातमें रूईके पेंच जारी किये इसीकारण उस देशवाले रणछोडलालजीको " मिल इन्डस्ट्रीका पिता " कहते हैं । यह सूबाबम्बईकीलेजिसलेटिव कौंसिलके मेम्बरभी रहेथे और इसीलिये आनरेबिल कहलातेथे सदैव मधुरभाषणकरते और देशोपकारमें तत्परहतेथे। इनके उपदेशसे किसीका चित्त नहीं दुखताथा । अहिमदाबादकी टेम्परेंस सोसाइटीकेभी आप प्रधानथे।अहिमदाबादमें पुत्री पाठशाला,अतिथालय तथा चिकित्सालय आपने अपने खर्चसे खोलेथे, जो अबतक जारीहैं । अहिमदाबाद मुनिसिपेलिटीनें आपहीकी प्रधानताके समयमें पानीके नल शहरमें जारीकियेथे। स० ई० १८८६ में बृटिशगवर्नमेंटने प्रसन्न होकर आपको सी०आई०की पदवी प्रदानकीथी। ऐसे धनाढ्य होनेपरभी वृथा खर्च करना पसंद नहीं करतेथे । आपनेहिंदोस्तानके अनेक सूबोंमें देशाटन कियाथा और कुटुम्बसहित सबतीर्थोंकी यात्रा कीथी । २४ घंटे बीमाररहिकर स०ई०१८९८में परलोक गमन किया सब सर्कारी दफ्तरों, देशी कार्यालयों तथा बाजारने एक दिन बंद रहकर शोक मानाथा । आपके सुयोग्य पुत्र माधवलालजीने अपने देश मान्य पिताका उचित स्मारक चिह्न स्थापन कर्णार्थ एक लाखरूपया बृटिश गवर्नमेंटको सौंपा ।

रणजीतसिंह महाराजा (पंजाबकेशरी)--इनके बाप महासिंह सिक्खोंकी सूकरचक्किया मिसलके सर्दारथे और इनको८वर्षका छोडकर मरगयेथे। इसी कारण इनको विशेषशिक्षा नहीं मिल सकीथी, केवल हिंदी तथा पंजाबी भाषा कुछ २ जानतेथे। लेकिन इनकी बुद्धिबड़ी विलक्षणथी, आदमीको देखतेही उसकी नस २ का हाल जानलेतेथे और बड़े २ विद्वानभी इनकी समता करनेमें

असमर्थ रहतेथे। बचपनमें सीतलानिकलनेसेइनकी एक आंखभी जातीरहीथी। इनके बापके छोड़े हुये छोटेसे इलाके का प्रबन्धं कुछ दिनोंतक इनकी माता दीवान सुक्खाकी मदद्से करतीरही।

इन्होंने बड़े होकर दीवानको अलाहिदाकर दिया और माताको बदचलन देख मारडाला। पश्चात् क्रमशः लाहौर, अटक, कश्मीर, मुलतान, पेशावर, कांगड़ा झंग इत्यादि मुल्कोंको विजय किया और छोटेसे सर्दारसे सर्वत्र पंजाबके महाराजा बनकर पंजाबकेशरी कहिलाये। अफगानिस्तानके पठानतक इनका लोहा मान गये थे, और अंग्रेज लोग भी इनके दर्बार तथा फौजका दुरुस्त करीना तथा सामान देखकर दंगरहिजाते थे। स. ई. १८०८ में लार्ड मिन्टोगवरनर जनरलहिंद और महाराज रणजीतसिंहके बीच सरहद्के सम्बन्धमें सन्धि हुई थी जिसका पालन महाराजने अन्त समयतक दृढता सहित किया। स. ई. १८१७ में महाराजने अवसर पाकर शाहशुजा अमीर काबुलसे कोहनूर हीरा छीन लिया और स. ई १८३६ में अपने राज्य भरमें लौंडी गुलाम बनानेकी चालबंद्करदी। स० ई० १८३९ में कुछ दिन बीमार रहकर महाराजने परलोक गमन किया। अन्त समय दान पुण्य भी खूबही किया, एक करोड रुपया तो मरने हीके दिन पुण्य हुआ,४ रानियें और कई लौंडियें सती हुई और आपके पुत्र खड्गसिंह, शेरसिंह तथा दलीप सिंहने आपके पीछे राज्य किया लेकिन आपसके झगड़ेके कारण स० ई०१८४९कीसाल पंजाबका राज्यबृटिश गवर्नमेंटके गालमें घुसगया और दलीपसिंहको पेन्शन देखकर इङ्गलैंड भेजदियागया। महाराज रणजीतसिंहका राज्य सर्वत्र पंजाब पर होनेके सिवाय पश्चिमोत्तरमें हिंदूकुश और सुलेमान पर्वतों तक फैला हुआथा, इसमेंसे प्रायः दो करोड़रूपये वार्षिक आयका मुल्क जागीर तथा मुआफीमें देरक्खाथा और सब प्रकारकी सेना मिलाकर दोलाख दसहजारथी। महाराज डील डौलमें छोटेथे लेकिन वीरता और तेज उनके चेहरे पर दमकताथा, रणमें उनका साम्हना कोई नहीं करसकताथा और घोर आपत्तिपड़ने परभी वह कभी नहीं घबरातेथे। घोड़ेपरचढने, शिकार खेलने और हवाखानेको जानेकी उनकी बानथी, प्रति दिन ग्रंथ साहिब सुनतेथे और सदैव राजकाजमें दत्तचित्तरहकर दीनदुःखियोंको सन्तोष दिलाना अपना कर्तव्य समझतेथे।

काशीमें विश्वेश्वर नाथके मंदिरपर और अमृतसरमें दर्बार साहिब पर सोने का पत्र इन्होंने मढवाया था। विवादार्णवसेतु नामक राजनीति विषयक संस्कृत

ग्रंथ भी उन्हींके हुक्मसे बनाथा। उनकी समाधि लाहौरमें किलेके समीप अब-तक बनी है।

रणजीतसिंहजीकुँवर (प्रसिद्ध क्रिकेटिअर अर्थात् गेंद बल्लाके खिलाडी)-मुल्ककाठियावाड़में स. ई. १८७२ की साल जन्मे। काठियावाड़के जाम साहिबने इन्हें गोद्लिया। जाम साहिबके बाद अनेक कारणोंसे इनको गद्दी नहीं मिली परंतु यह वायदा कियागया कि अवसर आनेपर आपके पुत्रको गद्दी दी जायगी। १० हजार रुपयां वार्षिक आपको जामसाहबकी गद्दीसे मिलताहै और आप लंडनमें रहतेहैं। राजकुमारकालिज राजकोट और ट्रिनिटी कालिज कैम्ब्रजमें आपने शिक्षापाई थी। इङ्गलैंड तथा आस्ट्रेलियाकी समस्त क्रिकेट कमेटियोंको आपने हरादियाहै और कई दफे हिन्दोस्तान आकर शिमला तथा कलकत्तेमें महाराज पटियालाकी टीममें शरीकहोकर नाम पाया है। स. ई.१८९१-९२ की साल कैम्ब्रजकालिजकी समस्त क्रिकेट कमेटियोंमें सबसे अधिक रन आपहीने किये थे। अंग्रेजीमें आपने एक पुस्तक क्रिकेटके खेलके विषयमें रची है।

रणवीरसिंहजी–(महाराजा सर रणवीरसिंहइंद्रमहेंद्रबहादुर, जी. सी. यस. आई. जम्बू व कश्मीरनरेश)–आपके पिता महाराजा गुलाबसिंहजीको स. ई. १८४९ में कश्मीर मंडलका राज्य बृटिशगवर्नमेन्टने सौंपाथा। गुलाबसिंहजीके पूर्वज पूर्वकालमें कश्मीरके राजाथे लेकिन समयके हेर फेरसे कुछ दिनके लिये राज्य छिन गया था। स. ई १८५७ में महाराज गुलाबसिंहके परमधामको सिधारनेपर उनके पुत्र महाराज रणवीर सिंहजी गद्दीपर बैठे। आप विद्वानोंका खूब सत्कार करतेथे। अनेक अवसरोंपर बृटिशगवर्नमेंटकोभी आपने मददकी थी जिसके पुरस्कारमें गवर्नमेंटने आपको जी. सी. यस. आई. तथा मुशीर शहन्शाह जाम्दी विक्टोरियाकी पदवीसे विभूषित किया था। अंग्रेजी सेनाके आप अवैतनिक जनरलथे। आपकी सलामी तोपके २१ फैरोंकीथी। स. ई. १८८५ में आपने परलोक गमनकिया और आपके ज्येष्ठपुत्र महाराज प्रतापसिंह इंद्रमहेंद्र बहादुर (वर्त्तमाननरेश) गद्दीपर बैठे। महाराज रणवीरने नित्यप्रति नीचेहीको गिरते हुये हिन्दुधर्म तथा हिन्दुजातिके सुधारके लिये बहुतकुछ उद्योग किया था।

रत्नाकर (संस्कृतकवि)–देखो राजानक रत्नाकर।

रमेशचंद्रदत्त–(सर रमेशचंद्रदत्त,सी०यस०,सी०आई०ई०)आप बङ्गालीकायस्थ हैं, आपने इंग्लैंडजाकर सिविल सर्विसकी परीक्षा उत्तीर्णकी और बङ्गाल

सिविल सर्विसमें ज्वायन्ट मैजिस्ट्रेट नियतहोकर हिंदोस्तानको वापिस आये। धीरे २ कमिश्नरके पदको प्राप्तहुये और स. ई. १८९८ में पेन्शनपांई। स. ई. १८९२ में बृटिश गवर्नमेंटने प्रसन्नहोकर आपको सी. आई. ई. का खिताब दिया था। प्राचीन भारतका इतिहास अपने अंग्रेज़ी भाषामें लिखा है। पेन्शनलेनेके बाद आपने इंग्लैंड जाकर कैम्ब्रजकालिजमें पूर्वी भाषाओंके प्रोफेसरका ओहदा पाया। ऐसे ऊंचे ओहदे आजतक किसी दूसरें हिंदोस्तानीको नहीं मिले हैं। स. ई. १९०४ से महाराजा बरोडाने आपको अपने राज्यका मुख्य मंत्री बनाया है।

रविवर्मा (जगत्प्रसिद्धचित्रकार)—यह पूनाके रहनेवाले क्षत्रीवंशोद्भव, देशमान्य, पृथ्वीप्रसिद्धचित्रकार हैं। फिरङ्गीशिल्पकारभी इनकी कारीगरीको देखकर चकराते हैं। महारानीविक्टोरियाके भवनमें इन्होंने इंङ्गलैन्ड जाकर भारतीय ढंगके चित्र लिखकर राजाकी उपाधि पाईथी। अनेक चित्र इनके बनाये हुये अत्युत्तम हैं और उनकी छवि मनहरण है। बम्बई तथा पूनामें इन्होंने चित्रशालायें स्थापनकी हैं जहांसे इनकी.बनाई रंगीनतस्वीरें खरीदीजा सकतीहैं। स. ई. १९०३ में विद्यमानहैं।

रमेश्वरसिंहजी—(महाराज सर रमेश्वरसिंह बहादुर, के.सी.यस. आई, दर्भंगा नरेश) महाराज महेश्वरसिंहजीके घर स. ई.१८६१ की साल जन्मे। पूरे एकवर्षकेभी नहोने पायेथे कि पिताका देहान्त होगया और आपके बड़ेभाई महाराजलक्ष्मीश्वरसिंहजी ६ वर्षकी उम्रमें दर्भंगाकी गद्दीपर बैठे। राजकुमारोंकी नाबालिग़ीमें गवर्नमेन्टकी तरफ़से कोर्टआफ़वार्डसका इन्तज़ाम हुआ और क्रमशः कई अङ्गरेज़ शिक्षक राजकुमारोंको शिक्षादेनेके लिये नियत हुये। पश्चात् कीन्सकालिज बनारसमें राजकुमारोंको भेजागया। महाराज रमेश्वरसिंहजीका संस्कृतपढनेकी ओर ध्यान विशेषरहा। स. ई. १८७७ में दोनोंराजकुमारोंको ज़िमीन्दारीका कार्य्य सिखाया जानेलगा। इसीसाल महाराजरमेश्वर सिंहकाविवाह हुआ। स. ई. १८७९ में आपके बड़े भाई लक्ष्मीश्वरसिंहजीको राज्यका पूरा अधिकार सौंपा गया। थोड़ेही दिनों पीछे किसीकारणसे दोनों भाइयोंमें वैमनस्य होगया जिससे महाराज रमेश्वर सिंहजीने कईवर्षतक भागलपुर आदि जिलोंमें ज्वाएण्ट मजिस्ट्रेट के ओहदेपर काम किया। स. ई. १८८१ में बंगालके लफ्टिनेन्ट गवर्नरने भाइयोंमें मेल करा दिया जो अंततक चिरस्थाई रहा। स. ई. १८८५ में आपने नौकरी छोड़दी और भाईसे मिली हुई अपनी बृहत जागीरकी देख भाल करते रहे तथा समय पानेपर योग्यकर्मचारियों सहित

भिन्न २ तीर्थोंकी यात्रा करतेरहे। स. ई. १८९७ में कामाख्या में एकपक्का घाट आपने बनवाया और महामाया भुवनेश्वरीके मंदिरका जीर्णोद्धार करवाया। स० ई० १८९८ में महाराजलक्ष्मीश्वरसिंहके निःसन्तान सिधारनेपर आप दर्भंगाराज्यके मालिक हुये दर्भंगाकी प्रजा आपके शासनमें सुखचैनसेहै और हिंदोस्तान भरके हिन्दुओंकी आपपर पूज्य बुद्धिहै क्योंकि आप भारत धर्म महामंडलके प्रेसीडेन्टहैं। आप स्वधर्मप्रिय, विचारशील, नीतिज्ञ तथा सुवाग्मी पुरुष हैं और श्रोत्रियवंशीमैथिल ब्राह्मणहैं। आपके पूर्वज महामहोपाध्याय महेश ठकुरने अपारविद्याके पुरस्कारमें बादशाह अकबरसे दर्भङ्गाका राज्यपायाथा।

रसखान (भाषाकवि)—सय्यदइब्राहीम पिहानी जि० हरदोईवालेने रसखान नामसे पदपूर्तिकीहै। यह अपने घरके बड़े भारी रईसथे। पहिले यह किसी स्त्रीपर आसक्तथे लेकिन वह अभिमानिनीथी। भागवतके पार्सी अनुवादमें गोपियोंके विरहकी कथा पढ़ इनका चित्त मानुषीय प्रीतिसे हटकर श्रीकृष्णचंद्रके चरणोंमें लगगया। फिर तो यह किसी स्थानपर भागवतकी कथा सुननेको जानेलगे और वहां पर एक दिन श्रीकृष्णजीका सुन्दर चित्र देख इन्होंने व्यासजीसे पूंछा कि "यह सांवली सूरत वाला कहां रहता है और इसका नाम क्या है ?" व्यासजीने उत्तर दिया कि "यह वृन्दावन में रहताहै और इसका नाम रसखान है"। पश्चात् यह ब्रजको चलेगये और श्रीनाथजीके मन्दिरमें पहुँचे लेकिन भीतर न घुसने पाये। अस्तु निराश हो गोविन्दकुण्डपर कई दिनतक बिना अन्न जलके पड़े रहे। सुधि पाकर गोस्वामी विट्ठल नाथजी (वि. स. १५७२-१६४२) इनको श्रीनाथजीके सन्मुख ले आये। दर्शन पातेंही इन्होंने निम्नस्थ दोहा पढाः—

दोहा—कहा करो रसखानको, दूतनचोर लबार।
जो प्रभु दीनदयालुहैं, तो माखनचाखनहार॥

दर्शन करके जब यह चलनेलगे तो गोसाँईजीने इनको कृष्णभक्तिमें डूबाहुआजान अपना लिया और कहा कि "अरे अब कहां जातु है"। रसखानकी कविता निपट ललित, माधुर्यतासे भरपूर है। सुजान रसखान तथा प्रेमवाटिका (वि. स. १६७१) इनके रचे ग्रंथ हैं। कई सौ फुटकर दोहे भी इनके बनाये मिलते हैं। श्रीकृष्णचन्द्रकी भक्तिसे चित्त इनका शान्ति होगया। अन्त समय तक फिर कहीं नहीं गये और ब्रजकी रजमें मिलगये।

रसिक बिहारी (भाषाकवि) यह झांसीकी रहने वाली किसी विधवा ब्राह्मणीके पुत्र थे। माता इनको बचपनहीमें लेकर अयोध्याजीको चली आई थी और कनक भवनमें रहती थी। बड़े होकर यह कनक भवनके महन्त के शिष्य होगये लेकिन महन्तजीके पीछे मुकद्दमा लड़ाने परभी गद्दी इनको नहीं मिली। इनका असली नाम जानकीदासथा लेकिन कविता रसिक बिहारी नामसे करतेथे। इन्होंने अनेक तीर्थोंमें पर्य्यटन कियाथा, अन्तको मेवाड़में परलोक गामी हुये। समय इनका स. ई. १८४० से १८९० तक निश्चय है। कविता उत्तम करतेथे। निम्नस्थ ग्रंथ इनके रचे हुये हैं:-

रामायण सप्तकाण्ड, सुयश कदम्ब, सुमति पचीसी, रसकौमुदी नामक विहारी सतसईके चुने दोहोंका कवित्तोंमें टीका।

रहिमन, रहीम–देखो अब्दुलरहीम खानखाना।

राउबुद्धहाड़ा (बूंदीनरेश)–जयपुरनरेश जयसिंहसवाईकी बहिन इनको विवाहीथी। मुहम्मदशाह मुगल सम्राट दिल्ली के दर्बारमें इनके समान किसी दूसरे राजाकी प्रतिष्ठा न थी। एक दफे जब सैयद बारहने मुहम्मशाह को राज्यरहित करदियाथा तो इन्होंने सैयदका मुँह तलवारोंसे फेर दियाथा। यह उम्रभर बादशाही दरबारहीमें रहे। भाषा कविता अच्छी करते थे और कविकोविदोंके सन्मानी थे। स. ई. १७४० में इनके साले जयसिंह सवाईने इनका राज्य छीन लिया।

राघोजी भोंसला (बरारके भोंसला राजवंशके मूल पुरुष) इनको पेश्वाबाजीराव प्रथमने "सेना साहबसभा" अर्थात् मरहटासर्दारोंकी सभाका सेनापति स, ई. १७३४ में नियत कियाथा और स. ई. १७४० में बरारका राज्य दियाथा। राज्यपाकर नागपुर में इन्होंने अपनी राजधानी स्थापन कीथी। उसी साल मरहटोंमें राज्य सम्बन्धी घोर विप्लव उपस्थित हुआ क्योंकि सताराके राजा रामराजाको गद्दीसे उतारकर पेश्वाबाजीराव तथा राघोजी भोंसलाने सतारा गढ़में कैदकर दिया और उसका राज्य आपसमें बांट लिया। राघोजी भोंसला तथा रामराजा सपिंडीथे क्योंकि दोनोंही मरहटाराज्यके मूल पुरुष महाराजा शिवाजीके वंशजथे। इतिहास साक्षी है क्योंकि महाराज राघोजी बडे साहसी वीरपुरुष थे। स. ई. १७५३ में उनके मरनेके बाद भोंसलाकी गद्दीपर निम्नस्थ क्रमसे राजे बैठे:-

राघोजी भोंसला प्रथम	स. ई. १७५३ में मरे
रानोजी भों० (राघोजी भों० १ के पुत्र)	" १७७२ "
माधोजी भों० (" के भाई)	" १७८८ "
राघोजी भों० द्वितीय (माधोजी भों० के पुत्र)	" १८१६ "
परसोजी भों० (राघोजी भों० २ के पुत्र)	" १८१६ "

परसोजीको आपा साहिबने गला घोट कर मारडाला.

आपा साहिब (अङ्गरेजोंकी सहायता से गद्दीपर बैठे है), परंतु" १८१८ में तख्तसे उतार दिये गये-

प्रतापसिंह नारायण(राघोजी भोंसला १ के पौत्र)	" १८१८ में मरे
राघोजी भों० तृतीय	" १८५३ में "

स. ई. १७५३ में राघोजी भों० तृतीय अपुत्र मरगये, उनके दत्तक पुत्रको बृटिशगवर्नमेंटने राज्य देना स्वीकार नकर पेन्शन करदी और चुपकेसे भोंसला-का वृहत राज्य खालसाकरलिया । महाराजा भोंसलाके वंशज आजकल भी नागपुरमें रहते हैं और बड़े भारी जमींदार हैं ।

राजशेखर (संस्कृतकवि)-प्रबन्धकोष, बालरामायण तथा बाल भारत इनके बनाये संस्कृत ग्रंथ देखने योग्य हैं । माधवकृत शंकर दिग्विजयके एक लेखसे ज्ञात होता है कि राजशेखरजी केरल देशके जैनी राजाथे । जीवन काल इनका विक्रमकी १२ वीं शताब्दी निश्चय है । इनकी शार्दूल विक्रीड़ित रचना अत्यंत रमणीय है और इसी कारण क्षेमेंद्र कविने इनके विषयमें लिखा है कि-

श्लो०-शार्दूलविक्रीडितैरेव प्रख्यातो राजशेखरः ।
शिखरीव परं वक्रैः सोल्लेखैरुच्चशेखरः ॥

राजानकरत्नाकर (संस्कृतकवि)-इनके नामके साथ राजानक शब्द उपनाम है जैसे दुबे,तिवारी आदि शब्द नामके आदि या अन्तमें होते हैं । इनके पिताका नाम अमृत भानुथा यह वि. सं. की दशवीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें काश्मीरमें हुये । काश्मीरनरेश अवान्तिवर्म्माके दर्बारसे इनका संबन्ध था, निम्नस्थ ग्रंथ इनके बनाये हुये है:-

हरविजय महाकाव्य, वक्रोक्ति पंचाशिका और ध्वनिगाथापञ्जिका । हर-विजय महाकाव्य जिसमें ५० सर्ग हैं अत्युत्तमहै इसकाव्यकी उत्तमता देख राजशेखरजीने कहा है कि:-

श्लो० मास्म सन्तुहि चात्वारः प्रायो रत्नाकरा इमे।
इतीवसत्कृतो धात्राकविरत्नाकरोऽपरः ॥

राजारामशास्त्री-यह काशीवासी प्रसिद्ध पंडित सब शास्त्रोंमें पारंगत होनेके सिवाय व्याकरणमें अपने समान भारतमें कोई दूसरा नहीं रखतेथे।प्रायः सब ही रजवाड़ोंमें इनकी निर्णीत व्यवस्था मानीजातीथी । सभामें इनका शास्त्रार्थ सुनकर बड़े २ पंडित सन्तुष्ट होतेथे । महाराज सेंधिया इनकी बड़ी प्रतिष्ठा करतेथे। पं. काशीनाथ शास्त्री इनके विद्यागुरुथे । संस्कृत कालिज बनारसमें धर्मशास्त्रके प्रोफेसरका पद इनको प्राप्त था। पं० बालशास्त्री सरीखे अद्वितीय विद्वान् इनके शिष्यथे। ईश्वरचंद्र विद्यासागर आदि विद्वानोंके विधवा विवाह संबंधी आन्दोलनका प्रवाह रोकनेके लिये इन्होंने " विधवोद्वाह शंका समाधि " नामक संस्कृत ग्रंथरचाथा जिसका टीका बादको बालशास्त्रीने किया था। दक्षिण देश वासियोंकी प्रार्थनापर इन्होंने बालशास्त्री इत्यादि शिष्य प्रशिष्योंके साथ दक्षिण देशमें जाकर विधवाविवाह चर्चाके प्रबल प्रवाहको रोकाथा। वि. सं. १९३१ में सिधारे।

राजेंद्रलालमित्र (राजा, डाक्टरराजेंद्रलाल मित्र, राय-बहादुर, यल० यल० डी०, सी०आई०ई०). आपके पूर्वज काली दास मित्रे कायस्थको बंगालाधिपति महाराज अदीसुरने कन्नौजसे बुलायाथा-काली दाससे २० पीढी पीछे पीतांबर मित्रहुये जोनवाब वज़ीर अवधकीतरफसे दर्बारदिल्लीमें वकीलथे और जिनको दरबार दिल्लीने राजा बहादुरकी पदवी तथा तीन हज़ारी का मनसब और जिला इलाहाबादमें एकबड़ी जागीर दीथी इन्हीं राजापीतांबर मित्रके पौत्र राजा जन्मेजय मित्रकेघर स० ई० १८२४ कीसाल सूरह (बंगाल) राजवाड़ीमें राजेंद्र लाल मित्रनामक पुत्रका जन्म हुआ। आप १४ वर्ष की उम्रतक बंगाली फारसी और अंग्रेजी पढ़तेरहे। १५ वर्ष की उम्रमें डाक्टरी पढनेकेलिये मेडीकेल कालिज कलकत्तामें भरती हुये। परंतु कुछ समय पीछे जब इन्होंने डाक्टरीकी विशेष शिक्षा पठनार्थ इग्लेंडजाना चाहा तब पिताने इनको स्कूलसे उठालिया पश्चात् इन्होंने कानूनपढना शुरू किया लेकिन जिससाल कानूनका इम्तिहान दिया उससालके पर्चे चोरीहोजाने केकारण इम्तिहानही मनसूख होगया। इसप्रकार बार २ निराश होकर इन्होंने संस्कृत, हिंदी, फार्सी तथा उर्दूकाव्यको विचार सहित पढ़ना आरंभ किया २३ वर्षकी उम्रमें एशियाटिक सोसाइटी बंगालमें उपमंत्री तथा पुस्तकाध्यक्ष

का ओहदा आपकोदिया, जिस पर १० वर्षरहकर सैकड़ों दुष्प्राप्य प्राचीन ग्रंथोंके देखनेका अवसर आपको मिला । पश्चात् कलकत्तेके गवर्नमेन्ट वार्डसका उच्चपद आपको प्राप्त हुआ जिसपरबहुतदिनोंतक रहे । संस्कृत, हिंदी, फार्सी, उर्दू, बङ्गला और अंग्रेजीमें सैंकडों पुस्तकें आपने रचीथीं और, अनेक प्राचीन बार्ताओंका पता लगायाथा ॥

आप कलकत्तायूनीवर्सिटीके फेलो थे और उक्त यूनीवर्सिटीने सबसे पहिले यल० यल० डी० का खिताब आपहीको दियाथा । पुरातत्वादि अनेक विद्याओंमें पारङ्गत होने, देशहितकरने, सैकडोंग्रंथरचने और कार्यदक्षता, राज्य भक्ति तथा उदारताका पूर्ण परिचयदेनेके उपलक्षमें बृटिश गवर्नमेन्टने आपकोस० ई० १८७७ में रायबहादुरका खिताब, स० ई० १८७८ में सी० आई० ई० की उपाधि तथा स०ई० १८८८ में राजाका खिताबदियाथा । स० ई० १८९८ में परलोकगामी हुये । कुंवर रामेंद्रलालमित्र बी० ये०,बी०यल०,सी० आई०ई० तथा कुंवर महेन्द्रलाल मित्र आपके दो पुत्रहैं ।

राधाकृष्णसेठ (बृन्दावनमें रङ्गजीके मन्दिरके निर्माण कर्ता)–यह सेठ लक्ष्मी चन्द्रजीके छोटे भाई थे (देखो लक्ष्मीचन्द) । इन्होंने पं० रङ्गाचार्यके उपदेशसे जैनमत छोड वैष्णव धर्म ग्रहण किया और उनको गुरु कर लिया । पश्चात् उनके कथनानुसार वृन्दावनमें श्रीरङ्गजीका मन्दिर स. ई. १८४५ में बनवाना आरंभ किया । सेठजीके पासका कई लाख रुपया उठगया परन्तु मन्दिरकी छततक नपटपाई । जब यह बात सेठ लक्ष्मीचन्दको मालूम हुई तो उन्होंने प्यारे भाईका चित्त दुखाना अनुचित समझकर ४५ लाख रुपयेके खर्चसे स. ई. १८५१ में उक्तमन्दिरको तय्यार करादिया और भोगराग, उत्सव, मेला आदि मन्दिर सम्बन्धी खर्चके लिये ५३ हजार रुपये वार्षिक बचतका प्रबंध जो ३३ गांवोंसे आता है करदिया । पश्चात् सेठ राधाकृष्णने मन्दिरकी सम्पत्ति अपने गुरु रङ्गाचार्यको दानपत्र द्वारा देदी । सेठ राधाकृष्णकी प्रीति गुरुचरणोंमें अलौकिकथी । एक दफे वर्षाऋतुमें सेठजी बृन्दावनमें बहु मूल्यवस्त्र पहिने चले जाते थे अकस्मात् दूसरी तरफसे आते हुये पं० रङ्गाचार्य साम्हने पड़गये, देखतेही सेठजीने अपने नियमानुसार गुरु को साष्टाङ्ग दण्डवतकी जिससे सब वस्त्र खराब होगये क्योंकि रास्तेमें कींचड़ थी । गुरुके प्रेमाश्रुनिकल आये और शिष्यको हाथ पकड़ छातीसे लगालिया । राजा लक्ष्मणदास सी. आई. ई. इनके पुत्रथे । पंडित रङ्गाचार्य और सेठ राधा-

कृष्णसरीखे गुरु शिष्य होना दुर्लभ है (देखो रङ्गाचार्य)। वि. सं. १९०५में से० राधाकृष्णका वैकुंठवास हुआ। वृन्दावनमें "रामलक्ष्मणका मन्दिर" भी इन्हीं का वनवाया हुआ है।

राधा (श्रीकृष्णजीकी पटरानी)—गोकुलवासी वृषभानुग्वालकी कन्या, त्रैलोक्यसुन्दरी होकर श्रीकृष्णजीकी ८ पटरानीयोंमें सबसे अधिक प्रिय थी। वैष्णवोंके मंदिरोंमें श्रीकृष्ण तथा राधिकाकी पूजा सेवा साथ २ होती है।

राधास्वामी शिवदयाल सिंह (राधास्वामी मतके आचार्य) शहर आगराके पन्नीगलीमें स. ई. १८१८ की साल एकखत्रीके घर लाला शिव दयाल सिंहका जन्म हुआ। बृन्दावन तथा प्रताप सिंह इनके दो भाई औरथे। लाला शिवदयाल सिंह बाल्यावस्थासेही मुख्य २ लोगोंको उपदेश करने लगेथे। प्रायः १५ वर्ष तक उन्होंने अपने मकानके एकान्त कोठेमें बैठकर श्रुत शब्द योगका अभ्यास कियाथा और पश्चात् १७ वर्षतक अपने गृहमें सत संगियों तथा परमार्थी लोगोंको राधास्वामी मतका उपदेश कियाथा।

प्रायः ३००० मनुष्य उनके शिष्य हुयेथे जिनमें से प्रधान शिष्यरायसालिगराम बहादुर पोष्ट मास्टरजेनरलथे। ईश्वर जो सबसे परेहै उसीका नाम इस मतमें राधास्वामीहै। लाला शिवदयाल सिंह उसीका अवतार माने जाकर राधास्वामी कहे जाते हैं। इसमतके लोग श्रुत शब्द योगका अभ्यास करते हैं। अर्थात् जीवात्माको नेत्रोंके स्थानसे ऊपर ब्रह्माण्डमें चढ़ाकर अन्तरका शब्द सुन तेहैं। सद्गुरु, सत्यनाम तथा सतसङ्गकी इसमतमें जरूरत है।

मांस शराबादि मादिक वस्तुओंके खाने पीनेका निषेध है और तीर्थ, व्रत मूर्तिपूजा तथा पुस्तकोंके खाली पढ़नेसे अन्तःकरणकी शुद्धिका होना नहीं माना जाता। स.ई.१८७८में राधास्वामीने परलोकगमन किया। "सारवचनराधा स्वामी" नामक पुस्तक इनकी रची हुई है।

राधाकान्तदेव, राजाबहादुर, के०सी०यस०आई (संस्कृतकोष शब्दकल्पद्रुमकेकर्ता)—सोभा बाजार कलकत्ताके नवकृष्णदेव नामक रईस इनके दादेथे और इनके बापका नाम गोपीमोहन देवथा। यह जातिके कायस्थथे। इन्होंने संस्कृत, फार्सी, उर्दू, हिन्दी, बंगला घरपररक्खे हुये नौकरोंसे पढ़ीथीं। हिंदोस्थानमें उनदिनों अंग्रेजी राज्यका आरंभथा। बहुतसे अंग्रेजी

स्कूल उसवक्त तक नहीं खुलेथे। बंगालभरमें केवल एकही अंग्रेजी स्कूल बहूबाजार कलकत्तेमेंथा। इसी स्कूलमें ३ वर्ष पर्यंत इन्होंने शिक्षा पाईथी और उससमय हिंदुस्थान भरमें कोई दूसरादेशी पुरुष इनकी समान अंग्रेजीका विद्वान नहीं था। यह एशियाटिक सोसाइटी बंगालके मेम्बरथे और इन्हींकी रिपोर्टसे काशीका कीन्स कालिज जिसमें संस्कृत कालिजभी शामिलहै वर्तमान दशाको पहुंचाथा। एक संस्कृतबृहत अभिधानका अभाव देख इन्होंने ५० वर्षके निरन्तर परिश्रमसे शब्दकल्पद्रुम " नामक बृहत शब्दकोष रचाथा। इसकोषके रचनेमें बहुतसे पंडितों की सहायतालेनी पड़ीथी और बहुत कुछ व्यय करना पड़ाथा।

यह कोष मलिका विक्टोरियाकी भेंटकरके राधाकान्त देवने राजा बहादुर तथा नायटकी पदवियें और सोनेका पदक पायाथा। उनदिनों अंग्रेजी स्कूलोंमें जो पुस्तकें पढ़ाई जातीथीं वह बालकोंका चित्त ईसाई मतकी ओर झुकानेवाली थीं। यह देख राजा राधाकान्त देव बहादुरने पाठशालाओंके हितार्थ अनेक पुस्तकें रचकर स्वीकार कराईं। पश्चात् हिन्दुकालिज कलकत्ताके खोलनेमें बड़ा प्रयत्न किया। स्त्रीशिक्षाकेभी पक्षपातीथे परन्तु कन्या पाठशालाओंका जारी करना पसंदनहीं करतेथे। आपदृढतासे अपने पूर्वजोंके धर्मपर आरूढ़ थे। सर्व साधारण आपकी प्रतिष्ठाकरतेथे। धन दौलत सब प्रकारके सुख आपको प्राप्तथे। आपका चरित उनलोगोंको शिक्षादायक होसकताहै जो कहते हैं कि "अमीरोंको क्या नौकरी करना है जो बहुत पढ़कर मगज खाली करें"। अन्तमें कुछ दिनों बृन्दावन वास करके स. ई. १८६९ की सालमें परलोक गामी हुये।

रानडे (आनरेबिलजस्टिस महादेव गोविन्द रानडे)

नासिकके जिलेमें स. ई. १८४२ की साल जन्मे और एलिफन्स्टन कालिज बम्बईमें पढकर स. ई. १८६४ की साल यम. ए. की परीक्षा और दोही वर्ष पीछे यल. यल. बी. की परीक्षा उत्तीर्णकी। इसके बाद एलिफन्स्टन कालिजमें ६ वर्षतक अंग्रेजी भाषाके आसिस्टिन्ट प्रोफेसर रहे और फिर कुछ दिनोंतक आकलकोट तथा कोल्हापुरकी रियासतोंमें नौकरीकी। स. ई. १८७१ में बम्बई के न्याय विभागमें नौकर होगये और बढ़ते २ बम्बई हाईकोर्टके जजके पद को प्राप्त हुये।

जस्टिस रानडे धर्म शास्त्रहीमें निपुणनथे बरन अत्यंत शुभ आचरण विद्वान, देश हितैषी, चतुर, पक्षपातरहित और बुरे भलेके जाननेवाले थे। इस देशके राजनीति विशारदपुरुषोंमें उनकी गणना है, जबतकतनमें प्राणरहे स्वदेशकी

ाईका प्रयत्न करते रहे। बृटिशगवर्नमेन्टने जस्टिस रानडे को राय बहादुर
। सी. आई. ई. के खिताब दियेथे, बम्बई प्रांतमें अनेक सामाजिक, धर्मकारिक
र शिल्पकारिक सभाओंके स्थापन करनेमें उन्होंने सहायता दीथी । यह
ावसेही उद्योगी, परिश्रमी तथा पक्के राजभक्तथे.देश सुधारकी अनेक बातों पर
व व्याख्यान दिया करते थे और थोडेसे शब्दोंमें दीर्घ आशयकहसक्ते थे ।
। हितका कोई ऐसा विषय न था जिसको इन्होंने पूर्णरीतिसे न विचाराहो ।
कपट होनेके कारण सब लोग उनकी प्रतिष्ठा करतेथे और उनके फैसलोंसे
न्न रहते थे ।

अनेक पुस्तकें भी उन्होंने रचीं थी । अकस्मात् स. ई. १९०१ की साल जवा-
की हालतमें बम्बईमें परलोक गामी हुये । बम्बईमें उनका स्मारक चिह्न
ापन किया गया है।

रानोजीसेंधिया (ग्वालियर राज्यवंशके मूल पुरुष)-ग्वालियरके सेंधिया
ाराजे इन्हींके वंशमें हैं । यह वर्णके शूद्रथे और पेश्वाकी चाकरीमें बढते २
ापतिके उच्चपदको प्राप्त हुये थे तथा जागीर पाई थी । स. ई. १७५०में
ोजी ४ पुत्र छोडकर परमधामको सिधारे इन चारोंमेंसे माधोजी
धिया बड़े प्रतापी हुये जिन्होंने बहुतसा मुल्क फतेह किया और ग्वालियरको
नी राजधानी बनाया । प्रसिद्ध है कि रानोजी सेंधिया के मुंहपर एक दफे
ोते समय धूप आगई थी तब एक सर्पने आकर फनसे छाया किया था, इसी
ारण ग्वालियर राजवंशका चिह्न सर्पोंकाफना है ।

रामकृष्ण परमहंस-जिला हुगली (बंगाल) के कमरपूरकर ग्राममें
. ई. १८३३ की साल इनका जन्म खुदीराम चट्टोपाध्यायके घर हुआ । राम
मार तथा रामेश्वर इनके दो बड़े भाई थे जो अच्छे विद्वान होकर कल-
सेसे ३ कोस दूर गंगातट दक्षिणेश्वरमें रासमणिदासकें बनवाये काली देवी
 मन्दिरके पुजारी थे । बड़े होनेपर रामकृष्णको जब पढनेके लिये पाठशा-
में भेजा तब इन्होंने कहाकि "मैं पढ लिखकर क्या करूंगा क्योंकि इस
द्याका फल रुपयाकमाना है" । निदान थोडीसी बंगाला भाषाके सिवाय यह
छ न पढ सके। पश्चात् पिताने बड़े भाइयोंके पास इनको दक्षिणेश्वरमें भेज
या । वहांपर रहकर यह धर्म संबन्धी अनेक विषयोंपर अपने भाइयोंके बीच
ास्त्रार्थ सुनते रहते थे । कुछ दिनों बाद जब इनके भाई राम कुमारजीका देहांत
ोगया तो यह उनकी जगह कालीजीके मन्दिरके पुजारी हुये । इनका विवाह
 रामचंद्र मुकर्जीकी सारदामणि नामक कन्यासे होगया था । कालीजीकी

पूजा करते २ इनके मनमें ऐसी दृढ भावना हुई कि दर्शन पानेकी अभिलाषा यह पहरोंतक स्तोत्र पाठ करने तथा मां ! मां ! कहकर पुकारने लगे। ऐसा करते जब बहुत दिनवीते तो भगवतीमें अकपट विश्वास होकर रातदिन इनको माईके दर्शनोंकी चिन्ता रहने लगी और रातमें पहरोंतक अकेले देवीके सन्मुख बैठे हुये कभी रोते हुये और कभी खिल खिलाकर हसते हुये पाये गये। अन्तमें जब इनके प्राण रोने लगे और मनने जगत्की वस्तुओंका विसर्जन कर दिया तो एक दिन देवीके सन्मुख बैठे रोते हुये इनकी उन्मत्तकीसी दशा होगई जो छः मासतकरही। पश्चात् इन्होंने अहंकारको जीतनेका प्रयत्न किया, जगत् और उसके पदार्थोंको ईश्वरका जानने लगे और कामिनी काञ्चनरससे बिलकुल मन हटालिया। इसके पीछे तोतापुरी एक संन्यासीसे इन्होंने संन्यास धर्मकी दीक्षाली और हठयोग तथा राजयोगकी क्रिया उससे सीखकर अभ्यासद्वारा योग सिद्धिको प्राप्त हुये। योग सिद्धिको प्राप्त होकर इनका शरीर स्थूल होगया और लोग इनको परमंहस कहने लगे। इसप्रकार क्रमशः मनोवृत्तियोंकी शान्ति होने तथा समदर्शिताके बढ़नेसे यह साधन दशासे आरूढ। दशाको प्राप्त हुये। स०ई०१८६६की साल ब्रह्मो धर्मप्रचारक बाबू केशवचंद्रसेनसे इनकी मुलाकात हुई और वह इनका ईश्वरानुराग,अत्युच्चज्ञान तथा दृढ धारणा देख चमत्कृत होकर साकार ब्रह्मके अनुरागी हुये। स० ई० १८८६ में रामकृष्ण परमहंस ब्रह्मपदको प्राप्त हुये इनके कहे कई सौ उपदेशहैं जिनको विचारनेसे ब्रह्मज्ञानके अनेक गूढ रहस्य विदित होसकते हैं।

रामकृष्णवर्मा (भारतजीवन प्रेस बनारसके मालिक)- अम्रतसर (पंजाब) से बाबू हीरालाल नामक खत्री रोजगारकीतलाशमें काशीमें आकर बसे थे। वि० स० १९१५ की साल उनके घर रामकृष्ण नामक बालकका जन्म हुआ। पिताके निर्धनी होनेके कारण रामकृष्णने ज्यों त्यों यफ० ये० पास करके बी० ये० तक अंग्रेजी पढी। ग्रंथ रचनाकी ओर प्रथमहीसे आपकी रुचि है, बलवीर नामसे भाषा कविता करते हैं और आपके हिन्दी गद्य लेख पढ़ने लायक होते हैं। अन्य महानुभावोंके रचे सैकड़ों ग्रंथ निज व्ययसे छापकर हिंदी गद्यपद्य रचनाके प्रोत्साहनका आपने भली भांति परिचय दिया है। स. ई. १८८४ में आपने बनारसमें "भारत जीवन प्रेस" स्थापन किया और उसी सालसे "भारतजीवन" नामक हिन्दीका साप्ताहिक समाचार पत्र जारी किया जो स. ई. १९०४ तक जारी है और गवर्नमेन्टके प्रबन्ध विभागकी रिपोर्टके अनुसार युक्त प्रान्तके सब हिन्दी उर्दू समाचार पत्रोंसे अधिक पढा जाता है। आपने अबतक हिन्दी गद्य पद्यकी प्रायः २५ पुस्तकें रची हैं जिनमेंसे निम्नस्थ मुख्य हैं:-

ठगवृतांतमाला, संसारदर्पण, पुलिसवृतांत माला तथा कान्सटेबिलवृतांत माला नामक ऐतिहासिक उपन्यास और कृष्णाकुमारी, वीरनारी तथा पद्मावती नामक नाटक।

आप सरलचित्त पुरुष हैं। भूल विद्वित होनेपर प्रथा हठ किये बिना स्वीकार करते हैं। उद्योगी पुरुषोंमें आपकी गणना है। पिता आपको हीन दशामें छोड़ गयेथे लेकिन अब धन, मकान, प्रतिष्ठा, नौकर चाकर सबही आपको प्राप्त है। यह सब होते हुये गर्व तथा ईर्षा द्वेषका आपमें बिलकुल अभाव पाया जाता है और परिश्रम सहित अपने कामकाज की देख भालमें स्वयं लवलीन रहते हैं।

सहनशीलता तथा नम्रताका आपके स्वभावमें समाविशहै औरइन्हीं सबकार-णोंसे सर्व साधारण आपकी प्रतिष्ठा करते हैं। भारतके अनेक राज्य दर्बारोंमेंभी आपका सन्मान होता है।

रावणाचार्य लंकेश–यह ऋषि पुलस्त्यका पौत्र तथा विस्वश्रवा मुनि-का पुत्र वर्णका ब्राह्मण, बड़ा बलवान, अद्वितीय विद्वान और कलाकौशलादिमें निपुणथा। मिस्टर थामस वेननने निश्चय किया है कि,रावणका सीलोनके सि-वाय स्याम, कम्बोडिया, फिलिपाइन, सुमात्रा, जावा, सेलिविज तथा बोर्नियो आदि द्वीपों और दक्षिणी चीन, कोचीन तथा बर्मा आदि देशोंमें भी राज्यथा और दक्षिणी भारतके राजाओंपर उसका आतङ्क था।

हिन्दोस्तानके दक्षिणमें सीलोन (सिंहलद्वीप) रावणकी लंका नहीं है। सुमात्रा टापूका वाल्मीकीय रामायणके लेखानुसार रावणकी प्राचीन लंकासे ठीक मि-लान होता है। रामचंद्र महाराजने लक्ष्मणजीके नामपर लंकाका नाम बदल-कर सौमात्रा (सुमात्रा) रक्खा था। रानी सुमित्राके पुत्र होनेके कारण लक्ष्मण जीको सौमित्र कहतेथे। रामायणादि ग्रंथोंमें लिखा है कि रावणके राज्यमें इंद्र छि-ड़काव देतेथे, वायू झाड़ू देतेथे सूर्य रसोई बनातेथे, और कि वह समुद्रको पैदल पार कर सक्ता था और सूर्यकी तपिशसे मछलियें भून लेता था। यह सब बातें सत्य हैं किन्तु इस प्रकारकी हैं जैसे कोई कहे कि राजराजेश्वरी विक्टोरियाके राज्यमें दीपक जलाने और खबर पहुंचाने पर बिजली नौकर थी और अग्नि तथा वरुण चक्की पीसतेथे तथा गाडियोंमें जोते जाते थे। रावणने वेदका भाष्य किया था, इसी कारण रावणाचार्य उसको कहा। एकतंत्रका ग्रंथ तथा रावणस्मृति नाम धर्मशास्त्रभी उसने रचा था। यह सब होते हुये भी वह बड़ा अभिमानी अन्याई तथा लम्पट था उसने हजारों ऋषियोंको निरपराध नाश किया था हजारों कुल-कामानियोंका सतीत्व भङ्ग किया था और पाप पुण्यको कुछ नहीं डरताथा अंतमें रघुकुलतिलक महाराज रामचन्द्रने उसको नष्ट किया।

रावणेश्वर प्रसादसिंह, राजाबहादुर, के० सी० यस० आई० गिद्धौरनरेश- बंगालमें गिद्धौरका राजवंश बड़ा प्रतिष्ठित है। इस घरानेके मूलपुरुष राजा वीरविक्रम सिंहने रीवाँराज्यके बरडी स्थानसे आकर गिद्धौरमें अपना राज्य स्थापन कियाथा। वीरविक्रम सिंहसे ९ पीढी बाद कोई महाराज हुये जिन्होंने वैद्यनाथ (बैजनाथ) जीका शिवमंदिर बनवायाथा। वीरविक्रम सिंहकी १४ वी पीढीमें राजा दलनसिंह हुये जिनको स. ई. १६५१ में मुगलसम्राट शाहजहांने राजाका खिताब दिया। अंग्रेजी ग्रंथकार कहतेहैं कि शाहजहांसे लेकर आजतक लगभग तीनसौ वर्षके बीचमें गिद्धौरके राजा बंगालके राजाओंमें बड़े प्रभावशाली धनाढ्य और राजभक्त होते आये हैं। ई. स. १८५७ के भयंकर गदरमें गिद्धौरनरेश सर जयमंगलसिंह बहादुर, के० सी० यस०आई० ने अंग्रेजीसरकारको मददथी और सन्थालोंका उपद्रव बडी वीरतासे रोकाथा, इसके बदलेमें के०सी० यस० आई० का खिताब तथा राजा बहादुरकी पीढीजात उपाधि पाई थी। सर जयमंगलसिंहके पौत्र वर्तमान नरेश श्रीमान् महाराजा रावणेश्वर प्रसाद सिंह बहादुर, के. सी. यस आई. हैं। श्रीमान् अंग्रेजी, संस्कृत, हिंदी और फार्सीके अच्छे विद्वान् हैं और विहारके उन राजाओंमेंसे एकहैं जो हिंदीसाहित्यकी सेवा करना अपना कर्तव्य समझतेहैं। कविलछीरामने " रावणेश्वर कल्पतरु" नामक भाषा ग्रंथ रचकर आपसे उचित सत्कार पाया है। आपकी राजभक्ति, सुप्रबन्ध और उदारतासे केवल बृटिश गवर्नमेन्टही प्रसन्न नहीं है बरञ्च सूबे विहारकी प्रजाकाभी आपपर बड़ा प्रेम है। आप सर्वप्रिय कहिलानेकी चेष्टा सदैवही करते रहते हैं, विहारलैण्ड होल्डर्स ऐसोसियेशनके आप प्रेसीडेन्टहैं और बंगालके लफ्टिनेन्ट गवर्नरकी व्यवस्थापक सभाके मेम्बरभी कईदफे रहचुके हैं। आपकी देशहित वृत्तिका केवल बंगाल विहारहीमें आदर नहीं है बरन स. ई.१९०२ में आगरेकी क्षत्रिय महासभाका जो अधिवेशन हुआथा उसकेभी आप सभापति थे। आप सोम वंशी क्षत्री हैं। स. ई. १८५९ में आपका जन्म हुआ है। दीर्घायुहोओ ! देश प्रियनरेश ! !

राविन्सन क्रूसो- डेनियलडेफ्टो साहिबके लेखानुसार स. ई. १६३२ में यार्क (इंग्लैंड) में इनका जन्म हुआ, बचपन मातापिताके अतीव लाड़ करने के कारण निरुद्यमही बीता। पश्चात् पिताने सामान्य लड़कोंकी भांति थोड़ासा लिखना पढना इनको घरहीमें सिखादिया, पिताकी इच्छा इनको वकालत का पेशा सिखानेकी थी पर इनकी अभिलाषा किसी जहाजका मुखियाबनकर

देश विदेश भ्रमण करनेकी थी। इनके माता,पिता, मित्रादिकोंने बहुत समझाया परंतु इनकी विदेशगमनकी इच्छा ऐसी प्रबल हुईकि इन्होंने किसीकी न सुनी और इसी कारण इनको कठिन आपत्तियें झेलनी पड़ीं। स.ई.१६५१में यह किसीकामके लिये हलनगरमें गयेथे और वहांसे अकस्मात्‌ किसी मित्रके फुसलाने पर बिना किसीसे पूंछे जहाजपर सवार होकर लन्डन को चलते हुये यही इनकी आपत्तिका आरंभ हुआ और भाग्यवश इनको घरलौटनेका मौका नामिला लन्डनसे जहाज पर सवार हो एफरीकाकी तरफ गये, जहाजरास्तेमें तबाह होगया सब मनुष्य डूबगये केवल राबिनसन् क्रूसो बचा जिसको कईवर्षतक एकानिर्जन टापूमें रहकर समय व्यतीत करना पड़ा। अंतमें एक जहाज उक्त टापूके किनारे जालगा जिसपर सवार होकर यह स्वदेशको आये परंतु अपनी बोलीतक भूलगयेथे। इनका सविस्तरवृत्तान्त डैनियलडिफो साहिबने "राबिनसन क्रूसो" नामक अंग्रेजी ग्रंथमें लिखाहै जिसके पढनेसे लड़कोंको यह शिक्षा होजाती है कि माता पिताकी आज्ञा भङ्गकर घरसे निकल जानेके कारण मनुष्यको अनेक आपत्तियें भोगनी पड़ती हैं और यह कि आपदाके समय निःसहाय मनुष्य किसप्रकार दृढता और धैर्य्यसे कार्य करके आपत्तिका निवारण करता है। अनेक विद्वानोंकी सम्मतिहै कि डैनियलडिफो साहिबने अलेग्जेंडर सेलकर्क नामक स्काटलैंडवासी मल्लाहके चरित्रोंके आशयपर राबिन्सनक्रूसोका अनुमानित इतिहास लड़कोंके उपकारार्थ लिखा है।

रामचन्द्र महाराज (मर्य्यादा पुरुषोत्तम)—अयोध्यामें राजा दशरथकी बड़ी रानी कौशल्याजीके गर्भसे चै० शु० ९ के दिन त्रेतायुगके अन्त में (फिरंगी विद्वानोंके मतानुसार स० ई० से ३००० वर्ष पूर्व) अवतीर्ण हुये। महर्षि वशिष्ठ तथा विश्वामित्रसे अनेक शास्त्रों तथा धनुर्वेदकी शिक्षा पाई। १५ वर्षकी उम्रमें शंकर धनुषको तोड़ जनकसुता सीताके साथ स्वयंवर विधिसे विवाह किया। २७ वर्षकी उम्रमें पिताका वचन मान १४ वर्षके लिये बनवासको गये। बनवासके १३ वें वर्ष पंचवटी बन (नासिक) में से आश्रमको सूना पाय रावणलंकेश सीताजीको हरलेगया। तत्पश्चात् किष्किन्धाके राजा सुग्रीवसे महाराजने मेल करके रीछ बन्दरोंकी बड़ी भारी सेना एकत्रकी और समुद्रपर सेतु बंधवाय लंकापर चढ़ाईकी। ३ महीनेसे कुछ अधिक कालतक युद्ध रहा जिसमें रावण सेना तथा परिवार सहित मारागया, महाराजकी जीत हुई, सीताजी को पुनः पाया, सुमित्रासुत लक्ष्मणके नामपर लंकाका नाम सौमित्रा (Sumatra) रक्खा गया तथा वहांका शासन विभीषणको सोंपा गया। वनवासकी अवधि पूरी होनेको थी एवं शीघ्रही पुष्पक विमान पर सवार होकर महाराज अयोध्या पहुंचे तथा राजसिंहासनपर विराजे। उसी साल सीता महारानीको गर्भ रहा

लेकिन रावणके यहां रही हुईको फिर बिठाल लेनेपर तीव्रलोकापवाद होते देख महाराजने उनको त्यागकर वाल्मीकि ऋषिके आश्रमपर भेज दिया जहां उनके लव तथा कुश दो पुत्र एक साथ उत्पन्न हुये । पश्चात् महाराजने नैमिषारण्यमें बड़ा भारी अश्वमेध यज्ञ किया जो एक वर्षसे कुछ अधिकमें पूरा हुआ। ऋषिवाल्मीकिभी निमंत्रण पाकर सीता तथा लवकुश सहित इस यज्ञमें पधारे थे । यज्ञके अंतमें लवकुशने सभाके बीच महाराजको ३० ॥ दिनमें २० सर्ग प्रति दिनके हिसाबसे रामायण सुनाई जिससे महाराज अतिशय प्रसन्न हुए । इसी अवसरपर सीताजीने देह त्यागदी और लवकुश दोनों पुत्रोंको. महाराजने ग्रहणकर लिया । फिर अंत समय तक महाराजने दूसरा विवाह नहीं किया और प्रतिवर्ष १ अश्वमेध यज्ञ तथा बीच २ में अग्निष्टोम, वाजपेय तथा गोमेधादि यज्ञ करते रहे । यज्ञके दिनोमें हरवक्त रत्न, धन, वस्त्र, शर्करा तथा अन्नादिके बड़े बड़े ढेर बटते रहतेथे । समय पाकर कौशल्यादि माताओंने देह त्यागी और महाराजने उनके श्राद्ध कर्म विधि पूर्वक किये। अन्तको महाराजकी आज्ञा पाकर लक्ष्मण भरत तथा शत्रुघ्न भाइयोंको देह त्यागना पड़ी । सबसे पीछे लवकुश दोनो पुत्रोंको राज्य सौंप महाराज भी सरयू बढ गुप्त होगये, वह स्थान अबतक अयोध्यासे [illegible] गुप्तार घाट नामसे प्रसिद्ध है ।

[illegible] तथा राज्यविभाग–महाराज रामचंद्रने एक [illegible] राज्य किया । [illegible] राजे आश्रित होकर उनको भेंट देते थे ।

लक्ष्मणके पुत्र अंगदको कारूपथ देशका राज्य सौंपा और उनके नामसे अंगदीय पुरी बसाई । द्वितीय पुत्र चंद्रकेतुके नामसे चंद्रकांता नामक उत्तम [illegible] मल्लभूमिका शासन सौंपा ।

मधुवन (व्रज मंडल) के राजा लवणके अत्याचारोंकी शिकायत [illegible] सुनकर महाराजने शत्रुघ्नको भेजकर वह देश विजय कराया और [illegible] शासन शत्रुघ्नको सौंपा । अंतमें शत्रुघ्नके पुत्र सुबाहुको मधुपुर ([illegible]) और [illegible] पुत्र शत्रुघातीको वैदिश नगरका शासन सौंपागया ।

[illegible] देशके राजा युधाजितके प्रार्थना करने पर महाराजने [illegible] गंधर्वोंका देश जो सिन्धुके गान्धार (कन्धार) तकथा [illegible] [illegible] शासन भरतके पुत्र तक्ष तथा पुष्कलको सौंपा ।

[illegible]

जो अब समय पाकर नष्ट होगई हैं । अनेक फिरंगी विद्वान् अनुमान करते हैं कि मध्य एशियासे आये हुये आर्य्य लोग हिंदोस्थानके असली बासियोंको हिकारत के तौरपर बन्दर तथा रीछ कहतेथे ।

महाराजका डीलडौल-मुखादि सब शरीर सुन्दर, सब देह जैसी चाहिये वैसी, कद न बहुत लम्बा न ठिगना और श्यामवर्ण था । नेत्र, जिह्वा, ओष्ठ, तालु, स्तन, नख, हाथ, पांव, और मुखका भीतरी तथा बाहरी भाग कमलाकारथे ।

मंत्री व सभासद्-सुमंत आदि कई व्यवहार ज्ञाता मंत्रीथे(देखो सुमंत),वशिष्ठ आदि कई ऋषियज्ञ कराया करतेथे और समय २ पर मंत्रीकाभी काम देतेथे । सभासद् धर्मज्ञ व नीतिपरायणथे ।

अयोध्यानगरी-सरयूके दाक्षिण तटपर १२ योजन लम्बी तथा ३ योजन चौड़ी अयोध्यानगरीकी शोभा अलौकिकथी । शहर बड़े २ महलोंसे भराहु-आथा जिनपर सुनहिला पानी फिराथा । बस्ती अत्यंत घनी थी । बाज़ार सब प्रकारकी चीजोंसे भरपूरथा। दूर २ से व्यापारी आतेथे । कुओंका जल मीठाथा। सड़कें नित्य प्रति छिड़की जाती थीं, विशेष स्थानोंपर फूल बखेरे जाते थे । शहरकोटसे घिरा हुआथा, बाहर खाई थी जिसपर . रक्षाके लिये सैकड़ों तोपें रक्खीरहतीथीं । घोडों, हाथियों तथा फौजके लिये कोटके बाहर स्थानबने हुयेथे । बगीचे भी अनेकथे । सरयूतटमें सैकड़ों स्थानस्त्रियोंको जलक्रीड़ाके लिये बने थे ।

प्रजागण-सच्चे, सदाचारी, प्रसन्न चित्त, विद्वान, पापरहित, देखने में सुंदर, उत्तम वेषधारी, खातेपीते, तन्दुरुस्त, एक दूसरेकी सहायता करनेवाले तथा मेल मिलापसे मर्य्यादानुसार चलनेवाले होकर व्यभिचारी नहीं थे ।

देशकीहालत-रामराज्यमें कभी अकाल नहीं पड़ा । कोई विशेष रोग उत्पन्न नहीं हुआ । कभी कोई अनर्थ नहीं हुआ । प्रजा सुखसेरही और आधि व्याधिसे कभी नसताई गई । एक दके किसी ब्राह्मणने विना अपराध किसी कुत्तेको मारकर बुरीतरह घायल कियाथा, महाराजने उस ब्राह्मणको भी दण्डित कियाथा ।

बालमीकीय रामायण-इसको ऋषि बालमीकिने उत्तरकांड सहित २४००० श्लोकों तथा १०० उपाख्यानोंमें रामराज्यहीमें बनायाथा । जो कुछ महाराजको अंत समयतक करनाथा वही उत्तरकांडमें लिखागया था ।

सिक्का-स. ई. १९०४ की प्रदर्शिनीमें रामचन्द्र महाराजका सोनेका सिक्का दिखाया गया था । उसका वजन ९ तोले, व्यास २½ इंच, सोना बहुत चोखा

और एक तरफ रामराज्याभिषेकका चित्र तथा दूसरी तरफ प्राचीन लिखावटका लेख है जो अत्यन्त प्राचीन होनेके कारण घिस गया है और पढ़ा नहीं जाता।

रामदासबाबा (प्रसिद्ध सङ्गीतज्ञ)--यह सूरदासजीके पिताथे और गाने बजाने में परम निपुणथे। स० ई० १५५० में अकबर बादशाहके दर्बारके गवैयोंमें नौकर थे। जब बैरमखां खानखानाने बगावतकी तौ रामदासजी उसके तरफ़दार हुये। बैरमखाँनें प्रसन्न होकर १ लक्ष मुद्रा इनको इनाम दियेथे। यह फ़ारसी तथा संस्कृतके अच्छे विद्वान थे और सङ्गीत विद्या में तानसेनके सिवाय कोई दूसरा इनकी समानता नहीं कर सकता था। अबुल फ़ज्ल लिखताहै कि रामदास ग्वालियरसे आयाथा और इतिहासकार बदायूनी लिखताहै कि रामदास लखनऊसे आकर आगरेमें बसाथा।

रामदैवज्ञ (ज्योतिषकार)--इनके पूर्वज बरारसे काशीमें आरहे थे। अनन्त दैवज्ञ गर्गगोत्री इनके पिता थे और "नीलकण्ठी" ज्योतिष ग्रंथके रचयिता नीलकण्ठ दैवज्ञ इनके भाई थे। यह बादशाह अकबरके दर्बार में नौकरथे। निम्नस्थ ग्रंथ इनके बनाये हुये हैं:–

मुहूर्त चिन्तामणि, रामविनोद, यंत्रप्रकाश और टोडरानन्द । टोडरानन्द राजाटोडर मलके नामसे बनाया था।

राम मिश्र शास्त्री, पं॰महामहोपाध्याय–आपके पूर्वज अलवरसे२८ कोसपर किसी ग्रामके रहनेवालेथे। आपका जन्म काशीमें वि. सं. १९०४ की साल पं० शालिग्रामाचारीजीके घर हुआ था। आपके पिता योग्य पंडित थे, प्रथम कई वर्षतक आप उन्हींसे पढ़ा किये। पश्चात् पं० राधा मोहन भट्टाचार्य तर्कभूषण तथा पं० म० म० कैलासचन्द्र शिरोमणि भट्टाचार्यसे आपने अनेक शास्त्रोंकी शिक्षा सम्पूर्णकी। फिर संस्कृत कालिज बनारसमें आपने सरकारी नौकरीकी और अवकाश मिलने पर सदैव अनेक विषयोंपर सैकड़ों प्राचीन ग्रंथ विचार सहित देखते रहे। जुबिलीकी साल गवर्नमेन्टने महाविद्वानोंमें गणना करके आपको पं०महामहोपाध्यायकी उपाधिसे विभूषित किया जिससे वास्तवमें अपार विद्याकी प्रतिष्ठा हुई। आप अंग्रेजी भाषाके भी ज्ञाता हैं और सरलता पूर्वक उक्त भाषामें बात चीत करसकतेहैं। स० ई० १९०२में आपने कालिजकी नौकरीसे पेन्शनली। अब आप स्वतंत्र होकर बहुधा भ्रमण करते रहतेहैं और सर्वथा त्यागी होकर किसीसे कुछ इच्छा नहीं रखते। आप सदाचार सम्पन्न, आचार शुद्ध तथा विलक्षण बुद्धिके महापुरुष हैं। सदैवसे निजपर साधारण विद्यार्थियोंको पढ़ानेकी अपेक्षा ग्रंथ रचनामें आपकी अधिक रुचि है किंतु सुपा

, विशेष बुद्धिमान विद्यार्थी मिलजानेपर आप अवश्य उसका संग्रह करलेते हैं। पं० मोहनलाल वेदान्ताचारी, पं० अम्बिकादत्त व्यास, पं० देवीसहाय (धर्म दिवाकर सम्पादक) तथा पं०भागवताचार्य सरीखे प्रसिद्ध पंडित आपहीसे पढ़कर ऐसे विद्वान हुये। आप पढाते समय निज शिष्योंको धर्म शास्त्र तथा नीतिके अनेक उपदेशभी इस रीतिसे करते रहतेहैं कि जो उनके चित्त पटलपर अंकित होकर चिरस्थाई रहतेहैं। वैसे तो आप संस्कृत विद्याके सागरहैं परंतु विशेषतः दर्शन विषयमें आपको अपूर्व योग्यता प्राप्त है। दर्शन विषयके बड़े २ गूढरहस्य आपके करतल पदार्थकी भांति हैं। आपके मिलनेसे चित्तमें एक प्रकारका उत्साह उत्पन्न होकर हिम्मत बंधती है और आपकी बात २ में कोई न कोई नीतिमय उपदेश झलकता है। काशीमें गंगापार राम नगरमें आपका निवास स्थान है। दशास्वमेध घाटकी तरफ बंगाली टोलामें भी आपका एक मकान है वहां कभी २ आकर आप बैठते हैं। स. ई. १९०४ में आपका स्वास्थ्य अच्छा है, केशव स्वामी आपके सुयोग्य पुत्र हैं और निम्नस्थ ग्रंथ आपके रचे हुये हैं:-

मंत्रमीमांसा, व्रात्यसंस्कार मीमांसा. उद्वाह समय मीमांसा, तुरीय मीमांसा, विग्रह पूर्ति, दत्तक विजय वैजयन्ती, सर्व वेदसार निर्णय, सुबुद्ध बोध व्याकरण, बलाबल परीक्षा, दर्शन रहस्य, रत्न परीक्षा तथा अनेक और। आप श्रीसम्प्रदायके वैष्णव हैं, स्वामी आपकी परम्पराकी उपाधि है। सनातन धर्मका समर्थन करनेको बुलाये जानेपर आप अनेक अवसरोंपर दूर २ शहरोंमें पधारते रहे हैं तथा अबभी पधारते रहते हैं।

राम मोहनराय राजा (ब्रह्मो समाजोंके संस्थापक)—स० ई० १७७४ में आपका जन्म राधानगर ज़िला बर्दवानमें हुआ था, रामकेतनराय आपके पिता थे। बंगाली भाषा मकानपर पढ़कर राम मोहन बाबू पटनाको पधारे और वहां रहकर उन्होंने अर्बी, फ़ारसी, तथा रेखागणित सीखी। तत्पश्चात् बनारसमें जाकर संस्कृत पढ़ी। १६ वर्षकी उम्रमें मूर्ति पूजाके खण्डनमें एक पुस्तक रची। पश्चात् तिब्बतमें जाकर बौद्ध मतके ग्रंथ पढे २२ वर्षकी उम्रमें स्वदेशको लौटकर आये और अंग्रेजी पढ़नेलगे। स० ई० १८०३ में पिताका देहांत होनेपर उन्होंने रङ्गपुरके कलेक्टरके दफ़्तरमें नौकरी करली और थोड़ेही दिनोंमें तरक्की पाकर उक्त दफ़्तरमें दीवानके पदको प्राप्त हुये। नौकरी करके उन्होंने इतना धन कमाया कि १ हज़ार रुपया वार्षिक आयकी जमीन्दारी खरीदली। राम मोहन बाबू विद्याके बड़े रसिकथे, नौकरी करतेर उन्होंने उच्च श्रेणीका गणित तथा लैटिन, ग्रीक, हेब्रू आदि भाषायें पढ़-लीथीं और अनेकानेक मतोंके धर्म सम्बन्धी ग्रंथोंको विचार सहित पढ़कर ईसाई मतको सर्वोत्तम ठहरादिया था जिससे उनके हज़ारों शत्रु हो गये थे। वेदान्त दर्शनका अनुवाद उन्होंनें हिंदी, बङ्गला, और अंग्रेज़ीमें किया था।

एक अंग्रेजी स्कूल तथा स्वरचित ग्रंथोंके छापनेके लिये एक यंत्रालय भी जारी किया था और दो पुस्तकें सतीकी चाल मिटानेके लिये भी छपवाई थीं। स० ई० १८२८ में उन्होंने कलकत्तेमें ब्रह्मो समाज स्थापन की और अपने मन्तव्योंके प्रकाश करणार्थ कई पुस्तकें गीतों तथा भजनोंकी बनाई । स० ई० १८२७ में एशियाटिक सोसाइटी बंगालने उनको अपना मेम्बर नियत किया। स० ई० १८३० में वह तख्त दिल्लीकी तरफ़से राजदूत नियत करके इङ्गलैंड भेजे गये और असाधारण प्रतिष्ठाके भागीहुये। स०ई०१८३२में इङ्गलैंडसे फ्रांसको पधारे और वहांके सम्राटके साथ दोदफे भोजन करके सर्व्वोच्च प्रतिष्ठाको प्राप्त हुये। फ्रांसमें कुछ दिन ठहरकर उन्होंने फ़रासीस भाषा सीखी और पश्चात् इङ्गलैंड में वापिस आये और वहांके बादशाहकी तरफ़से राजाका खिताब पाया। स० ई० १८३३ में बृस्टलनगरमें मरे जहां उनकी कबर अबतक मौजूद है। ब्रह्मो समाजी लोग जाति पांति तथा खानपानका कुछ विचार नहीं रखते हैं। राजा राममोहन रायके रामप्रसाद राय नामक पुत्रथा जिसके वंशज अब तक कलकत्तेमें हैं। चौबीस पर्गना आदि बंगालके कई ज़िलोंमें उनकी ज़मीदारी है।

रामसिंहजी (महाराज: सवाई सर रामसिंह, जी. सी. यस. आई. जयपुर नरेश)—यह निज पिता महाराजा जयसिंह ३ के पीछे दो वर्षकी उम्रमें स० ई० १८३८ की साल गद्दीपर बैठे। बाल्यावस्थामें राजकाज बृटिश पोलीटिकेल एजेन्ट करता रहा और बालिग होनेपर स० ई० १८५७ की साल राज्यका पूरा अधिकार आपको सौंपदियागया। सन् ५७ के उपद्रवमें आपने सरकार अङ्गरेज बहादुरकी तन मन धनसे सहायताकी जिसके बदले में कोटी कासिमका परगना तथा पुत्रगोद लेनेका अधिकार आपको दियागया। आप बड़े चतुर, प्रजा पालक तथा विद्योन्नति करनेवाले थे। जयपुरमें शिल्पमहाविद्यालय, रामनिवास बग़ीचा, अजायबखाना, संस्कृत कालिज और जलकी न्यूनता मिटानेके लिये पानीके नल आपहीके समयमें बनाये गये थे। आपने अङ्गरेज़ी व संस्कृत कालिजों तथा पुत्री पाठशाला और शिल्प महाविद्यालयके वार्षिक व्ययके लिये ८० हज़ार रु० राजकोषसे नियत कियेथे। स० ई० १८६८ के अकालमें आपने प्रजाकी बड़ी सहायताकी थी। इसपर प्रसन्नहोकर बृटिशगवर्नमेंटने आपकी सलामी तोपके १९ फैरसे २१ फैरबढ़ाईथी। स० ई० १८७५ में आप उस कमीशनके मेम्बर नियत किये गयेथे जो गैकवाड़ बरोडापर ब्रटिश रज़ीडेन्टको विष देनेके मुक़द्दमेका फैसला करनेके लिये गवर्नमेंट आफ़-इन्डियाकी तरफसे नियत हुआ था। उक्त कमीशनमें ३ हिन्दोस्थानी राजे और दो अंग्रेज अफ़सर शामिल थे। तीनोराजाओंने गैकवाड़ को निर्दोष और दोनों अङ्गरेज़ी अफ़सरोंने राजाको दोषी ठहरायाथा, परंतु गव-

नेमेंटने गैकवाड़को राज्यहीन करदिया। उसी साल शाहजादे वेल्ज़ने जयपुर पधारकर ऐल्बर्टहालकी नींवका पत्थर रक्खाथा। आप दोदफे गवर्नरजेनरल हिन्दकी व्यवस्थापकसभाके मेम्बर भी रहेथे। जयपुरकी प्रजाको सुप्रख्यात महाराजजयसिंह सवाई की मृत्यु (स० ई०. १७४३) के पीछे आपके समयका-सा अमनचैन कभीनहीं मिलाथा।अङ्गरेजों और मेमोंसे आपका खूब मेल रहताथा। स० ई० १८८० में वैकुंठवासी हुये और श्रीमान्‌के दत्तक पुत्र सरसवाई, माँधौसिंहजी (वर्तमान नरेश) गद्दीपर बैठे। महाराजरामसिंहने अवनतिको प्राप्त हिन्दूधर्म तथा हिन्दूजातिके उद्धारके लिये अनेक उपाय कियेथे।

रामानन्दगुरू–(रामानन्दीयसम्प्रदायके आचार्य) भक्तमालेके लेखोंसे विदित होता है कि यह दक्षिण देशके रहनेवाले थे और किसी सन्यासीके शिष्यथे। एक दिन यह दर्शन करणार्थ रामानुज स्वामीकी गद्दीके महन्त राघवानन्दके पास जानिकले, महन्तजीने इनसे कहा कि "तुम्हारी आयु अब बहुत कम रहि गई है जो कुछ करना होकरलो"। यह सुन इन्होंने उक्त महन्तको गुरु करलिया।। जब मृत्युका समय निकट आया तब गुरूने प्राण ब्रह्मांडमें चढ़वाकर इनको समाधिस्थ कर दिया और मृत्युकाल टल जानेपर प्राण वायू उतार कर बहुकाल जीनेका वरदान दिया। कुछ दिनोंतक गुरू सेवामें रहिनेके बाद रामानन्दजी बद्रिकाश्रमको पधारे और वहांसे लौटकर काशीजी में पञ्च गंगाघाट पर कुछ दिनोंतक रहे। पश्चात् लौटकर जब यह निज गुरूके पास फिर पहुंचे तौ वहां लोगोंने इन्हें पंक्तिमें नहीं लिया क्योंकि यह रामानुजीय कड़े आचारका पालन नहीं कर सकेथे। यह देख गुरूकी आज्ञानुसार इन्होंने अपना नवीन पन्थ चलाया, जो रामावत या रामानन्दीय नामसे विदित है। समय इनका वि. सं. १४०० से १५०० के भीतर है। इनके अनेक शिष्योंमेंसे कबीर, रैदास, धना, सेन तथा पीपा इत्यादि १२ शिष्य मुख्यथे जिन्होंने इस देशमें भाषा कविता तथा वैष्णव धर्मका बहुत कुछ प्रचार किया और यह सिद्ध कर दिखाया कि " जातिपांति पूंछै नहिं कोई। हरिको भजै सो हरिको होई "। रामानन्दियोंकी प्रधान गद्दी जयपुर राज्यान्तर्गत गलता स्थानमें हैं, वह स्थान अत्यंत रम्य है और वहां कई बड़े २ मन्दिर वर्तमान हैं जिनमें श्री सीतारामकी मूर्तियें विराजमान हैं। गुरु रामानन्द भाषाके सुकविथे। उनकी स्फुट कविता लोकप्रसिद्ध है और " रामानन्दीय वेदान्त " उन्हींका बनाया हुआ है।

रामानुजस्वामी–(श्री सम्प्रदायके आचार्य) काञ्चीपुरी के निकट भूतपुरीमें केशव यज्वा नामक ब्राह्मणके घर कान्तिमतीके उदरसे जन्मे। भूतपुरी दक्षि णमें तिरूवल्लूरकेरलवे इस्टेशनसे १२ कोस दक्षिण है। १६ वर्षकी अवस्थामें चारों वेद कण्ठ करलेने पर इनका विवाह कर दिया

गया, विवाहसे कुछ दिनों पीछे इनके पिताका देहान्त होगया. पश्चात् इन्होंने काञ्चीपुरीके पं० यादव प्रकाश (यादवगिरि) तथा कावेरी नदीके तटस्थ रंगपुरमें यामुनाचार्यके शिष्य पूर्णाचार्यसे व्याकरण, न्याय, वेदांत आदि अनेक शास्त्र पढ़े और वेदांको शास्त्रीय तरकों सहित विचारा । इनकी स्त्री रक्षकाम्बा झगड़ालूथी । अतएव उसके स्वभावसे दुःखित होकर एक दिन इन्होंने उसको नैहर पहुँचा दिया और आप सन्यास ग्रहण कर लिया। फिर देशाटन करते हुये बद्रिकाश्रम गये और वहांसे लौटते हुये अनेक तीर्थोंके दर्शन किये । संन्यास ग्रहण करनेसे पहिले इन्होंने काञ्चीपुरीके राजाकी कन्यापरसे पिशाच बाधा दूरकरके बहुत द्रव्य तथा सत्कार पाया था । बद्रीनाथसे लौटकर कपिल तीर्थ गयेथे और वहांके राजा विट्ठल देवको शिष्य बनाकर तोंडीर मंडल आदि अनेक ग्राम पाये । कपिल तीर्थसे श्रीरंगपट्टनमें आकर वेदान्त सूत्रोंपर श्रीभाष्य, वेदान्तप्रदीप, वेदान्तसार, वेदान्त संग्रह और गीता भाष्यादि अनेक ग्रंथ रचे । पश्चात् बहुतसे शिष्योंके साथ चोलमंडल, पाण्ड्यमंडल, कुर्ग इत्यादि देशोंमें विशिष्टाद्वैत मतका प्रचार किया और कुर्ग नरेशको दीक्षित करके केरलदेश (मालावार) के पंडितोंको जीता । अंतमें फिर द्वारिका, मथुरा, काशी अयोध्या, बद्रिकाश्रम, नैमिषारण्य, पुरुषोत्तमपुरी (जगन्नाथ) और वेंकट गिरि की यात्रा की । पुरुषोत्तमपुरीमें बौद्धोंको परास्त किया । परमधाम सिधारनेसे पहिले भूतपुरीमें अपनी मूर्ति स्थापनकी जो अबतक वहां एक मंदिरमें विद्यमान है । स. ई. १०१७में जन्म । स. ई. ११३७ में श्रीरंगपट्टनमें मृत्यु ।

शैव लोग इनको दुःख देनेके अनेक उपाय करते रहे, परंतु कुछ नकरसके । इनके जीवनकालहीमें वैष्णवमतका खूब प्रचार होगया था और इनके अन्तसमय वैष्णवोंके ७०० मन्दिर मौजूद थे । रामानुजीयसंप्रदायके विशिष्टाद्वैतमतवादी वैष्णव कहते हैं कि मायाविशिष्ट ब्रह्महै अर्थात जीव ईश्वरसे अलग होकर जन्म लेता है और मरनेपर ईश्वरमें मिलजाता है ।

रायप्रवीण—देखो प्रवीणराय पातुरी.

रायपिथौरा—देखो पृथ्वीराज.

ऋतुपर्ण—यह सूर्यवंशीनरेश महाराज रामचन्द्रसे अनेक पीढी पूर्व हुये । नैषध (विहार) का राजा नल अपना राज्य जुयेमें हारकर इन्हींके दरबारमें घोडे हांकनेपर नौकर हुआ था । राजा ऋतुपर्ण चौंसर खेलनेमें अद्वितीय थे । इनकी राजधानी रिजोर जिला एटामें थी। रिजोरका प्राचीन संस्कृत नाम रजित क्रांति है । भागवतके लेखानुसार रामचन्द्र इनसे १३ पीढी पीछे हुये और शिव पु०के लेखानुसार ११ पीढी पीछे हुये ।

रिषभदेव–(जैनियोंके प्रथम तीर्थंकर)-यह राजा नाभाके पुत्र थे। इनके १०० पुत्र हुये जिनमेंसे सबसे बड़ा भरत था। रिषभदेवजीने १०० यज्ञ करके पुत्रोंको ज्ञान उपदेश किया और ज्येष्ठपुत्र भरतको राजपाट सौंप आप तप करने वनको सिधारे। भागवतमें लिखा है कि जब तप करते २ इनके शरीरमें केवल हाड़ चामही रहगये तौ दक्षिणमें जाकर इन्होंने जैन मतका उपदेश किया।

इनको आदि नाथभी कहते हैं।

जैनियोंके निम्नस्थ २४ तीर्थ कर हैं:-

ऋषभनाथ, अजितनाथ, संभवनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ, पद्मप्रभु, सुपार्श्वना० चन्द्रप्रभु, पुष्पदन्तना० शीतलना० श्रेयांशना० वासुपूज्यना० विमलना० अनंतना० धर्मना० शांतिना० कुंथुना० अरना० मल्लीना० सुव्रतना० नेमिना० नेमीना० पार्श्वना० और महावीर। जैन मतमें जगतकी उत्पत्ति नहीं है न कोई ईश्वर है। उनके मतमें संसारी और मुक्त दो प्रकारके जीव हैं। ये लोग अपने तीर्थकरों और सिद्ध देवताओंको मानते हैं। किसी प्राणीका वध नहीं करना यही जैन धर्मकी सार नीति है। जानवरोंपर जैनियोंकी बड़ी दया है, उन्हींके उद्योगसे स्थान २ पर पशुशालायें खुली हैं। जैनियोंके मंदिरोंमें इन्हीं जैन तीर्थ करोंकी प्रतिमा चांदी, स्वर्ण तथा रत्नोंसे जटित होती हैं। जैनियोंमें श्वेतांबर और दिगंबर दो प्रकार होते हैं। दिगंबरोंकी मूर्तियें नङ्गी होती हैं। उदारता, सुशीलता, पुण्य और तप जैनियोंके ४ मुख्य धर्म हैं। स. ई. १८९१ की मनुष्य गणनाके समय हिन्दोस्तानमें १४१६६३८ जैनथे। जूनागढ राज्यांतर्गत गिरिनारमें ऋषभदेवजीका मंदिर है जिसमें अन्य सब तीर्थकरोंकीभी मूर्तियें हैं। आबू पर्वत परभी पट्टन (गुजरात) वासी विमलसाह जैनीका बनवाया हुआ रिषभदेवजीका मंदिर है जिसके तैयार करानेमें १८॥ करोड रुपये खर्च हुये थे।

रुक्मिणी(श्रीकृष्णकी पटरानी)-यह विदर्भ (वरारमें वीदर) के राजा भीष्मककी कन्या थी;भीष्मकका विचार इसका विवाह श्रीकृष्णजीके साथ करनेकाथा, लेकिन इसके भाई रुकुमने हठ पूर्वक इसका विवाह चंदेरीके राजा शिशुपालसे ठहरा दियाथा। रुक्मिणीका श्रीकृष्णके चरणोंमें पहिलेहीसे अनुरागथा एवं विवाहके ऐनवक्त उसने अपनी करुणामय विनती पत्रमें लिखकर एक वृद्धब्राह्मणके हाथ श्रीकृष्णजीके पास भेजी। तुरंत महाराजद्वारिकासे धाये और बल पूर्वक रुक्मिणीजीको लेगये। द्वारिका पहुंच महाराजने बड़ी धूमधामसे विवाहकिया और रुक्मिणीको अपनी पटरानी बना लिया।

रूचक पंडित (अलङ्कार सर्वस्वकेरचयिता)—यह काश्मीरके राजानक वंशके सभालंकारथे। रुय्यकभी इन्हींका नामथा। वि० सं० की ११ वीं शताब्दीमें हुये।

रूद्रट (काव्यालंकारके निर्माता)—कश्मीर में वि. सं. की ११वीं शताब्दीमें हुयें। इनके रचे काव्यालंकार पर अभिनवगुप्त आचार्यने वृत्तिरचीथी और नेमिनामक साधूने वि. सं. की १२ वीं शताब्दीके प्रथम पादमें उसपर टीका रचाथा।

रुस्तम (पृथ्वी प्रसिद्ध ईरानी पहिलवान)—यह ज़ालका पुत्र तथा शामका पौत्र बड़ा बली पहिलवान होकर ईरान(फारिस) के बादशाह कैकाऊसका सेनापति था। मल्लयुद्ध तथा शस्त्रविद्यामें निपुणथा और रणभूमिमें परम भयानक शत्रुहोनेके कारण मध्यएशियाके सबराजे इससे थर २ कांपते थे। अनेक मल्लयुद्धोंमें इसने विजय प्राप्त की थी और अफ़रासियाव इत्यादि बड़े २ पहिलवानोंको पछाड़ा था। रुस्तमहीकी सहायतासे अफ़रासियावकाराज्य जमशैदके पुत्र कैकुबादको मिलाथा। अन्तमें शत्रुओंने धोखा देकर इसके बेटेको इससे लड़ाकर मरवाडाला। पश्चात् इसको भी एक अन्धे कुंए में जो नाजुक लकड़ियोंसे पटा हुआथा और जिसके भीतर भाले गढ़ेहुये थे गिराकर मारडाला। रुस्तमने मरते वक्त अपने धोखा देनेवाले शत्रूको तीरमारकर बध किया। स. ई. से प्रायः १८०० वर्ष पूर्व हुआ। रुस्तमशब्द आजकल वीरता वाची हो रहा है।

रूपमती रानी—मैलकम साहब कृत इतिहासमें लिखा है कि " रूपमती सारंगपुरकी किसी वेश्याकी कन्या, देखने भालने में सुंदर और गाने बजानेमें निपुणथी, कविताभी करतथी, सैकड़ों राग उसके बनाये माल्वादेशमें अबतक प्रसिद्ध हैं, जिनको रासधारी और कलावंत लोग कंठ सीखतेहैं। माल्वाके राजा बाजबहादुरने रीझ कर उसको अपनी पटरानी बनायाथा। रंगमहलके खंडैर जो बाजबहादुरने रूपमतीके लिये बनवाया था अबतक पड़े हुयेहैं। इस प्रकार राग विलासमें ७ वर्ष बीतने पायेथे कि स. ई. १५७० में मुगल सम्राट अकबर के सेनापति आदमखाँने माल्वापर चढाईकी और बाजबहादुरको परास्त किया "। खफ़ीखाँ इतिहासकार लिखताहै कि " जब बाजबहादुर हारकर भागा तो रूपमती आदमखाँ (अहमदखाँ) के हाथपडी, आदमखाँ के हृदय में रूपमतीके दुःख, विरह और विनतीसे किंचितलाज दया नहीं उत्पन्न

होतीथी और सच्चे प्रेमकी ख़बर नरखकर वह नाना विधिसे उस पराधीन स्त्रीको सताता था, ऐसी आपत्तिकी दशामें रूपमतीने मिलनेका एक समय नियत किया और खूब सजकर मुंहपर रूमाल डालकर लेटरही, नियत समय पर जब आदमखाँ आया तौ दासियों ने रूपमतीको जगाया पर मुर्दा पाया क्यों कि उसने विष खालियाथा। रूपमतीका प्रेम अपने प्रियतमके साथ अत्यंत बढ़ा हुआ था जबसे बाज बहादुर आंखों ओट हुआ था वह विकल हो यह पद पढ़तीथी और फूट २ रोती थी–

दोहा–तुम विन जियरा रहतहत, मांगत है सुखराज।
रूपमती दुखिया भई, बिना बहादुर बाज॥

उज्जैनमें एक तालावके बीच रूपमती और बाज बहादुर दोनोंकी क़बरें हैं। भूमण्डलके इतिहास में बहुतकम ऐसे दो स्त्री पुरुषका वृत्तांत मिलता है जिन में ऐसा सच्चा और निष्कपट प्रेमहो, जिनके चित्त परस्परकी प्रीत से ऐसे आकर्षित हों और जिनकी चित्तकी वृत्तियों में इतनी समानता पाई जाती हो।

रूपसनातनगोस्वामी–(वैष्णव धर्म प्रवर्त्तक). भक्तमालकी टीकाके अनुसार रूप और सनातन दोनों भाई बङ्गदेशमें बादशाही पदाधिकारीथे, चित्त में वैराग्य उदय होनेके कारण सर्वस्व छोड़ श्री नित्यानन्द महाप्रभूके शिष्य होगये और गुरूकी आज्ञानुसार वृंदावनमें आकर वैष्णव धर्मका प्रचार किया। नित्यानन्द म० श्रीकृष्ण चैतन्य म० की सम्प्रदायके थे। मिस्टर ग्राउसके लेखानुसार उस समय थोड़ेसे झोंपड़ोंके सिवाय वृंदावनमें बिलकुल वनथा, रूप तथा सनातन दोनों भाइयोंने निज शिष्य नारायण भट्टकी सहायता से तीर्थों और देवस्थानों का पता लगा २ कर मूर्तियें स्थापन कीं। रूपगोस्वामीके सेव्य ठाकुर श्री गोविन्ददेवजी थे जिनका बहुत ऊंचा मन्दिर जयपुरके राजा मानसिंह ने वि० सं० १६४५ में१३ लाख रुपयेके खर्चसे वनवायाथा। सनातन गोस्वामीके सेव्यठाकुर मदनमोहन जीथे जिनका मंद्रिर किसी महाशय गुणानन्द नामकका बनवाया हुआ अबतक वृंदावनमें मौजूद है। Catalogus Catalogrum के अनुसार निम्नस्थ ग्रंथ रूप गो स्वामी कृत हैं:–उज्ज्वल नीलमणि, उद्धवदूत, कार्पण्य पुञ्जिका, गोविंद बिरदावली, चैतन्याष्टक, दानकेलिकौमुदी, पद्यावली, प्रीतसन्दर्भ, विदग्ध माधव नाटक(स०ई० १५४९), व्रजविलासस्तव, संक्षेपामृत, उत्कलिकावल्लरी (स० ई० १५५०), उपदेशामृत, गंगाष्टक, गौरांगसुर कल्पतरु, छन्दोष्टादशक, नाटक चंद्रिका, परमार्थसन्दर्भ, प्रेमेन्दुसागर, मथुरा

महिमा, यमुनाष्टक, ललित माधव नाटक, बिलाप कुसुमाञ्जलि, शिक्षादशक, साधन पद्धति, हंस दूतकाव्य, हरेकृष्णमहामंत्रार्थनिरूपण, भक्तरसामृतसिन्धु, मुकुन्दमुक्तारत्नावली टीका, रसामृत और हरिनामामृत व्याकरण। Catalogus Catalogorum के अनुसार यह ग्रंथ सनातन गोस्वामी कृतहैं-उज्ज्वलरस करण, भक्ति बिन्दु, भक्ति रसामृत सिन्धु, भागवतामृत, विष्णुतोषिणी, हरिभक्ति विलास, उज्ज्वलनीलमणिटीका, भक्ति सन्दर्भ, योगशतक व्याख्यान और स्तवमाला। रूप और सनातन दोनों भाइयोंकी अस्थि वृंदावनमें श्रीराधा दामोदरके मंदिरमें संचितहै।

रेवती-गुजरातके सूर्य्यवंशीराजा रैवतकी कन्या श्रीकृष्णजीके भाई बलरामजीको विवाही गई थी और इनसे दो पुत्र उत्पन्न हुयेथे। स्वरूप इनका बड़ा सुंदर था और कद लम्बाथा। इनके पिता रैवतने कुशस्थली नामक नगरी बसाई थी। इन्होंने अंतमें सत किया।

लल्लभट्ट (प्रसिद्ध ज्योतिषी)-इनके बापका नाम त्रिविक्रमभट्ट और दादे का नाम शाम्बु था। आर्य्यभट्टीयतंत्रके टीकाकार परमेश्वरजी लिखते हैं कि, प्रसिद्ध ज्योतिषी आर्य्यभट इनके गुरुथे । इन्होंने पठन पाठनके अर्थ आर्य्यभटादि विद्वानोंके ज्योतिष सिद्धांतोंको श्रेणीबद्ध करके सुगम किया और उसमें अपनी तरफसे अनेक विशेष बातें सम्मिलित करके "लल्लसिद्धांत" रचा। "शिष्यधी वृद्धिदा" तथा "पाटीगणित" नामक ग्रंथभी इन्हींके बनाये हुये हैं। पश्चात् भास्कराचार्यने इनके अनेक ज्योतिषग्रंथोंको विचारसहित पढ़ कर "सिद्धांतशिरोमणि" नामक ग्रंथ बनाया था । लल्लजी पटनामान्तके रहनेवाले थे और वि. सं. की छठी शताब्दीके उत्तरार्द्धमें हुये।

लल्लूलालजी (भाषाकवि)--यह आगरेके रहनेवाले सहस्रावदीच ब्राह्मणथे भाषागद्य लिखनेकी प्रणाली प्रथम इन्हींने चलाई। सीधे दोहे, चौपाई, सोरठे, छंदभी अच्छे लिखते थे और लालकविनामसे पद पूर्ति करते थे। निम्नस्थ ग्रंथ जिनमेंसे बहुधा खड़ी बोलीमें हैं इन्हींके बनाये हुयेहैं-

१. प्रेमसागर (भागवत दशमस्कंधका भाषानुवाद).
२. वार्तिकराजनीति (नारायणपंडितके हितोपदेशका भाषानुवाद व्रजभाषामें)
३. सभाविलास.
४. माधवविलास.
५ लालचंद्रिकानामक विहारी सतसईका तिलक.

६. सुंदरदासके प्राचीन भाषानुवादसे सिंहासनबत्तीसी का खड़ी हिंदी बोली में अनुवाद ।

७. शिवदासकृत संस्कृत वेतालपंचविंशतिकाका भाषानुवाद सूरतमिश्रने जयसिंह सवाई जयपुर नरेशके हुक्मसे कियाथा। लल्लूने सूरतमिश्रके अनुवाद का उलथा हिंदोस्तानी खड़ीबोलीमें किया।

८. मोतीलालने कामकन्दला माधवानलनाटकका भाषानुवाद एक संस्कृत-के प्राचीन ग्रंथसे स० ई० १७०० के लगभग कियाथा। लल्लूने इसी भाषानुवा-द का उलथा हिंदोस्थानी बोलीमें किया।

९-कवि कालिदासकृत शकुन्तलाका उलथा हिंदोस्तानी बोलीमें।
लल्लू स० ई० १८०३ में विद्यमानथे।

ललितादित्य-(काश्मीरका प्राचीन राजा)-इसने स० ई० ६९७ से ७३३ तक कश्मीरका राज्य भोगा और कन्नौज, गौडदेश, कालिङ्ग,तथा कर्नाटकके राजाओंको परास्त किया और अनेक द्वीपोंपर अपना अधिकार जमाया। यह भव-भूति कवीश्वरको कन्नौज से अपने साथ काश्मीर लिवालेगयाथा। कश्मीरमें अने-क मंदिरभी इसने बनवाये थे। अन्तमें हिमालय पारकरके चीनपर चढ़ाई करने जाताथा लेकिन रास्तेहीमें मरगया।

लहिनासिंहसरदार-इनके बाप सरदार देसासिंहको महाराजा रणजी-तसिंहजीने सतलज और रावीके बीचके पहाड़ी मुल्कका गवर्नर नियत किया था। स० ई०१८३२ में सरदार देसासिंह के सिधारने पर सरदार लहिनासिंहको गवर्नरी का ओहदा मिला और उन्होंने बड़ी योग्य रीति से मुलकका इन्तजाम किया। अंतमें जब खालसा फौज बिगडी तौ सरदार लहिनासिंह समय टालकर तीर्थाटनको चलेगये। जब फिसाद कुछ कुछ ठंडा पडा तो लाहौरके ब्रिटिश रेजीडेन्टके बुलाने से वापिस आये परंतु उपद्रव फैलने के चिह्न देखकर पुन स० ई० १८४६ में बनारसको पधारे और वहीं परलोकगामी हुये। यह बड़े शिल्पकार तथा आविष्कार थे, खालसा फौजके तोपखानेमें इन्होंने बड़े २ सुधा-र किये थे। कौमके जाटथे और खालसापंन्थको मानते थे। आपके सुयोग्य पुत्र सरदार दयालसिंह मजीठिया ज़िला अमृतसर के नामी रईस बृटिश गवर्नमेंटके कृपाभाजन हैं।

लक्ष्मणजी-यह महाराज रामचंद्रजीके छोटे भाई, कोसलेश राजा दशरथके पुत्र सुमित्राजीके गर्भसे त्रेतायुग के अन्तमें उत्पन्न हुये थे ।

महाराज रामचन्द्रके साथ इनका भ्रातृ स्नेह अगाध था एवं वनवासको उनके साथही गये थे। वनमें जब महाराज आराम करते तो यह धनुषबाण लेकर चौकसी किया करते थे। महाराजका इशारा पाकर इन्होंने शूर्पनखाके नाक कान काट डाले थे और अन्य सब लड़ाइयोंमें जो राक्षसोंसे हुई महाराजके साथ २ बड़ी वीरतासे लड़े थे। यह वीरत्वकी मूर्ति होकर बड़े खरे स्वभावके थे। धनुषयज्ञके समय राजा जनक पर, महाराजको लौटानेको जानेके समय भरतजीपर और सीतामाताकी सुधि भूलनेके कारण सुग्रीवपर इनका क्रोध करना विदित है। सियास्वयंवरके अवसर पर जो विवाद इनके और परशुराम जीके बीच हुआ था उससे इनका स्वभाव बहुत कुछ जाना जासकताहै। रावणको सबैन तथा सपरिवार नष्ट करके महाराजने लक्ष्मणजीके नामपर लङ्काकनाम सौमित्रा (Sumatra) रक्खा और उसका शासन बिभीषणको सौंपा। लक्ष्मणजी अपनी माता सुमित्राके सम्बंधसे सौमित्र कहलाते थे। राज्यसिंहासन आरूढ होनेपर महाराजने लक्ष्मणजीको किसी दूर देशके शासनपर नहीं भेजा किन्तु राजकाजकी देख भाल के लिये अपने पास ही उनको रक्खा तथा अयोध्याके समीपमें उनको बहुतसा मुल्क दिया जिसमें उन्होंने लखनपुर नामक नगर बसाया जो अब लखनऊ नामसे प्रसिद्ध है। औरंगजेबने पवित्र स्थान जानकर लखनपुरके खण्डैरोंपर एक मसजिद बनवादी थी। यह मसजिद अब लखनऊमें किला मच्छीभवनके भीतर है। सीताजीकी चचेरी बहिन उर्मिला से लक्ष्मणजीका विवाह हुआ था जिससे अङ्गद और चंद्रकेतु दो पुत्र थे। महाराजने लक्ष्मणजीके पुत्र अंगदको कारूपथ देशका राज्य दियाथा और वहां अङ्गदीय पुरी नामक नगरी वसाई थी।दूसरे पुत्र चन्द्रकेतुको मल्लभूमिका राज्य दिया तथा चन्द्रकांता नामक एक उत्तम पुर वहां वसाया था। महाराजके वैकुंठ पधारनेसे पहिले सरयूतट अयोध्यामें लक्ष्मणजीको देह त्यागना पड़ी। यह स्थान "लक्ष्मण घाट"के नामसे प्रसिद्ध है। लक्ष्मणजीका रंग गोरा था, और डील सुडौल था।

लक्ष्मणदाससेठ मथुराके (राजा लक्ष्मणदास,सी.आई.ई.)- सेठ राधाकृष्णके घर आ. कृ. ८, वि. सं.१९१० को मथुरामें आपका जन्म हुआ पिता आपको ५ वर्षका छोड़ मरेथे। सेठ गोविन्ददासके पीछे आप सेठ घरानेके मालिक हुये। निज पूर्वजोंकी समान राजभक्त होकर आप सदैव गवर्नमेन्टके दातव्यकोषोंमें चन्दा देते रहतेथे और स्वदेशी धर्मकार्योंमें भी सहायता करनेसे मुँह नहीं मोड़तेथे। बड़े धर्मानुरागी थे तथा भारतधर्ममहामंडलकी शोभाथे। गिरिराजकी यात्रा सालमें कई दफे स्त्री बच्चोंसहित धूमधामसे किया करतेथे।

अन्तमें कर्मचारियोंके अप्रबन्धसे आपकी कलकत्तेकी कोठीका काम ढीला पड़-गयाथा जिससे आपको हुंडी पत्री सब बन्दहोगई थी लेकिन आपने सर एन्टोनी मैकडोनल लफ्टिनेन्ट गवर्नरकी सहायतासे शीघ्रही बात बनालीथी तथा सब प्रबन्ध ठीक करदियाथा। इस घटनासे सेठजी का चित्त मर्म्माहत होगयाथा, चिन्ताने भीतरही भीतर शरीर चरलियाथा निदान ४७वर्ष२ महीनेकी उम्रमें ज्वरादिरोगोंसे पीड़ित होकर परमधामको सिधारे।सेठ द्वारिकादास तथा दामोदर दास आपके दो पुत्र हैं। बृटिशगवर्नमेन्टने सेठ लक्ष्मणदासजीको सी. आई. ई. की पदवी स. ई. १८८६ में और राजाका खिताब स. ई. १८९३ में दिया था तथा आवश्यकता पड़नेपर अदालतमें हाज़िर होनेसे माफ़ कियाथा।

लक्ष्मणसेन—(बंगालके अन्तिम सेन वंशी नरेश) नदियामें इनकी राजधानी थी। स. ई. १२०२-३ में जब शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीके सेनापति बख्तियार खिलजीने बंगालपर चढ़ाईकी तो उन दिनों यह बहुत बूढ़े थे, निदान मुसल्मानोंकी फौजका साम्हना नकरसके और कुटुम्बसहित पुरी (उड़ीसा) को भाग गये और शेष अवस्था जगन्नाथजीके मंदिरमें रहकर काटी। गीतगोविंदके कर्ता जयदेव मिश्र महाराज लक्ष्मणसेनके दर्बारके कविराज थे। लक्ष्मणसेनका दूसरा नाम अशोक सेन था और यह स. ई. ११४१ में निज पिता केशवसेनके बाद बंगालकी गद्दीपर बैठे थे। इनके पूर्वज वीरसेनने स. ई. ९८६ में बंगालका राज्य पालवंशी राजाओंसे छीनकर सेन वंशी नरेशोंकी मूल रोपण की थी। वीरसेन और लक्ष्मण सेनके बीच ७ और राजाओंने राज्य किया। राजा लक्ष्मण सेनजी बड़े विद्योत्साही गुणग्राही थे, अनेक विद्वान् पंडित उनके दर्बारमें रहतेथे। नदियामें महाराज लक्ष्मण सेनके सभास्थानके द्वारपर लगे हुये पत्थर पर निम्नस्थ श्लोक अंकित हैः--

श्लो०-गोवर्धनश्चशरणो जयदेवं उमापतिः।
कविराजश्चरत्नानि समितौ लक्ष्मणस्यच ॥

लक्ष्मीश्वर सिंह (महाराजा सरलक्ष्मीश्वर सिंह बहादुर, के. सी. यस. आई. दरभङ्गा नरेश)-महाराज महेश्वर सिंहके पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र लक्ष्मीश्वरसिंहजी स. ई. १८६२ में दरभंगाकी गद्दीपर बैठे। बाल्यावस्थामें रियासत का प्रबंध कोर्ट आफ-वार्डसके द्वारा होता रहा और आपको अङ्गरेजी तथा देशी शिक्षा दी गई। स. ई. १८७९ में राज्यका पूरा अधिकरण आपको सौंपा गया और तबसे आप तन मन धनसे प्रजाका हित तथा राज्यका प्रबंध करते रहे। कई वर्षतक आप वायसरायकी लेजिसलेटिव कौन्सिल के मेम्बर रहे और स्वदेश भक्तिका परिचय सदैव आपसे मिलतारहा। भारत धर्म

महामण्डलके आप प्रधानथे और निज पूर्वजोंके धर्मपर दृढरहिकर सदैव धर्म-कार्य्यमें तत्पर रहतेथे। स. ई. १८७३-७४ के अकालमें ३० लाखसे अधिक रुपया आपने प्रजा की रक्षा में खर्च कियाथा। खड्गपुर तथा दरभंगामें आपने रोगियोंके हितार्थ शफ़ाखाने बनवाये थे और सैकड़ों स्कूल, सैकड़ों मील पक्की सड़क तथा लाखों दरख्त पथिकोंके आरामके लिये निजराज्यमें लगवाये थे। राज्यकी नदियोंके सब घाटोंपर पुल बनवा दिये थे और अकालके समय खेत सींचनेके लिये नहिरें खुदवा दीथीं। कृषी तथा गाय बैल और घोड़ोंकी उत्पत्तिके सुधारका भी आपने प्रशंसनीय प्रबंध किया था। आप मातृभाषा हिंदीके हितैषीथे और विद्वानों तथा गुणीजनोंका सत्कार करते थे। ४१ वर्षकी उम्रमें ता.१७ दिसंबर स.ई.१८९८को आप निःसन्तान परमधामको सिधारे और आपके छोटे भाई महाराज रमेश्वर सिंहजी (वर्त्तमाननरेश) राज्यके मालिक हुये। काशीके स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती आपके गुरू थे। उन्हींके उपदेशसे आपने काशीमें दर्भङ्गा पाठशाला स्थापन की थी और दर्भङ्गा घाट बनवायाथा। काशीजानेपर आप सदैव विद्वानों तथा विद्यार्थियोंको दान पुण्यसे प्रसन्न किया करतेथे। स्वामी विशुद्धानन्दसरस्वतीने आपका मृत्युका तार पाकर गद्गदकण्ठसे कहा-

श्लोक-लक्ष्मीर्यास्यति गोविन्दे वीरश्रीर्वीरमेष्यति।
गते भुञ्जे यशः पुञ्जे निरालम्बा सरस्वती॥

दर्भङ्गानरेश श्रोत्रियकुलोत्पन्न ब्राह्मण हैं।

लक्ष्मीबाई (झांसीकी मर्दानीरानी)—राजागंगाधरराव बुंदेलेकी रानीथी। गंगाधरराव स.ई.१८५२ में एक दत्तक पुत्रको छोड़कर सिधारगयेथे। रानीने अपने लेपालक पुत्रको गद्दी दिलानेके लिये ब्रिटिशगवर्नमेंटसे प्रार्थना की, परंतु गवर्नरजेनरल लार्ड डेलहौज़ीने यह बात स्वीकार नकी और झांसी की रियासत ब्रिटिशराज्यमें मिलाकर रानी की पेन्शनकरदी। इससे३वर्षबाद सन् ५७ का ग़दर हुआ जिसमें रानीने झांसीकी पलटनको उकसाया और ४ जून सन ५७को झांसीका किला घेरा,जितने अंग्रेज़ क़िलेमें थे काटडाले गये और किलेपर अधिकार जमाकर रानीने नये सिरेसे झांसीका राज्य स्थापन किया। पर उसे यह विश्वास था कि अवश्य एक दिन अंग्रेजों से घोरयुद्ध करना होगा निदान उसने राजा रामचन्द्ररावके समयकी २० तोपें धरती से खुदवा-कर निकलवाईं और १४ हजारसेना एकत्र की। एकवर्षभी बीतने न पायाथा कि २५ अप्रैल स०ई०१८५८ को अङ्गरेजी फौजने झांसीका क़िला आ घेरा। रानी के सिपाही बड़ी वीरतासे लड़कर कटमरे, दूसरेही दिन झांसीका शहर और तीसरे दिन झांसीका क़िला रानीसे छूटगया परंतु दो हजार सेना सहित रानी-बच कर निकल गई और काल्पीकी सडक पर होती हुई ग्वालियर पहुँच वहां

की बागी फौजसे मिलगई। जब ग्वालियरको भी अंग्रेज़ोंने विजय कर लिया तो रानी छिपरानदीके किनारेकी तरफ़ भागी, परंतु रास्तेमें मुरारके निकट एक अंग्रेज़ी फौजसे सामना हुआ, जिसमें १७ जून स० ई० १८५८ को वीरता सहित लडकर कटमरी।

लक्ष्मीचन्द सेठ (सेठ वंश मथुराके संस्थापक)—इनके पिता मनीराम खण्डैलवालवैश्य जयपुरराज्यके रहनेवाले, धर्मके दिगम्बरी जैन ग्वालियरसे पारखजीके साथ मथुराको अपने तीनों पुत्रों लक्ष्मीचन्द, राधाकृष्ण तथा गोविन्ददास सहित आयेथे। पारखजीके कोई औलाद नहीं थी निदान अन्त समय उन्होंने लक्ष्मीचन्दको गोदबिठालकर अपनी अटूट सम्पत्तिका मालिक बनालिया (देखो पारखज़ी)। पारखजीके उत्तराधिकारी होनेपरभी इन्होंने निज पूर्वजोंका जैनमत नहीं त्यागा और मथुरामें एक जैनमन्दिर बनवाया लेकिन वैष्णवसम्प्रदायसे भी किसी प्रकार इनको द्वेष नहीं था। इनके पुत्र रघुनाथ दासजी तथा इनके सबसे छोटे भाई गोविन्ददासजी निःसन्तान सिधार गये, केवल इनके भाई सेठ राधाकृष्णजीका वंश चला। से० राधाकृष्णसे इनको बड़ी प्रीति थी। इनसे बिनाकहे सुने उन्होंने पं. रङ्गाचार्यके उपदेशसे जैनधर्म त्याग वृन्दावनमें रङ्गजीका मन्दिर बनवाना आरम्भ किया था लेकिन निजका-कई लाखरुपया खर्च करदेनेपर छत्तभी नहीं पटपाईथी। जब यह बात इनको मालूम हुई तो भाईका चित्त दुखाना उचित न समझ इन्होंने उनसे कुछ नहीं कहा और ४५ लाख रुपयेके खर्चसे स०ई०१८५१की साल उक्त मन्दिर तैय्यार करादिया तथा उसके खर्चके निमित्त ५३ हज़ार रुपये वार्षिक बचतकी जाय-दादलगादी। इनके शारीरक बल, उदारता तथा मिलनसारीकी कहानियें अब-तक मथुरामें प्रसिद्ध हैं। इनके तथा इनके भाई बेटोंके सुख चैनकी सीमा नहीं थी, समय आनन्दसे बिना किसी तरहकी चिन्ता के वीतता था। ब्रजमें यदि किसी चौबेका छोकरा प्रातःकाल देरतक सोता रहता है तो उसकी माता बहु-धा कहते सुनी जातीहै कि "अरे छोरा! ऐसोहू कहा सेठ लक्ष्मीचन्दको बेटाहै, एतो दिन चढि आयो, उठै नाहि हैरे"।

लाङ्गफेलोकवीश्वर—(H. WLongfellow) यह अमेरिकानिवासी-कवीश्वर स. इ. १८०७ में जन्मे और १८८२ में मरे। यूनीवर्सिटीकी सर्व्वोच्च परीक्षा उत्तीर्ण करनेके पीछे इन्होंने यूरोपके अनेक देशोंकी यात्राकी, यात्रासे लौटकर हार्वर्ड यूनीवर्सिटी: कालिजमें प्रफेसर (अध्यापक) का पदपाया और पद्यरचनाकी ओर ध्यान दिया। इनके रचे अनेक ग्रंथ अंग्रेजी पद्यमें विद्यमान हैं जिनके कारण इनका नाम चिरंजीव है। अवसर तथा प्रसङ्गके अनुकूल शब्द प्रयोग करनेकी इनकी शक्ति अलौकिक थी और इनकरचे पद ऐसे मनोहर हैं कि हृदय पलटपर अंकित हो जाते हैं तथा श्रोताओंके कानोंको लुभालेते हैं। इनके विचार और अलंकार भी प्रभाव शाली तथा कवीश्वरोंकेसे हैं। यह फ्रांस, जर्मनी, इटाली, स्पेन, हालैंड, डेन्मार्क, स्वीडन, और स्वीटजलेन्ड

इत्यादि देशोंकी भी भाषायें जानतेथे और अनेक महापुरुषोंके जीवन चरित्र भी लिखकर इन्होंने समाचार पत्रोंमें छपवायेथे । स. ई. १८६९ में जब यह दूसरी दफे यूरोपकी यात्राको आयेथे तो आक्स फोर्ड विश्वविद्यालयने इनको डॉ. सी. यल. की. पदवी प्रदानकी थी ।

लारेन्स (सरहेनरी मांटगोमरी लारेन्स SirHenery Montgomery Lawrence)यह लफटिनेन्ट कर्नैल अलेग्जंडर विलियम लारेन्सके पुत्र थे और लइन्डेरीके स्कूलमें विद्योपार्जन करके ईस्ट इन्डिया-कम्पनीके तोप खानेमें भर्ती होकर स. इ.१८२२की साल बंगालको आयेथे । स. ई.१८४३ में काबुलकी चढाईपर भेजे गये और वहांपर जो वीरता इन्होंने की उसके बदलेमें मेजरका पद पाया । कुछही दिनों पीछे नैपाल दर्बारमें बृटिश रेजीडेन्ट नियत करके इनको भेजागया और बादको सतलज नदीके किनारेकी लड़ाइयोंमें अनेक साहस पूर्ण काम करनेके बदलेमें लफटिनेन्ट कर्नैलका पद इनको दियागया। स.ई.१८४६में लारेन्स साहबको लाहौर दर्बारमें रेजीडेन्ट नियत कियागया,वहांभी इन्होंने अच्छा काम करके के.सी.बी.की उपाधि पाई।सन ५७के गदरमें बागियों से बडी वीरतासे लडे, परंतु लखनऊमें एक तोपका गोला फटकर इनके लगा और इनकी मृत्युका कारण हुआ। इन्होंने फिरङ्गी सिपाहियोंके अनाथ बच्चोंके लिये लारेन्स शाला स्थापन कीथी ।इङ्गलैन्डमें सेन्टपालके गिर्जेमें इनका स्मारक चिह्नहै । लंकामें स. इ. १८०६ की सालमें जन्मे और स. ई. १८५७ में मरे ।

लाल कवि–देखो लल्लूलाल ।

लालगुरू–यह मालवाके रहिनेवाले साधू मुगल सम्राट जहांगीरके समयमें हुये । जातिके खत्रीथे, भाषा कविता अच्छी करतेथे, भंगीलोग इनकी पूजा करते हैं तथा इनका नाम लेते हैं ।

लालबुझक्कड –यह अकबर बादशाहके मंत्री राजा वीरबलका पुत्रथा । असली नाम इसकालाल था और अपने पितासेभी अधिक ठठोली पसंदथा । शुरूहीसे इसके मनमें विरक्ततासमाई हुईथी, संसारको मिथ्या जानताथा और मानुषीय बुद्धिको अल्पज्ञ समझता था । स० इ० १५८३ में काबुलकी लड़ाईमें निज पिता राजा वीरबलके मारे जाने पर यह अपना सर्वस्व लुटाकर सन्यासी होगया आगरेके पास फतेपुर सीकरी नामक ग्राममें इसके बापके बनवाये महिलोंके खण्डेर अबतक पड़े हैं । लोग इसको बडाचतुर समझते थे पर यह लुकमान हकीमकी तरह अपनी बुद्धिको तुच्छ जानताथा । इसकी बनाई सैकडों पहेलियें देशभरमें प्रसिद्धहैं जिनमेंसे प्रत्येक इसबातकी प्रकाशक है कि गम्भीरगूढबातोंमें बड़े २ चतुर विद्वानोंकी बुद्धि वैसीही अल्पज्ञहोतीहै जैसीकि साधारण बातोंमें वौरेगंवारोंकी । नमूनेके लिये लालबुझक्कडकी एक पहेली नीचे लिखते हैं:-

लालबुझकड़ बूझियो और नबूझोकोय । पैरोंचकी बांधकर कोई हिरनाकूदो होय । लोग इसको चतुरसमझ बहुधाबातोंमें सम्मति लिया करतेथे पर यह इस प्रतिष्ठाकोभी तुच्छ जाना करताथा और इसीलिये इसने अपना नाम बुझक्कड़ रखालियाथा ।

लालाबाबू—इस बंगाली कायस्थने स० इ० १८१० की साल २५ लाख रुपयेके खर्चसे वृन्दावनमें एक मन्दिर बनवाया और बहुतसी जायदाद उसके रागभोगके निमित्त कृष्णार्पण की। आजकल इस मंदिरका वार्षिक व्यय प्रायः२२ हजार रुपयाहै । बडीतय्यारी रहतीहै । बहुत लोग भोजन पातेहैं ।

लालाबाबूका असली नाम कृष्णचंद्रसिंहथा । यह दीवान प्राणकृष्णके पुत्र थे। इन्होंने प्रथम कई वर्षतक बर्द्दवान, कटक और उडीसामें नौकरी कीथी और ३० वर्षकी उम्रमें व्रजमें आकर बसेथे । गोवर्धनमें राधाकुण्डके चारों तरफ पक्के घाट इन्हीके बनवाये हुये हैं। ४० वर्षकी उम्रमें वैरागी होकर व्रज मंडलमें विचरने लगेथे, अंतमें गोवर्धनमें एक घोड़ेकी लातसे मरे । व्रजमें निम्नस्थ लोकोक्ति इनके विषयमें प्रसिद्धहै:—"लालाबाबू मरगये घोड़ा दोष लगाय। पारखके कीड़ा परे विधि सौं कहा बिसाय "। यह अपने घरके बड़े अमीरथे, अबतक इनका वंश बंगालमें पायकपाड़ा नरेशके नामसे प्रसिद्ध है । वारेनहैस्टिंगज् गवर्नरजेनरल हिन्दके दीवान गंगागोविन्दसिंह इस वंशके अधिष्ठाताथे और बड़ी भारी सम्पत्ति छोड़ मरेथे ।

लिकर्गस (Licargus.) इस प्रसिद्धत्यागी पुरुषने स्पार्टादेशवासियोंके हितार्थ धर्मशास्त्र (कानून) रचाथा । इसके पिता राजा यूनोमसके मरनेपर पोलीडेक्टीज इसका बड़ा भाई स्पार्टाके राज्यसिंहासनपर बैठा, पर थोडेही दिन पीछे अपनी रानीको गर्भवती छोड़कर सिधारगया। गर्भवती विधवाने अपनेदेवर लिकर्गससे कहा कि यदितुम मुझसे शादी करलो तो निश्चलहोकर राज्य करो क्योंकि जो बच्चा मेरे पैदा होगा उसको मैं मारडालूंगी "। परंतु लिकर्गसने यह बात पसंद नहीं की और केरीलास नामक भतीजापैदाहोनेपर उसको पाला और बड़े होनेपर उसको राजपाट सौंप दिया । पश्चात् लिकर्गस देशाटनको निकला और अनेक देशोंके धर्मशास्त्रोंसे जानकारी प्राप्त की । देशाटनसे लौटकर लिकर्गसने स्पार्टाकी हालत अच्छी नहीं पाई क्योंकि राजाका स्वेच्छाचारी होना प्रजागणको नापसंद था । यह देख लिकर्गसने राज्यको सुधारना चाहा, निदान उसने राजा और प्रजाके हितार्थ धर्मशास्त्र बनाया जिसपर चलनेसे सब बखेड़े दूर होगये और थोड़ेही समयमें स्पार्टाके रहनेवाले वीर सिपाही बन गये । इसके पीछे लिकर्गस फिर बाहर चलेगये और स० ई० से ८७० वर्ष पूर्व वृद्ध होकर शहर क्रेटमें मरे ।

लीलावती—यह पटनाके राजाकी बेटी उज्जैनके राजा भोजको विवाही थी। खूब लिखी पढीथी और राज्यकी पुत्री पाठशालाओंकी देख भाल रखती थी।

लीलावती २—भास्कराचार्य ज्योतिषीकी पुत्रीका नाम लीलावती था जिसके नामको लीलावती नामक अङ्गगणितकी पुस्तक रचकर " आचंद्र दिवाकर " उक्त ज्योतिषीने चिरंजीव किया।

लीलावती ३(पंडित मण्डनमिश्रकी स्त्री)—काशीसे चलकर गयाजीके रास्तेमें शोणभद्रनदके किनारे ब्राह्मणवास नामक ग्रामहै।वहां विष्णुमित्र नामक ब्राह्मणके घर इसका जन्म हुआथा।इस पुत्रीके अतिरिक्त उसके और कोई सन्तान नहीं थी निदान उसने इसको शनैः २ काव्य, व्याकरण, भूगोल, खगोल, अलङ्कार, गीत, वाद्य, नृत्य, कलाशास्त्र, पाकशास्त्र तथा गणितमें प्रवीण करके वेद उपवेद और शास्त्र पुराणोंकी शिक्षा देकर सर्व विद्याओंमें निपुण करदियाथा। पश्चात इसका विवाह सुप्रसिद्ध मीमांसक पंडित मण्डन मिश्रसे होगया। दम्पत्तिमें खुब प्रेम रहा। पश्चात जब शंकर स्वामी और मण्डन मिश्रमें शास्त्रार्थ हुआ तो लीला मध्यस्थ ठहराई गई। मण्डनमिश्रके परास्त होनेपर लीलाने शंकर स्वामीसे शास्त्रार्थ किया लेकिन जीतनसकी। इसके पीछे मण्डनमिश्र और लीला, शंकरस्वामीके शिष्य होकर सन्यासी होगये। शंकर स्वामीने शृङ्गपुर (शृङ्गगिरि) में मठवनवाकर लीलाको सरस्वतीनामसे उसमें रहनेकी आज्ञा दी। जबतक जीती रही उसने शिक्षा, दीक्षा तथा ज्ञान उपदेशके द्वारा स्मार्तधर्मका प्रचार किया। वहांके लोग उसको " भारती " की उपाधिसे युक्त करके साक्षात देवीके समान मानतेथे।

लीहङ्गचङ्ग (चीनीराजनीति विशारद)—यह पृथ्वीपर अपने समयमें सबसे अधिक धनाढ्यथे, पासमें डेढ़ अरबरुपया नकदथा, प्रायः ३० लाख रुपयेकी मासिक आमदनी थी और अर्दलीमें ९ हजार सिपाही निजके रहतेथे। धनोपार्जन तथा राज्यके उच्चाधिकारसे इनको बड़ा प्रेम था, और ऐसी विचित्र नीतिके थे कि बहुधा बड़े २ अङ्गरेज राजनीतज्ञोंको इनकी चालसे उलझावमें पड़ना होताथा।यद्यपि अफीमके व्योपारकी वृद्धिको अच्छा नहीं समझते थे परंतु अफीमकी खेती इनके समयमें अधिक होती थी, बारम्बारके अकालसे बड़े दुखी होतेथे परंतु इन्हींके आधीन कर्मचारी अन्नका संग्रह करके भाव महगा करनेमें अगुआथे यह बड़े विद्वान तथा सुलेखक भी थे, चीनके उच्चाधिकारियोंमें इनको सबसे अधिक पदवियां मिलीथीं और इनका आतङ्क नित्यप्रति बढता देख अनेक चीनी राजनीतज्ञ कहा करतेथे कि लीहङ्गचङ्ग चीनका राज्य किया चाहतेहैं। यूरोपियन राज्योंमेंभी इनका बड़ा सत्कार था क्योंकि चीन दर्बारमें जो कोई यूरोपियन राजदूत आता था उसका काम इनसे बिनामिले नहीं चलताथा इन्हींके द्वारा चीनसे भिन्न २ राज्योंके साथ स-

न्धि हुआकरतीथी कोयलेकी खान खोदने तथा चीनके समुद्रोंकिनारोंपर इंग्लैंडके जहाज जानेका अधिकार पहिले पहिल इन्हींने दियाथा और चीन तथा जापान राज्योंमें युद्ध मिटाकर सन्धि कराना इन्हींका कामथा। इन सबकामोंके बदलेमें चीनके प्रधान आमात्यका पद इनको दियागयाथा जिसपर अंतसमयतक रहे। चीनी सम्म्राट्की आज्ञासे स. ई. १८९६ में यूरोप और अमेरिकाके अनेक देशोंमें यात्रा करके बडा सन्मान पायाथा तथा बहुत कुछ अनुभव प्राप्त कियाथा। चीनके४सम्म्राटोंके समयमें५०वर्षतक आपने राजसेवाकी।यूरोपके सन्तुष्ट करनेके लिये कई दफे चीनने अपने बड़े २ राजनीतिज्ञोंके सर धड़से जुदा करवा दियेथे परंतु लीहंगचंग मरनेकी घडीतक निजनीति निपुणताके कारण बचेरहे। इतने धनाढ्य होनेपरभी बडी सादीचाल रखतेथे और ठाठपसंदनथे, चीनके कोमल और रेशमकेसे रोमवाले चमड़ोंका व्यापार करतेथे और उपार्जित द्रव्यमेंसे दीन दुखियों तथा सम्बंधियोंकी मददकरतेथे। इनके सुप्रबंधके कारण चीन राज्यकई दफे घोर दुर्घट नाओंमें पड़ने परभी यूरोपीय बादशाहोंके पंजेमें पड़नेसे बचगया। स. ई. १९०१ में ७९वर्षकी उम्रपाकर तथा कई बच्चे छोड़कर परमधामको सिधारे।

लुकमान(Lokman)–प्राचीन इतिहासकार लिखतेहैं कि लुकमान प्रथम किसी इसराईलके गुलामथे और कुछ दिनोंतक बढई तथा दर्जीका पेशा करते रहेथे।फिरङ्गी विद्वान कहतेहैं कि यह यूनानके रहनेवालेथे और ईसप इन्हींका नामहै। अरबदेशवासियोंने लिखाहै कि लुकमान जावके वंशमेंथे। मुसलमानोंके पैगम्बर मुहमदनेभी कुरानमें लुकमानकी बुद्धि, विद्या और चातुर्यताकी तारीफ की है। हिंदोस्तानी पंडितोंकी रायहै कि लुकमान भारतवर्षके रहनेवाले लोकमन नामक ब्राह्मणथे और स्वदेशसे निकालेजानेपर यूनानमें जाबसेथे। संक्षिप्तः यह ऐसे चतुर पुरुषथे कि प्रत्येक जाति तथा देशके मनुष्य इनको अपनाया चाहतेहैं। इनकी कहानियें तथा कहावतें जो चातुरीसे भरपूरहैं पृथ्वीके सब भागोंमें प्रसिद्ध हैं। स. ई. से प्रायः १ हजार वर्ष पहिले यह इसराईल जातिके बादशाह दाऊदके समयमें विद्यमानथे। अपने समयमें सबसे अधिक बुद्धिमान गिने जातेथे परंतु यह अपनी बुद्धिको तुच्छ जाना करतेथे। मोरचङ्ग बाजे तथा उडानेकी पतंगका आविष्कार इन्होंने किया।

लेवनिज (G. W. Leibnitz) यह जरमनीके रहनेवाले प्रसिद्ध तत्त्वविज्ञानी होगये हैं। इनके बाप जो लीपजिगके विश्वविद्यालयमें कानूनके प्रोफेसर थे इनको ६ वर्षका छोड़कर मरगयेथे। लेवनिजने स० ई० १६६४ में यम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की और यूनानीइकीमोंके बनाये ग्रंथोंका पढना आरंभ किया और बादको कानूनका इम्तिहान पास किया। स. ई. १६७२ में लेवनिज

साहब पेरिसनगरको गये और वहां अनेक गणितज्ञपंडितोंसे मुलाकात की पश्चात् लेवनिज लन्दननगरमें आये और न्युटन आदि अनेक विद्वानोंसे मिले। कुछ दिन पीछे न्युटन और लेवनिजमें एक नियमके अन्वेषण करनेपर झगडा पैदा हुआ दोनों कहतेथे कि उक्त नियम हमारा निकाला हुआहै, परंतु लोगोंने निर्णय करके न्युटनको उक्त नियमका आविष्कार ठहिराया इस बातसे लेवनिजको दुख हुआ निदान शाहन्शाह जर्मनीने पुन: विचार करवाया और अन्तमें यह निर्णय किया गया कि लेवनिज तथा न्युटन दोनोंहीको उक्त नियमका एकही समयमें अनुभव हुआथा। वह नियम अब लेवनिजकी थ्योरम (Leibnitz's theorein) के नामसे विदित है परंतु शोककी बात है कि यह निर्णय लेवनिजके मर जानेके पीछे हुआ।

लेवनिज बडे चतुर तथा गणितशास्त्रके पूर्ण ज्ञाता थे पर घमण्डी और लालचीभीथे। स० ई० १७११ में पीटर दीग्रेट महाराजा रूसने लेवनिजको प्रिवीकौन्सेलरके पदपर नियत कियाथा। स० ई० १७१६ में ७० वर्षके होकर मरे।

लोमहर्षण (व्यासमहर्षिके शिष्य)–व्यासजीसे पुराणोंकी शिक्षा पाकर इन्होंने पुराणोंकी हरषणिका संहिता रची और उसको अपने पुत्र उग्रश्रवासूतको पढाया। बादको उग्रश्रवासूतने हरषणिका संहितामें अपने प्रश्नोत्तर मिलाकर१८पुराण पृथक्२बनादिये।बलदेवजीके हाथसे नैमिषारण्यमें मारेगये।

लोलिम्बराज (वैद्य) वैद्यजीवननामक ग्रंथ इनका बनायाहुआ है।वैद्यजीवनके पहिले दो श्लोकोंसे ज्ञातहोताहै कि लोलिम्बराजने अपनी प्रियपत्नीके अनुरोधसे इस ग्रन्थकी रचना कीथी।इस ग्रंथमें कपोलकल्पित वार्ता कुछभी नहीं है केवल चरक आदि मुनियोंके बनाये ग्रंथोंके गूढ रहस्योंका वर्णन है लोलिम्बराज वैद्यकशास्त्रमें धन्वन्तरिके समानथे सङ्गीतशास्त्रके पूर्ण ज्ञाता थे, बड़े २ बुद्धिमान कवियोंके शिरोभूषणथे और राजा महाराजाओंकी सभामें इनका बड़ा सत्कार होता था। इनके पिता दिवाकरजीभी अद्वितीय वैद्य थे। वि. सं. की १५ वीं शताब्दीमें हुये।

ल्युदर (मार्टिनल्युदर–Martin Luther). यह जर्मनीके सूबे सैक्सनीमें स. ई. १४८३ की साल जन्मे। पिता इनके दरिद्रीथे निदान शिक्षा प्राप्त करनेमें प्रथम इनको बड़ी कठिनाई झेलनीपड़ी, पश्चात् जब इनके बापकी हालत कुछ सम्हल गई तब उसने इनको १८ वर्षकी उम्रमें कानून पढ़नेके लिये कालिजमें बिठलादिया। वहां स. ई. १५०५ में इन्होंने यम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की और कालिजके पुस्तकालयकी पुस्तकें देखते २ बड़े ब्रह्मज्ञानी बन गये। तबतो इनके नातेदार आशा करने लगेथे कि थोड़ेही दिनोंमें को

अच्छा पद इनको मिलजायगा परंतु ईश्वरको कुछ औरही करना मंजूर था क्योंकि उन्हींदिनों एकरोज़ जंगलमें हवाखाते वक्त इनके एक मित्रपर बिजली गिरपड़ी जिससे वह मरगया और यह बाल.२ बचगये। यह देख इनको बैराग्य उत्पन्न होगया और संसारको असार समझ.इन्होंने घरबार त्याग दिया और सेन्ट अगस्टाइनके अस्थलके साधुओंकी मण्डलीमें रहने लगे, जहां भिक्षाकरके भोजन करना पड़ताथा। पश्चात् अगस्टायनके गिर्जेके पुजारीका पद इनको प्राप्त हुआ और थोडेही दिन पीछे सैक्सनीके कालिजमें ब्रह्मज्ञानके प्रोफेसरके पदपर यह नियत कियेगये । इनकी विलक्षण शिक्षाप्रणाली तथा अपूर्व योग्यताकी तारीफ सुनकर दूरसे विद्यार्थी आनेलगे जिससे उक्त कालिजकी बड़ी उन्नति हुई । उन्हींदिनों इनको बाइबिलकी एक प्राचीन प्रति लैटिन भाषामें विचार सहित पढनेपर यह बात भले प्रकार प्रतीत हुई थी कि पोपके अनुगामी ईसाई लोग अनेक स्थलोंपर बाइबिलके अर्थ असली आशयके विरुद्ध लगाते हैं परंतु धर्म सम्बन्धी विषयोंमें किसी राजा: प्रजाको रोमके पोपकी सम्मति उल्लंघन करनेकी शक्ति न थी क्योंकि रोमके महाराजाका प्रभाव यूरोपके अन्य सब राजाओंपर छाया हुआ था और वह पोपका सत्य चित्तसे सहायक होकर पुराने ढरेंके अनुसार सबको चलनेकी शिक्षा करताथा। यदि कोई राजा पोपकी शिक्षाके विरुद्ध आचरण करता तो गद्दीसे उताराजाता था और प्रजागण यदि ऐसा करनेका साहस करते तो आईनके अनुसार आगमें जलाये जातेथे। पोप मनुष्योंसे रुपयालेकर इसबातकी सनद देताथा कि उनके उम्रभरके पाप क्षमाकर दियेगये और धनाढ्य मनुष्योंके मरनेपर पोप उनके उत्तराधिकारियोंसे मनमाना रुपया इस लिये लेतेथे कि मृतकको नर्कसे निकालकर स्वर्गमें भेजनेकी सिफारिश करदीजायगी। इस प्रकार धोकेसे रुपया इकट्ठा करनेकी पोपकी अनेक चालेंथीं पर किसीको डरके मारे उनको अप्रमाणित कहिने तकका साहस नहीं होताथा। ल्युदरने दृढचित्त होकर इस प्रकारकी ९९ बातोंका गिर्जेमें खडेहोकर खण्डनकरना आरंभ किया। पोपके कानमें जब यह बात पहुंची तो उसने ल्युदरके वध करानेकी फिक्र की। शहन्शाहरोमनेभी ल्युदरको बहुत धमकाया सहस्रों मनुष्यभी शत्रु बनगये परंतु इन्होंने दृढता सहित अपने मन्तव्य सबको सुनादिये। केवल डिटेन्बर्गका एलेक्टर पहिले पहिल ल्युदरका चेला हुआ और उसीकी कोशिससे ल्युदरके प्राणबचे फिरतो शनैः २ हजारों मनुष्य अनुगामी होगये, विद्वान और शिक्षितलोगोंने इनकी शिक्षा ग्रहण की और इसप्रकार ईसाईयोंमें प्रोटेस्टेन्टमत खड़ा होगया तथा पोपकी शिक्षापर चलनेवाले रोमन कैथलिक लोग थोड़ेही रहिगये। ल्युदरने बाइबिलका जर्मन भाषामें अनुवाद करके छपवायाथा और ४२ वर्षकी उम्रमें कैथेरायन नामक एक बाईसे विवाह कियाथा जिससे कई बच्चे पैदा हुयेथे। स. ई. १५४६ में ल्युदर किसीगांवमें

एक धर्मसम्बंधी विवादका निबटारा करने गयेथे और वहीं बातें करतेहुये सिधारगये ! बड़े साहसी, दृढचित्त तथा हृष्ट पुष्टथे और अपने बच्चोंसे बड़ा प्रेम रखतेथे।

वर्जिल (Virgil)–यह लैटिनकवि स. ई. से प्रायः ७०वर्ष पहिले मुल्क इटेलीमें मान्तुआ नामक नगरके समीप ऐन्डीजमें जन्मेथे। प्रथम शिक्षा इन्होंने मिलन नामक नगरमें रहकर पाई और बादको नैपिल्समें जाकर ग्रीकभाषा, ब्रह्मविद्या, विज्ञानविटप और गणितशास्त्र पढ़ा। फिलिप्पीकी लड़ाईके बाद जिसमें इनकी जायदाद सिपाहियोंने लूट लीथी, यह रोममें जाबसे और वहांके बादशाह अगस्टसकी मददसे पुनः अपनी जायदाद पाई। पश्चात् इन्होंने कई ग्रंथ रचे और अंतमें बादशाह अगस्टसकी आज्ञानुसार पृथ्वीप्रसिद्ध ग्रंथ "इनियड" लैटिनपद्यमें रचा। यह ग्रंथ इन्होंने ११ वर्षमें सम्पूर्ण कियाथा। होमरके सिवाय कोई दूसरा कवि लैटिनभाषामें इनकी समानता नहीं करसकताहै। अफलातून की फिलासोफीको यह मानतेथे। स. ई. से १९ वर्ष पहिले ब्रन्डूजिअममें मरे

ह्वीटस्टोन (चार्लसह्वीटस्टोन–Charles Wheatstone**)** यह विद्युतशास्त्रका मुख्य आचार्य राजराजेश्वरी विक्टोरियाके शासनके प्रथम वर्षमें अर्थात् स० ई० १८३८ की साल लन्डन नगरके यूस्टन स्क्वैर मुहल्लेसे कैमडन नामक मुहल्लेतक बिजलीका तार लगानेमें समर्थ हुआ था। इससे पहिले भूमण्डलपर और कहीं बिजलीके तारसे खबर नहीं भेजी जातीथी पर अबतो ह्वीटस्टोनके आविष्कृत नियमके अनुसार हज़ारों मीलतक लग गया है। यदि बिजलीके बलसे तार लगानेकी क्रिया संसारमें नहीं होती तो आज कलह सभ्य देशोंकी जैसी उन्नति देखनेमें आती है उसका दशांशभी न होता। इसी महाशयने स० ई० १८३७ की साल चुंबककी सुईका आविष्कार कियाथा जिससे जहाज चलाया जाता है। यह लन्डन नगरका रहनेवाला था।

वाजिदअलीशाह--(लखनऊके रंगीले नवाब) स० ई० १७३१ में मुग़ल सम्राट दिल्लीने झगड़ालू क्षत्रियोंसे घबराकर अवधका सूबा आदतखांको दिया और उनकी संतति कई पीढ़ीतक वहां राज्य करती रही और नवाब वज़ीर अवध कहलाती रही। नवाब वज़ीरकी राजधानी फ़ैज़ाबादमेंथी परंतु नवाब आस्फुद्दौलाके वक्तमें लखनऊमें राजधानी नियत कीगई। पश्चात् नवाब वज़ीर गाज़ि उद्दीन हैदरको ईस्ट–इन्डिया–कम्पनीने स० ई० १८३०में बादशाह अवधका खिताबदिया। ग़ाज़ि उद्दीन हैदरसे चार पीढ़ीबाद् अमजद अलीशाह हुये जिनके पुत्र वाजिद अलीशाह स० ई० १८४७ में अवधके तख्तपर बैठे। यह ज़नाने होकर सङ्गीतविद्याके बड़े रसिक थे और राजकाजकी ओर कुछ ध्यान

नहीं देतेथे जिसके कारण प्रजापर बड़ा अन्याय होता था। यह देख लार्ड डलहौज़ी गवर्नरजनरल हिंदने कोर्ट आफ-डैरक्संकी रायसे१३ फर्वरी स०ई० १८५६ को अवधका मुल्क अंग्रेज़ी अमलदारीमें मिला लिया और बाजिद अलीशाहको १ लाख रुपया मासिक पेन्शनदेकर मटियाबुर्ज कलकत्तेमें रहनेका हुक्म दिया जहां स.ई.१८८७में उनका देहांत हुआ।वाजिद अलीशाह बड़े खरचीले थे, उन्होंने एक दिन प्रसन्न होकर फ़र्जंद अलीखाँदारोग़ा सिकन्दर बाग़ लखनऊको जहांगीराबादकी जागीर तथा राजाका खिताब दिया था जिसको उसके वंशज अबतक भोग रहे हैं। बाजिद अलीशाहकी माता अपने बेटे जव्वाद अली तथा अपने पोते मिर्जाहामिद अलीको लेकर स० ई० १८५६ में निज हुकूकका दावा करने इङ्गलैन्ड गईथी पर स० ई० १८५८ में वहां मरगई और फ्रांसमें दफ़नकी गई। थोड़े दिनों बाद जव्वाद अलीभी मरगये और अपनी माताके समीपही दफ़न हुये। बाजिद अलीशाह उर्दू तथा भाषा कविता भी खूब करतेथे। उर्दूमें तीन दीवान और तीन मसनवी उनकी बनाई मौजूदहैं जिनमें अख्तरनामसे पदपूर्ति की है। भाषामें भी सैकड़ों फुटकर पद उनके बनाये मिलते हैं जो ललित और रोचकहैं और जिनमें रसिया नामसे पदपूर्ति कीगई है.नमूनेके लिये यहांपर उनके एक पदका थोड़ासा भाग लिखतेहैं—

पद-मोहनरसिया आयेबगियामें फूलरही सब कली कलीरे।
कोई कली हरनामजपतहै कोई पुकारे अली अलीरे।

वार्डस्वर्थ—(विलियमवार्डस्वर्थ-William Wardsworth). इनकी गणना अंग्रेजी भाषाके श्रेष्ठ कवीश्वरोंमें है और इनकी कवितामें प्रकृतिका वर्णन बहुतायतसे पायाजाताहै। बिकट वन, विशाल पर्वतोंकी चोटियें, पानीके झरने झीलें और फूल फलोंसे लदे हुये रुख इत्यादिकी अलौकिक छटाके दृश्य तथा उनकी चित्तलुभानेवाली शक्तिपर आपने पदरचना कीहै जैसा आश्चर्यजनक दिव्य विवर्ण छोटी २ चीजोंका इन्होंने किया है वैसा किसी अन्य कविको करना कठिनहै। यह बड़े दृढचित्त, परिश्रमी और अनुभवशील पुरुष थे और कम्बर लेन्डके रहनेवाले किसी वकीलके घर स० ई० १७७० में जन्मे थे। कैम्ब्रज विश्वविद्यालयसे बी. ए. की परिक्षा उत्तीर्ण करनेके पीछे फ्रांस इत्यादि देशोंकी यात्राभी इन्होंने कीथी और साउदी, कोलरिज तथा विल्सन आदि प्रसिद्ध विद्वानोंसे इनकी मित्रताथी। स० ई०१८४२ में बृटिश गवर्नमेंटने इनको ३०० पौंड वार्षिक वेतन देनेका ठहराव किया और एकही वर्ष पीछे राजकविके पदपर इनको नियुक्तकिया। स० ई० १८५० में परलोकगामी हुये।

वाल्टररैले-(सरवाल्टररैले-Sir Water Raleigh). इन्होंने अनेक बार बड़े २ समुद्री सफ़र किये और अमेरिकाके समुद्री किनारोंपर कई बस्तियें बसाईं। डेवन शायरके एक सभ्य पुरुषके घर स० ई० १५५१ में जन्मे थे और कुछ दिनोंतक स० ई० १५६८ के पीछे आक्सफोर्डके विश्वविद्यालयमें शिक्षा पाकर प्रोटिस्टेन्ट लोगोंकी सहायताके लिये फ्रांसको चले गयेथे। वहां ५। ६ वर्ष रहनेके पीछे अपने सालेके साथ अमेरिकाको गये और वहां कई वर्ष ठहरकर अनेक बस्तियें बसाईं। स० ई० १५७९ में आलू तथा तम्बाकूका बीज लेकर इंग्लैंडको वापिस आये और उनकी खेतीका प्रचार किया। पश्चात् इंगलैन्डसे इन दोनों चीजोंकी खेतीका प्रचार पृथ्वीके सर्वत्र भागोंमें होगया। स. ई. १५८८ में इन्होंने इंग्लैंडकी तरफसे युद्ध करके स्पेनवालोंके जङ्गी जहाजोंके बेडेको परास्त किया जिससे ग्रेट ब्रिटेनकी मलिका एलिजाबेद इनपर बहुत प्रसन्न होगई। मलिका एलिजाबेदके मरनेपर रैले साहिबके समयने पलटा खाया क्योंकि जेम्सप्रथमने गद्दीपर बैठकर इनको किसी अपराधमें कैद करदिया। कैदमें रहकर इन्होंने अनेक ग्रंथ अंग्रेजीभाषामें रचे जिनमेंसे इनका बनाया संसारका इतिहास जो स. ई. १६१४ में छपा उत्तम है। स. ई. १६१५ में कैदसे छूटकर रैलेसाहिब गायनाको चले गये और वहाँ स्पेनवालोंकी एक बस्ती फूंक देनेके अपराधमें इंग्लैंडके बादशाह जेम्सप्रथमने स. ई. १६१८ में इनका शिर कटवा डाला। इनका मस्तक बहुत ऊंचा था और मुख लम्बा था।

वाल्टर स्काट-देखो स्काट।

वास्कोडी गामा (Vascode Gama)-यह पुर्तगाली मल्लाह सबसे पहिला फिरङ्गी था जो हिंदोस्तानमें आया। स. ई. १४९८ में पुर्तगालके बादशाहने कई जहाज देकर इसको पूरबकी तरफ भेजा था, इस यात्रामें इसने पूर्वी हिंदके द्वीपोंको जानेका रास्ता खोज किया और हिंदोस्तानके किनारेपर पहुंच कैलीकटके मुकाम लंगर डाला तथा ६ मास वहाँ रहकर पुर्तगालको लौट गया। स. ई. १५०२ में दूसरी दफे २० जहाजोंका बेडा लेकर हिंदोस्तानको आया, केली कटके जमोरनको परास्त करके पुर्तगाली राज्यकी हिंदोस्तानमें मूलरोपण की और कोचीन तथा कनानोरके राजाओंसे सन्धि की। स. ई. १५२४ में पुर्तगालके बादशाहने इसको पुर्तगाली हिंदका पहिला वायसराय नियत किया। स. ई. १५२५ में कोचीनमें मरा।

वाशिङ्गतन अर्विङ्ग-(Washington Irving). यह अमेरिका वासी ग्रंथकार स. ई. १७८३ की साल न्युयार्क नगरमें जन्मे। बाप इनके व्यापार करनेके लिये स्काटलैन्डसे अमेरिकामें जाबसे थे और वहीं इनको बालक छोड़

कर परमधामको सिधारे थे। बड़े भाईने इनकी शिक्षाका प्रबन्ध किया था। हावर्ड यूनीवर्सिटीमें शिक्षा सम्पूर्ण करके इन्होंने यूरोपके फ्रांस, इटेली, स्वीट-जरलैंड, हालैंड तथा इंग्लैंड इत्यादि देशोंकी यात्रा कीथी जिसका मुख्य उद्देश अपने बिगडे हुए स्वास्थ्यको सम्हालनेका था। यात्रासे लौटकर इन्होंने वकालत पढी और बैरिस्ट्रीका इम्तिहान पास किया परन्तु वकालत कभी नहीं की और ग्रंथ रचनाकी ओर मन लगाया। स. ई. १८०९ में इन्होंने प्रहसन युक्त न्यूयार्कका इतिहास लिखकर अपनेको अमेरिकावासी ग्रंथकारोंमें सर्वो-त्तम सिद्ध कर दिया। दूसरीदफे इन्होंने इंग्लैंडकी यात्रा फिर की और "स्के-चबुक" नामक ग्रंथ लिखना आरंभ किया जिसने थोड़ेही दिनोंमें ऐटलान्टिक महासागरके दोनोंतरफ आदर पाया। इनके विचार मनहरण और सौंदर्यतासे परिपूर्ण हैं, लेख प्रहसनयुक्त हैं और विषय छांटनेकी शक्ति विलक्षण है। अंतमें अमेरिकान्तर्गत "सनी सायड" नामक अपनी रियासतमें आकर बसे थे और वहीं स० ई० १८५९ में परमधामको सिधारे।

विलियमबेण्टिङ्क (Lord William Bentinck) इनके बाप पोलैण्डके तृतीयड्यूक थे, इन्होंने प्रथम फौजमें नौकरी करके फिलैण्डर्स, रूस और मिश्र इत्यादि देशोंकी लड़ाइयोंमें बड़े २ बहादुरीके काम किये और ब्रिटिश सेनामें उच्चपदपर तरक्की पाई। यह स० ई० १८०३ में हिन्दोस्तानको मद्रा-सके गवर्नर नियत होकर आयेथे। वहांपर इन्होंने सिपाहियोंकी मूंछ, दाढ़ी तथा पगड़ी इत्यादिके सम्बन्धमें कुछ नियम जारी कियेथे जिनसे स०ई०१८०६ की साल वेलौरमें ग़दर होगया था। उसीसमय कोर्ट आफ डैरेक्टर्सने इनको इंग्लैंड बुलालिया और इटेली, स्पेन इत्यादि देशोंमें सेनापति नियतकरके भेजदिया।

स० ई० १८२८ में गवर्नर जनरलके पदपर नियुक्त करके फिर इनको हिंदो-स्तान भेजागया। इनके शासनकालमें हिंदोस्तानसे सती होनेकी रसम बन्द की गई, और ठगोंको नष्ट किया गया, अंग्रेजोंको हिन्दोस्तानमें बसनेकी आज्ञा मिली और कुर्ग अंग्रेजी राज्यमें मिलायागया। स० ई० १८३५में बीमार होनेके कारण इस्तेफा देकर इंग्लैंडको चलेगये और ग्लास्गोकी प्रजाकी तरफ़से स. ई.१८३६ में पार्लियामेण्टके मेम्बर बनायेगये। स० ई० १७७४ में जन्मे और स० ई० १८३९ में मरे।

वैशम्पायन—यह व्यासजीके शिष्यथे, राजा जन्मेजयको महाभारत इन्होंने सुनायाथा। ग्राउस साहब अनुमान करते हैं कि हरिवंश पुराण इन्हींने रचा था।

शकेंद्र—देखो अलेग्जेंडर दीग्रेट.

शकुन्तला—पद्मपुराणमें लिखाहै कि, गाधितनय राजा विश्वामित्रने महर्षि वशिष्ठसे युद्धमें परास्त होकर ब्रह्मबलको श्रेष्ठ और क्षत्रियबलको तुच्छ जान ब्राह्मण बननेके लिये तप करना आरंभ किया । देवताओंने यह देख मेनका अप्सराको तप डिगानेके लिये भेजा विश्वामित्रने मोहितहो उसके साथ भोगविलास किया जिससे शकुन्तलानामक कन्या उत्पन्न हुई । विश्वामित्रका जब मदनमद दूर हुआ तो अतिशय लज्जितहो चलते हुये और मेनकाभी कन्याको वनमें डाल वहांसे चलदी । दैवयोगसे ऋषिकण्व उधर होकर निकले और कन्याको अकेला पड़ा देख निज आश्रममें उठालाये और पुत्रीवत् उसको पाला । जब शकुन्तला १३ । १४ वर्षकी हुई तो एक दिन चंद्रवशी राजा दुष्यंत शिकार खेलते हुये उधर जानिकले और त्रैलोक्यसुंदरी शकुन्तलाको देख मोहित हुये तथा गांधर्व रीतिसे उसके साथ विवाहकर भोगविलास किया । चलते समय राजाने अपनी अंगूठी निशानीके तौरपर शकुन्तलाको दी और शीघ्रही बुलाभेजनेका विश्वास दिलाया पर दैवगतिसे राजधानीमें पहुंच राजाको शकुन्तलाकी कुछभी याद नरही । जब शकुन्तलाको कई महीनेका गर्भ होगया तो ऋषिकण्वने एकधाय तथा अपने दो शिष्योंको हिफाजतके लिये साथ करके शकुन्तलाको उसके पति- के घर भेज देना मुनासिब समझा । रास्तेमें नहाते वक्त राजा दुष्यंतकी दीहुई अंगूठी शकुन्तलाकी उंगलीमेंसे तालावमें निकल पड़ी । जब शकुन्तला दर्बार में पहुंची तो राजाने उसे नहीं पहिचाना और बहुतोंसे समझाये जानेपरभी उसे कपटधारी वेश्या समझ अङ्गीकार नहीं किया और कहा कि, हम पुरुवंशी लोग महात्माओंके मार्गमें आसन रखनेवाले गणिकाओंके रूपमात्रसे नहीं डिगसकते राजाके ऐसे वचन सुन ऋषिशिष्य क्रुद्धहो शकुन्तलाको वहीं छोड चलदिये और कहगये कि राजा ! तुम इसके पश्चात्तापसे अतिशय अनुतप्त होउगे । गौतम राजपुरोहितनेभी राजाको बहुत कुछ समझाया पर राजाने शकुन्तलाको घरमें नहीं घुसने दिया और कहा कि पुंश्चलीके संसर्गसे कुलकामिनीभी दूषित होतीहैं लाचारहो गौतम पुरोहितने शकुन्तलाको अपने घर ठहराया और वहांसे उस- की माता मेनका शीघ्रही उसको लेगई परंतु अपने पास रखना उचित न समझ कश्यप मुनिको उसे सौंपदिया । कश्यपजीके आश्रम (कश्मीर) में शकुन्तलाके गर्भसे भरत नामक पुत्र हुआ । उधर कुछ दिन पीछे एक मछुआके द्वारा शकु- न्तलाके हाथसे तालावमें गिरीहुई अंगूठी राजा दुष्यंतके पास पहुँची जिसेदेख वह विरहसे विकल होगये । जब भरत कुछ बड़ा होगयाथा तो एक दिन दुष्यंत कश्मीरकी तरफ जा निकले और वहां कश्यपजीने शकुन्तलाको पुत्रसहित उनसे मिलाकर दोनों तरफका विरहदाह शान्तकिया । शकुन्तलाका पुत्र भरत बड़ा पराक्रमी, छत्रधारी राजा हुआ जिसके नामपर इस देशका नाम भारत वर्ष पड़ा ।

शतानन्द–यह गौतम ऋषिके पुत्र जनकपुरी (तिरहुत) में रहते थे और राजा जनकके दर्बारमें इनका सत्कार होता था। सिय स्वयंवरके अवसरपर रामचंद्र महाराजसे इनकी बातचीत हुई थी। वाल्मीकीय रामायणमें इनके लिये निम्नस्थ विशेषणोंका प्रयोग किया गयाहै:–प्रहृष्टरोम, महातेजस्वी, महातपस्वी, परमचतुर, मुनिश्रेष्ठ। रामचन्द्र महाराज तथा ऋषि विश्वामित्रके कहने सुननेसे गौतम ऋषिने इनकी माता अहल्याको अङ्गीकार किया था।

शम्भूनाथपंडित–(हाईकोर्टके प्रथम हिन्दोस्थानी जज)आपके पिता शिवप्रसाद कश्मीरी पंडित स्वदेशसे ग्वालियर जाकर महाराज सेंधियाके दर्बारमें किसी उच्चपदपर नियत हुएथे और वहाँ उन्होंने मकानभी बना लिया था। ग्वालियरसे बादको काशी चले गये जहां वि. सं. १८७६ की साल शम्भूनाथ जन्मे। शम्भूनाथने बाल्यावस्थामें उर्दू, फार्सी, संस्कृत तथा हिन्दी पढी थी। पश्चात् पं० शिवप्रसादजी कलकत्ते चले गये, जहां शम्भूनाथने अंग्रेजी पढी और सदरदीवानी अदालतमें १६ रु० मासिकपर लेखककी नौकरी करली। पीछे तरक्की पाकर २५ रु० वेतनपर मुहर्रिर इजराय डिगरी हुये। सरकारी काम बडी मेहनत, होशियारी और ईमान्दारीसे करते थे जिससे अफसर लोग अत्यन्त प्रसन्न थे। फुर्सतके वक्त मकानपर नाना शास्त्रोंका अवलोकन करते रहते थे जिससे नित्यप्रति विद्योन्नति भी होती जाती थी। इसी पदपर रहते हुए पंडितजीने कोर्टकी कार्यवाहीपर एक किताब लिखी जिससे सर्व साधारणको उनकी विद्याका परिचय मिला और जज साहब उक्त पुस्तकको देखकर बडे प्रसन्न हुये। नौकरीहीकी हालतमें आईन पढकर वकालतकी उच्च परीक्षा पंडितजीने उत्तीर्ण की। पंडितजी धर्मपरायण थे, झूंठे मुकद्दमे कभी नहीं लेते थे. दीन दुःखियोंकी वकालत बेदाम करते थे जिससे, अन्य वकीलोंकी अपेक्षा पहिले पहिल उनको आमदनी कम होती थी परन्तु उनकी प्रतिष्ठा दिन प्रतिदिन बढती जाती थी पश्चात् सीनियर गवर्नमेंटप्लीडरका पद तथा गवर्नमेंट कालिज कलकत्तामें आईनके प्रोफेसरका पद सर्कारने आपको दिया। उन्हीं दिनों गवर्नमेंट हिंदने सुप्रीमकोर्टकी जगह कलकत्तेमें हाईकोर्ट नियत किया था जिसमें एक हिंदोस्थानी जज रखनेका प्रस्तावभी मंजूर हो चुका था। इसी उच्च पदपर पंडित शम्भूनाथ नियत किये गये,६ वर्षतक बडी लियाकतसे काम किया, सर्व लोग अत्यंत प्रसन्न रहे। हाईकार्टमें कोई दूसरा जज आपसे अधिक योग्य नहीं समझा जाता था। स्वदेशियोंकी अनेक प्रकारसे मदद करतेथे, विधवाओं तथा अनाथोंकी गुप्त रीतिसे सहायता देतेथे और दीन दुखियोंको वस्त्र, भोजन बँटवाते रहितेथे। आप वास्तवमें न्याई तथा देशप्रिय हाकिमथे, गर्वका लेशमात्रभी आपमें नहींथा

और इसीलिये सब लोग आपकी प्रतिष्ठा करतेथे। वि० सं० १९२३ में ४७ वर्षकी उम्रमें परलोकगामीहुये। चाल ढाल रहिन सहिन अंग्रेज़ी नहीं था।

शमशुद्दीन अल्तमश (* दिल्लीकाबादशाह)-सुलतान कुतबुद्दीन ऐबकने इसको बचपनमें एक सौदागरसे खरीद लियाथा और बड़े होनेपर अपनी बेटीकी शादी इसके साथ करदीथी।ई.स. १२१०में इसने कुतबुद्दीनके बेटे आरामशाहको गद्दीसे उतारदिया और आप दिल्लीका बादशाह बन बैठा। स० ई० १२१५ में गज़नीके बादशाहने लाहौरपर चढ़ाई की पर शमशुद्दीनसे हारकर उसे लौटना पड़ा। स. ई. १२३३ में शमशुद्दीनने ग्वालियरका क़िला सरकिया और २६ वर्ष राज्य करके स. ई. १२३६ में मरगया । कुतबुद्धीनफीरोज इसका बेटा गद्दीपर बैठा। दिल्लीमें कुतबकी लाटका एक भाग अलतमशका बनवाया हुआहै।

शहाबुद्दीन मुहम्मदगोरी—मुल्क गज़नी तथा गोरके सुलतान गियासुद्दीन मुहम्मदने स. ई. ११७४ में अपने छोटे भाई शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीको गजनीका गवर्नर नियत कियाथा, पश्चात शहाबुद्दीने शाहिजादे खुसरो मालिकसे लाहौर छीन लिया और थोड़ेही दिनोंबाद खुरासान विजय किया। स.ई.१२०३में बड़े भाईके मरनेपर मुल्क गजनी तथा गोरकाभी राज्य पाया। स. ई. ११९१ में पृथ्वीराज महाराजा दिल्ली व अजमेरपर चढ़ाई की परंतु तिलावड़ीके मैदानमें परास्त होकर लाहोरकी तरफ लौटगया। स. ई. ११९२-९३ में फिर चढाई की जिसमें पृथ्वीराज परास्त होकर क़ैद होगया। स. ई. ११९४ में जयचंद महाराजा कन्नौजपर चढाईकी और उसको भी परास्तकरके वध किया । पश्चात ग्वालियर तथा बनारसके राजाओंको परास्तकिया और इसके सेनापति बख्तियार खिलजीने स. ई. ११९९में विहार तथा स. ई. १२०३ में बंगाल, राजा लक्ष्मणसेनसे छीन लिया। बनारसमें शहाबुद्दीनने प्रायः १०० मंदिर नष्ट किये थे। स. ई. १२१६ में सिन्धु नदीके किनारे डेरेमें घुसकर वक्करोंने इसको मार डाला। इसके कोई बेटा नहीं था निदान इसका भतीजा गज़नी तथा ग़ोरके राज्य का मालिक हुआ और इसका सुयोग्य गुलाम कुतबुद्दीन ऐवक दिल्लीके तख्तपर बैठकर हिंदोस्तानका बादशाह हुआ।

शत्रुघ्न—यह अवध नरेश राजा दशरथके पुत्र रानी सुमित्रके उदरसे जन्मे थे। लक्ष्मणजी इनके सगे भाई थे । सीतामहारानीकी भतीजी श्रुतकीर्तिसे इनका विवाह हुआ था। जबतक महाराज रामचंद्र वनवास करते रहे शत्रुघ्न और भरतजी अयोध्यामें रहे। महाराज रामचंद्रके राजसिंहासन आरूढ़ होनेपर ब्रजमंडलसे च्यवनादि ऋषियोंने वहांके राक्षसराजा मधुपुत्र लवणके प्रत्याचारों

की आकर शिकायतकी। महाराजकी आज्ञा पाकर शत्रुघ्नने ससैन व्रजमंडलपर चढ़ाई की और लवणको मारकर उसकी राजधानी मधुपुरीको विध्वंस करदिया तथा उसके समीप मथुरा (मथुरा) नामक नगरी बसाई और महाराजकी आज्ञानुसार वहां रहकर बहुकालतक उस देशका शासन करते रहे। अंतमें महाराजके वैकुंठ पधारनेके अवसरपर शत्रुघ्नजीने निज पुत्र सुबाहुको मथुराका राज्य और दूसरे पुत्र शत्रुघातीको वैदिशनगरका राज्य देकर इस लोकका सम्बंध छोड़दिया।

शाकटायन—इन्होंने संस्कृत व्याकरणकी एक पुस्तक रचीथी। शब्दानुशासन तथा अणादि सूत्रोंके कर्ताभी यही थे। यास्कमुनि तथा पाणिनि ऋषिसे पीछे इनका समय प्रतीत होताहै। डैनियल साहिबके मतानुसार यह ब्राह्मण थे और निर्मानाक्षवर्म्मा जैनी लिखताहै कि यह जैनीथे। इनका व्याकरण पाणिनिमतके अनुकूलहै।

शाक्यसिंह—देखोबुद्ध.

शांखायण—ऋग्वेदका ब्राह्मण तथा ऋग्वेदीय श्रौत सूत्र और ऋग्वेदके गृह्यसूत्र इन्होंने बनायेथे। श्रौतसूत्र१८अध्यायमें विभागितहैं और उनमें राजसूय, वाजपेय, अश्वमेध, पुरुषमेध, गोमेध इत्यादि बड़े २ यज्ञोंके करानेके नियम लिखे हैं। गृह्यसूत्र६ अध्यायोंमें है और उनमें सर्व सांसारी संस्कार तथा ज्योतिष और डांकिनी आदि विद्याओंका वर्णन है।

शान्तनू—यह चंद्रवंशी महाराज प्रियव्रतके पुत्रथे। महारानी गंगासे इनके भीष्मनामक पुत्र हुआ था। पश्चात् राजा शान्तनू सत्यवती एक सुंदरी बालापर मोहित होगये और उसका विवाह इनके साथ इस शर्तपर होगया कि उसकी औलादको राजगद्दी मिलेगी। राजपुत्र भीष्मने अपने पिताकी विषय वासना पूरी करनेके लिये राजपाटका दावा छोड़दिया और अपना विवाह तक नहीं किया। सत्यवतीके गर्भसे विचित्रवीर्य तथा चित्राङ्गद दो पुत्र हुये। अंतमें महाराज शान्तनू राजपाट त्याग वनको चल दिये। मथुरा तथा गोवर्धनके बीचमें उस स्थानपर आपने तप किया था जहांपर शान्तनकुण्ड और शान्तन गढ़ी है। इनके विशेष वृत्तांतके लिये देखो भीष्म पितामह।

शारङ्गदेव—इसनामके एक सङ्गीतज्ञने प्राचीन कालमें होकर सङ्गीत रत्नाकर नामक संस्कृत ग्रंथ रचाथा जिसमें अनेक प्रकारके नृत्योंकाभी वर्णन है। सङ्गीतरत्नाकरके रचनेमें इन्होंने अभिनव गुप्त, कीर्तिधर, कोहल और सोमेश्वर नामक सङ्गीताचार्योंके ग्रंथ अध्ययन कियेथे।

शारङ्गधर (वैद्य)–यह जातिके भाट प्रसिद्ध कवि चंदवरदाईके वंशज थे। रणथम्भोनरेश हमीर सिंहदेवके दरबारमें इनका आदरथा। इनके दादे रघुनाथ गुरूथे हमीरसिंहदेवके यह वैद्यकशास्त्र पारङ्गत होकर संस्कृतके बड़े भारी विद्वानथे और संस्कृत तथा भाषामें खूब कविता करतेथे। भाषामें हमीररासा तथा हमीरकाव्य इन्हींके रचे हुये हैं। संस्कृतमें शारङ्गधर पद्धति (स०ई०१३६३) और शारङ्गधरसंहिता (वैद्यक) इनके रचे ग्रंथहैं। शारङ्गधर संहिता ऋषिकृत ग्रंथोंसे प्रतिष्ठामें न्यून नहीं है, एतद्देशी वैद्यलघुत्रयीमें उसकी गणना करते हैं।

शार्लमेन महाराजाफ्रांस (Charlemagne, emperor of France) इनको चार्लस दी ग्रेट भी कहते हैं। ज्येष्ठ भ्राताके मरनेपर स० ई० ७७१ की साल फ्रांसके तख्तपर बैठे। स० ई० ७७४ में इन्होंने लोम्बार्डी विजय की और स० ई० ७७८ में स्पेनराज्यके अनेक मुल्कभी जीते तथा सैक्सनलोगोंको परास्त किया। स० ई० ८०० में अनेक पश्चिमी देश जीतकर इन्होंने अपने राज्यमें मिलाये। यह बड़े रणदक्ष, कार्यकुशल, अनुभवशील और न्यायी थे। फरासीसोंके वास्ते एक धर्मशास्त्र इन्होंने बनायाथा। अनेक महिल तथा गिरजे भी बनवाये थे। यह बड़े विद्वान और विज्ञथे, विद्योन्नति इनके समयमें बहुत कुछ हुई, प्रायः सर्वत्र यूरूपपर इनका आतङ्क था। शहिर ऐक्सला शालापलमें अपने बनवाये हुये गिरजेमें दफ़नाये गये। जैसे विक्रमादित्य इस देशमें प्रसिद्ध हैं वैसेही शार्लमेन फ्रांसमें। स०ई० ७४२ में जन्मे, स० ई० ८१४में मरे।

शालिवाहन महाराजा–(शाकाकार) यह विक्रम शकारीके समकालीन बड़े पराक्रमी राजा थे। प्रतिष्ठानपुर में इनकी राजधानी थी। वाल्मीकीय रामायण उ०का०, ८९ सर्गके लेखानुसार राजा इलने मध्यदेशमें प्रयागसे थोड़ीदूर दक्षिण एक बड़ी उत्तम प्रतिष्ठानपुर नामक राजधानी वसाईथी जो अब गंगाके बांये किनारे झूसी नामसे प्रसिद्ध है। किसी कुम्हारके घर इनका जन्म हुआथा। बड़े होकर इन्होंने एक वृहत राज्य स्थापन किया था और अनेक विजय प्राप्त करनेके स्मार्कमें स० ई० से ७८ वर्ष पहिले अपने नामका शाका जारी किया विक्रमादित्य महाराजा उज्जैन इन्हींसे परास्त होकर रणशाई हुयेथे महाराष्ट्री प्राकृत भाषामें इनका रचा सप्तशती नामक एक पद्यमय कोष मिलता है जिसमें आदिरसात्मक और आर्य्याछन्द विशेष हैं। बाणभट्टने स्वरचित हर्षचरितमें उक्त कोषकी इसप्रकार प्रशंसा की है।

श्लोक–अविनाशिन ग्राम्य मकरोच्छात वाहनः।
विशुद्धजातिभिः कोषंरत्नैरिवसुभाषितैः॥

शाहआलम२ (मुगलसम्राट दिल्ली)–आलमगीर द्वितीयके घर स. ई. १७२८में जन्मे और सं.ई.१७५९में वज़ीरके हाथसे अपने बापके मारे जानेकी खबर पाकर विहारसे दिल्ली आकर तख्तपर बैठे। स.ई.१७६४कीसालबक्सरकी लडाईमें परास्त होकर प्रयागको चले गये और स. ई. १७६५ में २४ लाख रु० सालियानापर बंगाल, बिहार तथा उडीसाकी दीवानीका ठेका ईष्ट इन्डिया कम्पनीको देदिया और आप अङ्गरेजोंकी हिफाजतमें स. ई. १७७८ तक प्रयागहीमें रहे। तदुपरांत एकान्तमें जीवन व्यतीत करनेसे थककर दिल्ली आये परंतु रुहेला सर्दार गुलामकादिरने काबू पाकर १० अगस्त स. ई. १७८८ को सानेपर चढ़कर इनकी आंखें निकाल लीं। चक्षुहीन शाहआलमने स. ई. १८०६ तक नाममात्रको राज्य करके जीवनकी दौड़ पूरी की। यह फार्सी तथा उर्दूके सुकवि थे आफताबनामसे पदपूर्ति करते थे, इनका बनाया १ दीवान मिलता है। दिल्ली में कुतुबशाहकी दरगाहके समीप, मोतीमसजिदके निकट, सम्राट बहादुर शाहकी कबरके पास इनकी कबर है।

शाहजहाँ (पञ्चम मुगल सम्राट दिल्ली)– पिता जहांगीरके जीते ही इनका प्रभाव प्रबल होने लगा था। स. ई. १६२८ में जहाँगीरके मरनेपर ४० वर्षकी उम्रमें दक्षिणसे आकर तख्तपर बैठे और आगरेसे दिल्लीको अपनी राजधानी बदली। इनके समयमें कन्धारका सूबा मुग़ल राज्यसे अलग होगया, लेकिन दक्षिणदेशवर्ती अहिमदनगर, बीजापुर और गोलकुंडाकी रियासतोंसे इन्होने अपना आधिपत्य स्वीकार कराया तथा राजस्व वसूल किया और अपने पूर्वजोंका मुल्क बलख तथा बुखारा उज़बक लोगोंसे जीत लिया। इन्होंने नौकरों चाकरोंको बड़ी २ जागीरें दी थीं और राजपूतोंकी कई एक नई रियासतें स्थापन की थीं जिनमेंसे कोटा और रतलाम अबतक मौजूद हैं। यह बडे दातारभी थे, करोडों रुपयेके दान पुण्यका पता इनकी तवारीखसे लगता है। नई दिल्लीको "शाहजहानाबाद" नामसे इन्होंने बसाया था और उसमें एक बड़ाभारी किला, जुम्मामसजिद, शहिरपनाह और बीचमें पानीकी नहिर बनवाई थी। किलेके भीतर दीवानखास, दीवानआम, मोतीमसजिद और अतिसुंदर भवन बनवाये थे। आगरेमें अपनी प्यारी बेगम ताजबीबीके लिये सङ्गमरमरका रोजा बनवाया था जिसकी गणना पृथ्वीके नवीन सप्त आश्चर्योंमें है। आगरेमें मोतीमसजिद तथा जामा मसजिदभी इन्होने बनवाई थी। ७ करोड १८ लाख रु. के खर्चसे सोन, चांदी और जवाहिरातका तख्त ताऊसभी इन्हीका बनवाया हुआ था, जिसको सम्राट मुहम्मदशाहके वक्तमें नादिरशाह ईरानको लेगया। इनके समयमें आनेवाले फिरङ्गी यात्रियोंने इस देशको सुनहरीहिंदोस्तान लिखाहै, उनको यहां सोनेकी नदियां नजर आई थीं और मुगल दर्बार तथा दर्बारी लोग जवाहिरातसे लदे हुये तारोंकी समान चम-

कते दीखे थे। सब चीज़ोंकी तरह सोनाभी इनके वक्तमें सस्ता होकर १४ रु० तोले बिकताथा। इनके ४ प्यारे बेटे और ४ बेटियेंथीं, प्रत्येक बेटेको इन्होंने इतना बढ़ाया था कि, वह करोंडों रुपयेंकी आमदनीके सूबोंके मालिक और लाखों फौजके धनी होगये थे और इनके काबूमें नरहकर आपसमें द्वेष रखने लगे थे। ७० वर्षकी उम्रमें जब यह बीमार पडे तो इनके बेटोंने तख्तके लिये झगड़ा ठाना और औरङ्गजेब (आलमगीर) अपने सब भाईयोंको ठिकाने लगाकर तथा इनको आगरेके किलेमें कैद करके तख्तपर बैठ गया। कैदके ज़मानेमें यह लड़के पढ़ाते, केवल मांस-रोटी खाते और गरम पानी पीनेको पाते थे। ९ वर्ष कैद झेलकर स. ई. १६५८ में यह मरे और ताजगंजके रोजेमें अपनी बेगमके पासही दफन हुये। इनके दरबारके कवीश्वर सुंदरमहाकविराय ने सुन्दरशृङ्गार " में लिखा है कि-

> तीन पहर लौं रविचलै, जाके देखन मांहि।
> जीत लई धरती इती, शाहजहां नर नाहि ॥

शाहमदार-- यह प्रसिद्ध मुसलमान फकीर, जिसका असली नाम बादिउद्दीन था, शेखमुहम्मद तैफूरीबिस्तामीका मुरीद था। इसके मतपर चलनेवाले फकीर, जो मदारी कहलाते हैं आजकलभी इस देशमें बहुत हैं। मदारिये फकीर एक झंडी हाथमें रखतेहैं जिसको मदारका झंडा कहतेहैं और बहुतसे मदारी फकीर रीछ बंदरोंका तमाशाभी करते फिरतेहैं। मुसल्मान तथा हिन्दुओंकी नीचकौमें मदारके झंडेको पूजती हैं। शाहमदार २० दिसंबर स. ई. १४३४ को १२४ वर्षके होकर मरे और कन्नौजके समीप मकनपुरमें दफनायेगये जहां सालमें एकदफे इनकी कबरपर मेला अबतक होता है।

शिवकुमार शास्त्री, पं० महामहोपाध्याय- काशीसे दो कोस उत्तर उन्दीग्राममें घृतकौशिकगोत्री पं० रामसेवक मिश्र सर्जूपारी ब्राह्मणके घर वि. सं. १९०४ की साल फा. कृ. ११ को आपका जन्म हुआ। आपके पूर्वजोंका मूलक ग्राम सर्जूपारधर्मपुरा था। अक्षरारंभ होनेके पीछे कई वर्षतक अपनेघर पर ज्योतिष पढ़ा। १४ वर्षकी उम्रमें आप अपने चचाके पास गये जो बेतियाराजधानीमें आजीविकावश रहते थे। वहां आपने पं. वाणीदत्त चौबेसे लघुकौमुदी पढ़ना आरंभ किया। बेतियासे उसीसाल आप काशीमें चले आये और वहांके प्रधान विद्वान पंडितोंसे परिश्रम सहित व्याकरण, काव्य अलङ्कार तथा न्यायादिषट्दर्शनकी शिक्षा पाई। और गोविन्द पुरामें मकान बनवाकर वहीं बस रहे। वेद वेदाङ्ग धर्म शास्त्र तथा पुराण इत्यादि सैकडों ग्रंथ आप विचारसहित बरबर देखते रहे तथा अबभी अवकाश पानेपर देखते रहते हैं। आपके विद्यागुरुओंमेंसे पं० दुर्गादत्त

पं० कालीप्रसाद शिरोमणि पं० बालशास्त्री तथा स्वा० विशुद्धानन्दजी मुख्य थे। गवर्नमेंटने इससमयके महाविद्वानोंमें आपकी गणना की है, जुबिलीकी साल अपारविद्याके पुरस्कारमें आपको पं० महामहोपाध्याकी उपाधि मिली है जिसके प्रभावसे लार्ड साहबके दरबारमें कुर्सी मिलती है । आप संस्कृत विद्याके समुद्र होकर षट्दर्शनके अद्वतीय पंडित हैं और वेदान्तके गूढ़ रहस्योंका ज्ञाता तो इससमय आपकी समान भूमंडलभरमें कोई दूसरा नहीं हैं । काशीके वर्तमान पंडितोंमें आप मुख्य समझे जाते हैं । संस्कृतकालिज बनारसमें प्रोफेसर का पद आपको प्राप्त था परंतु स्वल्प वेतन होनेके कारण आपने इस्तेफा दे दिया । आप शान्तिकी मूर्ति होकर सर्वथा गर्वरहित हैं, सनातन धर्मका समर्थन करते हैं और शिष्योंको पढाने तथा पूजापाठ करनेमें बहुधा समय बिताते हैं । आजकल दर्शन विषयमें आप एक ग्रंथ रच रहे हैं । आपका प्रेम किसी वस्तुपर नहीं है । यद्यपि आप प्रगट नहीं कहते हैं परंतु आपका दर्शन करनेपर सहजहीमें जांच हो जाती है कि, संसार आपकी दृष्टीमें तुच्छ है और उससे आपका चित्त उदास है । हिन्दोस्थान भरकी शिक्षित मंडलीमें आपका नाम विदित है, मिलनेवालेके चित्तमें आपकी ओरसे पूज्यबुद्धि उत्पन्न होती है । यदि किसी स्थानके लोग विधर्मियोंके आक्रमणसे निराश होकर आपको बुलाते हैं तो धर्मकार्य समझ शास्त्रार्थ अथवा सनातन धर्मका मंडन करनेके लिये आप तुरंत पधारते हैं । महाराजा दरभंगा तथा राजा साहब हथौड़ा (लखनऊ) काशीके इस सदाचारी महाविद्वानको आर्थिक सहायता पहुंचाकर वास्तवमें अपना धन सुफल कररहे हैं । भीतर बाहर एकसा होकर चित्त आपका ईर्षा द्वेष रहित है और आपकी स्मरणशक्ति अलौकिक होकर विचार आपके अत्युत्तश्रेणीके ब्रह्मज्ञानियोंकेसे हैं जो ओतप्रोत आस्तिक भावसे परिपूर्ण हैं। सन ई० १९०४ में आपके एक पुत्र तथा एक पौत्र है ।

शिशुपाल(चंदेरीका राजा)– जब महाराज युधिष्ठर भारतवर्षका राज्य करतथे तो उससमय चेनदेश (बुंदेलखण्ड) में राजा शिशुपालका राज्य था । इसकी राजधानी चंदेरीमें थी । आजकल चंदेरी नगरी ललित पुरसे १८ मील पश्चिमकी ओर स्थित है । शिशुपालकी राजधानी चंदेरी आधुनिक नगरीसे प्रायः ७ मील उत्तर पश्चिमकी ओर स्थित थी उसे अब बूढी चंदेरी कहते हैं और टूटेफूटे मन्दिर उसकी प्राचीनताकी साक्षी देते हैं । शिशुपाल राजा दमघोषका बेटा था । श्रीकृष्णमहाराज इसके फुफेरे भाई थे लेकिन आपसमें बिगाड़ था, क्योंकि श्रीकृष्णजी इसकी मंगेतर रुक्मिणिको विवाहके दिन बलपूर्वक ले भागेथे । महाभारतके युद्धके पीछे जब महाराज युधिष्ठिरने अश्वमेध यज्ञ किया तो श्रीकृष्णजी तथा

शिशुपाल दोनों उसमें आये थे। श्रीकृष्णजीने शत्रुका नष्ट करना उचितसमझ वहीं इसको वध करडाला।

शिवप्रसाद (राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द)– इनके पूर्वजोंने स. ई. की ११ वीं शताब्दीमें जैनमत ग्रहणकर लिया था और जब अलाउद्दीन खिलजीने रणथम्भोरको लूटाथा तो रणथम्भोरसे आहिमदाबाद (सिन्ध) में जाबसे थे। पश्चात् चम्पानेरमें जा रहे और वहांसे खम्भातमें जा बसे। खम्भातसे नादिरशाहकी चढ़ाईके वक्त मुर्शिदाबाद चले आये और राजा शिवप्रसादने मुर्शिदाबादको छोड बनारसमें मकान बनालिया। बाबू गोपीचंद इनके पिताथे, रायडालचंद इनके पितामह थे और इनके धनाढ्य ननिहालियोंको जो मकसूदाबाद (मुर्शिदाबाद) में रहते थे मुगलसम्राट मुहम्मदशाहने जगतसेठका खिताब दिया था (देखो जगतसेठ)। पिता इनको १२ वर्षका छोड मरेथे। बनारसकालिजमें पढ़कर यह १७ वर्षकी उम्रमें एजेन्ट गवर्नरजनरल अजमेरके दफ्तरमें महाराज भरतपुरकी तरफसे वकीलके पदपर नियत हुये। पश्चात् सिक्खोंके युद्धके अवसरपर मीरमुन्शी फौजका पद इनको प्राप्त हुआ पर स. ई. १८५२ में माताके अधिक वृद्ध होनेके कारण इस्तेफा देकर बनारस चले आये और बनारस एजेन्सीके मीरमुन्शीकी जगह पाली। पश्चात् स्कूलोंके असिस्टेन्ट इन्स्पेक्टरका ओहदा इनको मिला और थोडेही समय पीछे बनारस डिवीजनके इन्स्पेक्टर आफ स्कूलसके पदपर तरक्की पागये। ३० वर्ष गवर्नमेन्टकी चाकरी बडी प्रशंसाके साथ करके ५ हजार रुपये वार्षिककी पेन्शन पाई। ब्रटिशगवर्नमेन्टने कार्य दक्षता तथा राज्य भक्तिपर प्रसन्न होकर सितारे हिन्द तथा राजाका खिताब इनको दियाथा। देशियोंके सम्बंधमें यदि किसी बातका विचार करना होताथा, तो गवर्नमेन्ट अवश्यही इनसे रायतलब करती थी। इन्होंने निजके तौरपर अपनी विद्या बहुतकुछ बढ़ाई थी और हिंदोस्थानके इतिहाससे बहुतकुछ जानकारी रखते थे। इनका रचा इतिहास तिमिरनाशक पढने योग्य है अनेक और पुस्तकेंभी स्कूलोंके हितार्थ रचीं थीं। स. ई. १८९४ में परमधामको सिधारे। आपके पुत्रपौत्र बनारसमें रईस हैं।

शिवराज–देखो सेवाजी।

शिवाजी मरहटा–देखो सेवाजी।

शिवाजी द्वितीय–देखो साहू।

शुकदेवजी–देखो शुखदेवजी।

शुक्राचार्य–यह भृगुऋषिके पुत्र महा यशस्वी ब्रह्मर्षि होकर दैत्योंके पुरोहितथे और पाताल (अमेरिका) के राजा बलिके दरबारमें पुरोहित तथा मंत्रीके पदको प्राप्तथे। यह बड़े नीतिज्ञथे, वामनजीको पृथ्वीका दान देते समय इन्होंने राजाबलिको सचेत किया था जिसके कारण वामनजीने इनकी एक आंख फोड़ दीथी। कांणेको अबतक हंसीके तौरपर शुक्राचार्य कहते हैं। इनकी कन्या देवयानी चंद्रवंशी राजा ययातिको विवाहीथी। देवयानीके पुत्र यदुके वंशमें अनेक पीढ़ी पीछे श्रीकृष्णमहाराज हुये। "शुक्रनीति" नामक ग्रंथमें इन्हींका कहा हुआ उपदेश है। भृगुऋषिकी सन्तान होनेके कारण यह तथा इनके वंशज भार्गव कहलाये।

शेरशाहसूर–इसका असली नाम फरीद था और इसका बाप हसनसूर जातिका अफगान पेशावरके निकट "रोह" नामक ग्रामका रहनेवाला था परंतु बादको हिसारमें आबसाया। हसनसूरको जमालखाँ गवर्नर जौनपुरने सहश्राम और टाँडा जागीरमें देकर ५०० सवार अश्वार रखनेका हुक्म दियाथा। फरीदने बड़े होकर मुहम्मद लोहानी बादशाह बिहारके यहां नौकरी की तथा एक शेर मारकर शेरखाँ खिताब पाया। पश्चात् सुलतान बिहारने शेरखाँको अपना वजीर बना लिया। सूबेदार बंगालको लड़ाईमें परास्तकरके शेरखाँ बहुतसे माल असबा·